इस्लाही ख़ुतबात

3

ख़िताब

जस्टिस मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी

इस्लाही खुतबात

(3)

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती
मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

अनुवादक

मु० इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा०) लिमि०
422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6
फ़ोन आफ़िस 3289786,3289159, आवास 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब — इस्लाही ख़ुतबात जिल्द (3)

ख़िताब — मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी

अनुवादक — मुहम्मद इमरान क़ासमी

संयोजक — मुहम्मद नासिर ख़ान

तायदाद — 1100

प्रकाशन वर्ष — जुलाई 2001

कम्पोज़िंग — इमरान कम्प्यूटर्स
मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा०) लिमि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

मुख़्तसर फ़ेहरिस्त

तफ़सीली फ़ेहरिस्त

(18) कुरआने करीम की दौलत की क़द्र व अज़्मत

(19) दिल की बीमारियां और रूहानी तबीब की ज़रूरत

(20) दुनिया से दिल न लगाओ

(21) क्या माल व दौलत का नाम दुनिया है?

(22) झूठ और उसकी राइज सूरतें

(25) समाज का सुधार कैसे हो?

(26) बड़ों की इताअत और अदब के तकाज़े

(27) तिजारत दीन भी दुनिया भी

(28) निकाह के ख़ुतबे की अहमियत

इस्लाम
और नई आर्थिक समस्याएं

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

आज का मौज़ू

जनाबे सदर और मुअ़ज़्ज़ज़ ख़्वातीन व हज़रात! अस्सलामु अलैकुम व रह्मतुल्लाहि व बरकातुहू, आजके इस जल्से का मौज़ू इस्लाम और नई आर्थिक समस्याएं मुक़र्रर किया गया है और इस पर गुफ़्तगू के लिये मुझ नाकारा से फ़रमाइश की गयी है, कि मैं इस मौज़ू की बुनियादी शक्ल आप हज़रात की ख़िदमत में पेश करूं।

यह मौज़ू हक़ीक़त में बड़ा लम्बा और तफ़्सील तलब मौज़ू है जिस के लिये एक घन्टे की वुस्अ़त ना काफ़ी है बल्कि यहां "ना काफ़ी" का लफ़्ज़ भी ना काफ़ी मालूम हो रहा है, इसलिये तम्हीद को छोड़ करके बराहे रास्त असल मौज़ू की तरफ़ आना चाहता हूं ताकि मुख़्तसर वक़्त में अपनी बिसात के मुताबिक़ इस मौज़ू की चन्द शक्ल और सूरतें आप हज़रात की ख़िदमत में अ़र्ज़ कर दूं, वर्ना वाक़िआ़ यह है कि यह मौज़ू न सिर्फ़ यह कि एक घन्टे का मौज़ू नहीं है बल्कि एक जल्से का मौज़ू भी नहीं है, इस पर बड़ी मोटी मोटी किताबें लिखी गयी हैं, और लिखी जा रही हैं, और एक मुख़्तसर से जल्से में इसका हक़ अदा नहीं किया जा सकता।

नई आर्थिक समस्याएं इतनी ज़्यादा और इतनी अलग अलग तरह की हैं कि अगर उनमें से एक को चुन कर के उस पर बात की जाये, और दूसरे मसाइल को छोड़ दिया जाये तो यह भी एक मुश्किल आज़माइश है, इसलिये मैं चाहता हूं कि बजाये इसके कि जुज़्वी आर्थिक समस्याओं पर गुफ़्तगू की जाये, मैं इस्लाम की आर्थिक और मआशी तालीमात का बुनियादी और उसूली ख़ाका आप हज़रात की ख़िदमत में पेश करना चाहता हूं, ताकि कम से कम इस्लामी मईशत (ज़िन्दगी और रोज़ी) के बुनियादी तसुव्वरात ज़ेहन नशीन हो जायें, क्यों कि जितनी जुज़्वी आर्थिक समस्याएं हैं जिनकी तरफ़ मुझ से पहले डाक्टर अख़्तर सईद साहिब ने इशारा फ़रमाया है, वे सारी की सारी आर्थिक समस्याएं हक़ीक़त में बुनियादी तसव्वुरात पर आधारित होंगी और उनका जो हल भी तलाश किया जायेगा, वह उन्हीं बुनियादी तसव्वुरात के ढांचे में तलाश किया जायेगा।

इसलिये सब से पहली और बुनियादी ज़रूरत यह है कि हमारे और आपके ज़ेहन में इस्लामी मईशत का तसव्वुर वाज़ेह हो और यह बात मालूम हो कि इस्लामी मईशत किस चीज़ का नाम है? इसकी बुनियादी ख़ुसूसियात क्या हैं? वह किस तरह दूसरी मईशतों से मुम्ताज़ है? जब तक यह बात वाज़ेह न हो उस वक़्त तक आर्थिक समस्याओं पर गुफ़्तगू या बहस या उनका कोई हल मन्तिक़ी तौर पर दुरुस्त नहीं होगा, इसलिये मैं इस वक़्त मुख़्तसर तौर पर इस्लामी मईशत के बुनियादी तसव्वुरात और आजकी दुनिया में जारी मईशत के निज़ाम के साथ इसका तक़ाबुल और मुवाज़ना आप हज़रात की ख़िदमत में पेश करना चाहता हूं, और अल्लाह तआला से दुआ करता हूं कि अल्लाह तआला मेरी मदद फ़रमायें और इस मुख़्तसर वक़्त में इस अहम मौज़ू को सही तौर पर बयान करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमायें, आमीन।

इस्लाम एक निज़ामे ज़िन्दगी है

सब से पहली बात जो इस्लामी मईशत के हवाले से याद रखनी ज़रूरी है वह यह है कि इस्लाम हक़ीक़त में उन ठेठ मायनों में एक

"मआशी निज़ाम" नहीं जिन मायनों में आज कल "मआशी निज़ाम" का लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है, और जो उसके मायने समझे जाते हैं, बल्कि इस्लाम एक निज़ामे ज़िन्दगी है जिसका एक अहम शोबा मईशत और अर्थशात्र भी है, लेकिन पूरे इस्लाम को एक मआशी निज़ाम में परिचित कराना या इस्लाम को एक मआशी निज़ाम समझना दुरुस्त नहीं, जैसे कैपिटलिज़्म है या सोशलिज़्म है, इस लिये जब हम इस्लाम की मईशत का नाम लेते हैं, या इस्लामी मईशत के तसव्वुरात और उस की बुनियादों की बातें करते हैं तो हमें यह उम्मीद नहीं रखनी चाहिये कि कुरआने करीम में और सुन्नते रसूलुल्लाह में मईशत के इसी तरह के नज़रियात होंगे, जो आदम स्मिथ और मार्शल और दूसरे माहिरीने मआशियात की किताबों में मौजूद हैं, क्योंकि इस्लाम अपनी ज़ात और असल में मआशी निज़ाम नहीं, बल्कि वह एक निज़ामे ज़िन्दगी है जिस का एक छोटा सा शोबा मईशत भी है, इस पर इस्लाम ने अहमियत ज़रूर दी लेकिन इसको ज़िन्दगी का मक़सद क़रार नहीं दिया, इसलिये मैं जब आगे आप हज़रात की ख़िदमत में मईशत की बात करूंगा तो यह बात ज़ेहन नशीन रहनी चाहिये कि कुरआन और सुन्नत में अगर कोई शख़्स इस तरह के मआशी नज़रियात, इन इस्तिलाहों और इन तसव्वुरात के तहत तलाश करेगा, जिन तसव्वुरात और इस्तिलाहात के साथ मईशत की आम किताबों में मिलते हैं तो इस तरह के तसव्वुरात इनमें नहीं मिलेंगे, लेकिन इस्लाम के अन्दर वे बुनियादी तसव्वुरात इन्सान को मिलेंगे जिन पर बुनियाद रख कर एक मईशत की तामीर की जा सकती है, इसलिये मैं अपनी ज़ाती गुफ़्तगू और तहरीरों में भी "इस्लाम का मआशी निज़ाम" के बजाये, "इस्लाम की मआशी तालीमात" का लफ़्ज़ इस्तेमाल करना ज़्यादा पसन्द करता हूं, इस्लाम की इन मआशी तालीमात की रोशनी में मईशत की क्या शक्ल उभरती है? और क्या ढांचा सामने आता है? यह सवाल एक मईशत के तालिब इल्म के लिये बड़ी अहमियत रखता है।

"मअ़ीशत" ज़िन्दगी का बुनियादी मस्अला नहीं

दूसरी बात यह है कि मअ़ीशत बेशक इस्लामी तालीमात का एक बहुत अहम शोबा है, और मआशी तालीमात के फैलाव का अन्दाज़ा आप इस बात से कर सकते हैं कि अगर इस्लामी फ़िक़्ह की किसी किताब को चार हिस्सों में तक़्सीम किया जाये तो उसके दो हिस्से मअ़ीशत से मुताल्लिक़ होंगे, आपने फ़िक़्ह की मश्हूर किताब "हिदाया" का नाम ज़रूर सुना होगा, उसकी चार जिल्दें हैं जिसमें से आख़री दो जिल्दें पुरी की पूरी मअ़ीशत की तालीमात पर मुश्तमिल हैं। इस से आप इस्लाम की मआशी तालीमात के फैलाव का अन्दाज़ा कर सकते हैं, लेकिन यह बात हर वक़्त ज़ेहन में रहनी चाहिये कि दूसरे मआशी निज़ामों की तरह इस्लाम में मअ़ीशत इन्सान की ज़िन्दगी का बुनियादी मस्अला नहीं है, जितनी सैकूलर मअ़ीशतें हैं, उनमें मअ़ीशत को इन्सान की ज़िन्दगी का सब से बड़ा बुनियादी मस्अला क़रार दिया गया है, और इस बुनियाद पर तमाम निज़ाम की तामीर की गयी है, लेकिन इस्लाम में मअ़ीशत अहमियत ज़रूर रखती है लेकिन वह इन्सान की ज़िन्दगी का बुनियादी मस्अला नहीं है।

असल मन्ज़िल आख़िरत है

इस्लाम की नज़र में बुनियादी मस्अला हक़ीक़त में यह है कि यह दुनिया जिसके अन्दर इन्सान आया है, यह उसकी आख़री मन्ज़िल और आख़री और असली मक़्सद नहीं है, बल्कि यह आख़री मन्ज़िल तक पहुंचाने के लिये एक मर्हला है और एक वक़्ती दौर है इस वक़्ती दौर को भी यक़ीनन अच्छी हालत में गुज़ारना चाहिये लेकिन यह समझना कि मेरी सारी कोशिशें, सारी ताक़तें और सारी जद्दोजिहद का मक़्सद यह दुनियावी ज़िन्दगी की मअ़ीशत हो जाये, यह बात इस्लाम के बुनियादी मिज़ाज से मेल खाने वाली नहीं।

इस्लाम ने एक तरफ़ दुनिया को इस दर्जे अहमियत दी कि दुनियावी मुनाफ़ों को क़ुरआन करीम में "ख़ैर" और अल्लाह का

बुनियादी मिज़ाज से मेल खाने वाली नहीं।

इस्लाम ने एक तरफ़ दुनिया को इस दर्जे अहमियत दी कि दुनियावी मुनाफ़ों को कुरआन करीम में "ख़ैर" और अल्लाह का "फ़ज़्ल" कहा गया है, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"طلب كسب الحلال فريضة بعد الفريضة" (كنز العمال)

यानी मआ़शत को हलाल तरीक़े से हासिल करना यह इन्सान के फ़राइज़ के बाद दूसरे दर्जे का अहम फ़रीज़ा है, लेकिन साथ साथ यह भी कहा गया कि अपनी तमाम जद्दोजिहद का दायरा इस दुनिया को न बनाना, क्योंकि इस दुनिया के बाद एक दूसरी हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी आख़िरत की शक्ल में आने वाली है, उसकी बेहतरी हक़ीक़त में इन्सान का सब से बुनियादी मस्अला है।

दुनिया की बेहतरीन मिसाल

मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने इस्लम के इस नुक़्ता–ए–नज़र को एक ख़ास मिसाल के ज़रिये वाज़ेह फ़रमाया है, फ़रमाते हैं किः

आब अन्दर ज़ेरे कश्ती पुश्ती अस्त
आब दर कश्ती हलाके कश्ती अस्त

(मिफ़्ताहुल उलूम)

दुनिया की मिसाल पानी जैसी है और इन्सान की मिसाल कश्ती जैसी है, जिस तरह कश्ती बग़ैर पानी के नहीं चल सकती, इसी तरह इन्सान दुनिया और उसके साज़ व सामान के बग़ैर ज़िन्दा नहीं रह सकता, लेकिन पानी कश्ती के लिये उस वक़्त तक फ़ायदे मन्द है जब तक वह कश्ती के चारों तरफ़ और इर्द गिर्द हो, लेकिन अगर यह पानी कश्ती के अन्दर दाख़िल हो जाये तो उस वक़्त वह पानी कश्ती को सहारा देने के बजाये उसे डुबो देगा। इसी तरह दुनिया के ये सारे साज़ व सामान इन्सान के लिये बड़े फ़ायदे मन्द हैं, और उसके बग़ैर इन्सान की ज़िन्दगी नहीं गुज़र सकती, लेकिन यह उस वक़्त तक

फ़ायदे मन्द हैं जब तक ये दिल की कश्ती के चारों तरफ़ और इर्द गिर्द रहें, लेकिन अगर ये साज़ व सामान इन्सान की दिल की कश्ती में सवार हो जायें तो वे फिर इन्सान को डुबो देंगे और हलाक कर देंगे।

इस्लाम का मआ़शत के बारे में यही नुक़्ता–ए–नज़र है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि मआ़शत फ़ुज़ूल चीज़ है, इसलिये कि इस्लाम दुनिया से बिल्कुल बे ताल्लुक़ हो जाने की तालीम नहीं देता, बल्कि मआ़शत बड़ी कार आमद चीज़ है, बशर्तेकि इसको इसकी हदों में इस्तेमाल किया जाये, और उसको अपना बुनियादी मक़सद और आख़री मक़सदे ज़िन्दगी क़रार न दिया जाये।

इन दो बुनियादी नुक्तों की तशरीह के बाद सब से पहले हमें यह जानना होगा कि किसी मआ़शत के बुनियादी मासाइल क्या होते हैं? और उन बुनियादी मआ़शी मसाइल को मौजूदा मआ़शी निज़ामों यानी सरमाया–दाराना निज़ाम और साम्यवाद (communism) ने किस तरह हल किया है? और फिर तीसरे नम्बर पर यह कि इस्लाम ने उनको किस तरह हल किया है?

"मआ़शत" का मफ़्हूम

जहां तक पहले सवाल का ताल्लुक़ है कि किसी मआ़शत के बुनियादी मसाइल क्या होते हैं? मआ़शियात का एक मामूली तालिबे इल्म भी यह बात जानता है कि किसी मआ़शत के बुनियादी मसाइल चार हैं, इन चार मसाइल को समझने से पहले यह बात ज़ेहन में रख लीजिये कि हम जिस चीज़ को इक्नॉमिक्स (Economics) कहते हैं और अ़र्बी में जिसका तर्जुमा "इक़्तिसाद" से किया जाता है, अगर लुग़त में इसके लुग़वी मायने देखे जायें तो "इक्नॉमिक्स" के मायने यह मिलेंगे कि इन्सान अपनी ज़रूरत को किफ़ायत के साथ पूरा कर ले। इक्नॉमिक्स के अन्दर भी किफ़ायत का तसव्वुर मौजूद है, और अ़र्बी में इसका जो तर्जुमा "इक़्तिसाद" से किया जाता है, इसमें भी किफ़ायत का तसव्वुर मौजूद है। इसलिये "इक्नॉमिक्स" का सब से बड़ा मस्अला यह है कि इन्सान की ज़रूरियात बल्कि ख़्वाहिशात बेशुमार हैं, और उन

ज़रूरियात और ख़्वाहिशात को पूरा करने के वसायल कम और महदूद (सीमित) हैं, अगर वसायल भी इतने ही होते जितनी ज़रूरतें और ख़्वाहिशें हैं, तो फिर किसी मआशी इल्म की ज़रूरत न होती, इल्मे मआशियात (Economics) की ज़रूरत इसलिये पेश आयी कि इन्सान की ज़रूरतें और ख़्वाहिशें ज़्यादा हैं, और इसके मुक़ाबले में वसाइल कम हैं तो इस बात की ज़रूरत पेश आई कि किस तरह इन दोनों के दर्मियान तालमेल पैदा किया जाये? जिसके ज़रिये किफ़ायत के साथ अपनी ज़रूरतें और ख़्वाहिशें पूरी हो सकें, और यही हक़ीक़त में मआशियात (Economics) के इल्म का मौज़ू है, और इस नुक़्ता–ए–नज़र से किसी मओशत को जिन मसाइल का सामना करना पड़ता है वे चार बुनियादी मसाइल हैं।

तरजीहात को मुताय्यन करना
(Determination of Priorities)

पहला मस्अला, जिसको मओशत की इस्तिलाह में "तरजीहात का मुताय्यन करना" कहा जाता है, यानी एक इन्सान के पास वसाइल तो थोड़े से हैं और ज़रूरतें और ख़्वाहिशें बहुत ज़्यादा हैं, अब कौन सी ख़्वाहिश को मुक़द्दम करे और कौन सी ख़्वाहिश को मुअख़्ख़र करे, यह मआशियात का सब से पहला मस्अला है। जैसे मेरे पास पचास रुपये हैं, अब उन पचास रुपये से मैं ख़ुराक के लिये बाज़ार से आटा भी ख़रीद सकता हूं, और उन पचास रुपये से कपड़ा भी ख़रीद सकता हूं, और किसी होटल में बैठ कर अच्छे खाने में भी ख़र्च कर सकता हूं, और उन पचास रुपये से कोई फ़िल्म भी देख सकता हूं, अब ये चार पांच ज़रूरतें मेरे सामने हैं, अब सवाल यह है कि इन चार पांच इख़्तियारात में से किस को तरजीह (वरीयता) दूं? और वे पचास रुपये किस तरह इस्तेमाल करूं? इस मस्अले का नाम "तरजीहात को मुताय्यन करना" है।

यह मस्अला जिस तरह एक इन्सान को पेश आता है, इसी तरह पूरे मुल्क, पूरी रियासत और पूरी मओशत को भी पेश आता है, जैसे

हमारे मुल्क के कुछ क़ुदरती वसाइल हैं, कुछ इन्सानी वसाइल हैं, कुछ मादनी (खान के) वसाइल हैं, कुछ नक़दी वसाइल हैं, ये सारे वसाइल महदूद (सीमित) हैं, और हमारी ज़रूरियात और ख़्वाहिशात बेशुमार हैं, अब जो वसाइल हमारे पास मौजूद हैं, उनके ज़रिये हम खेत में गेहूं भी उगा सकते हैं, चावल भी उगा सकते हैं और तम्बाकू भी उगा सकते हैं और यह भी हो सकता है कि ये सारे वसाइल अैयाशी पर ख़र्च कर दें, ये मुख़्तलिफ़ इख़्तियारात (Options) हमारे सामने मौजूद हैं तो किसी मआ़शत का सब से पहला मस्अला यह होता है कि तरजीहात को मुताय्यन किस तरह करें? और किस काम को फ़ौक़ियत दी जाये?

दूसरा मस्अला, जिसे हम मआशियात की इस्तिलाह में "वसाइल की तख़्सीस" (Allocation of Resources) कहा जाता है, यानी जो वासाइल हमारे पास मौजूद हैं, उनको किस काम में किस मिक़्दार में लगाया जाये? जैसे हमारे पास ज़मीनें भी हैं, और हमारे पास कारख़ाने भी हैं, हमारे पास इन्सानी वसाइल भी हैं, अब सवाल यह है कि कितनी ज़ीमन पर गेहूं उगायें? और कितनी ज़ीमन पर रूई उगायें? कितनी ज़मीन पर चावल उगायें? इसको मआ़शत की इस्तिलाह में "वसाइल की तख़्सीस" काह जाता है, कि कौन से वसीले को किस काम के लिये और किस मिक़्दार (मात्रा) में मख़्सूस किया जाये?

आमदनी की तक़्सीम

तीसरा मस्अला यह है कि जब पैदावार" (Production) शुरू हो तो उस पैदावार को किस तरह मुआ़शरे और सोसाईटी में तक़्सीम किया जाये? उसको मआ़शत की इस्तिलाह में "आमदनी की तक़्सीम" (Distribution of Income) कहा जाता है।

तरक़्क़ी

चौथा मस्अला जिसको मआ़शियात की इस्तिलाह में "तरक़्क़ी" (Development) कहा जाता है, वह यह कि हमारी जो मआ़शी सरगर्मीयां हैं, उनको किस तरह तरक़्क़ी दी जाये? ताकि जो पैदावार

हासिल हो रही है, वह मेयार के एतिबार से और ज़्यादा अच्छी हो जाये, और मिक्दार (मात्रा) के लिहाज़ से ज़्यादा हो जाये? और उसमें तरक़्क़ी हो, और मसनूआत (उत्पाद) वजूद में आयें, ताकि और ज़्यादा असबाबे मओशत लोगों के सामने आयें।

ये चार मओशत के असबाब होते हैं, जिनका हर मओशत को सामना करना पड़ता है, इन चार मसाइल को मुताय्यन करने के बाद एक नज़र इस पर डालनी होगी कि मौजूदा ज़माने की मओशत के निज़ामों ने इन चार मसाइल को किस तरह हल किया है? फिर यह बात समझ में आयेगी कि इस्लाम इन मसाइल को किस तरह हल करता है, क्योंकि अ़र्बी का यह मिसरा (शेर का आधा हिस्सा) आपने सुना होगा कि:

"وبضدها تتبين الاشياء"

जब तक किसी चीज़ की ज़िद सामने न आये, उस वक़्त तक किसी चीज़ की हक़ीक़ी ख़ूबियां सामने नहीं आतीं, अगर रात का अन्धेरा न हो तो दिन की रोशनी की क़द्र न होती, अगर हब्स और गर्मी न होती तो बारिश का रह्मत होना मालूम न होता, इसलिये मुख़्तसर तौर पर पहले यह जायज़ा लेना होगा कि मौजूदा ज़माने के मआशी निज़ामों ने इन चार मसाइल को किस तरह हल किया है?

सरमाया-दाराना निज़ाम में इनका हल

सब से पहले सरमाया-दाराना निज़ाम (Capitalism) को लिया जाता है, सरमाया-दाराना निज़ाम ने इन चार मसाइल को हल करने के लिये जो फ़ल्सफ़ा पेश किया, वह यह है कि इन चार मसाइल को हल करने का सिर्फ़ एक ही रास्ता है, एक ही जादू की छड़ी है, वह यह है कि हर इन्सान को ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ दो, और फिर जब हर शख़्स अपना मुनाफ़ा कमाने की फ़िक्र करेगा, और आज़ाद जद्दोजिहद करेगा तो उस वक़्त ये चारों मसाइल ख़ुद बख़ुद (Auto-matically) हल होते चले जायेंगे, अब सवाल यह है कि ये चारों मसाइल ख़ुद बख़ुद किस तरह हल होंगे?

इसका जवाब यह है कि हक़ीक़त में इस कायनात में कुदरती क़वानीन काम कर रहे हैं, जिनको रसद और तलब (Supply and Demand) के क़वानीन कहा जाता है, माआशियात के तालिब इल्म के अलावा हर आम आदमी भी इन क़वानीन के बारे में इतना जानता है कि जिस चीज़ की तलब उसकी रसद के मुक़ाबले में ज़्यादा होती है तो उसकी क़ीमत भी बढ़ जाती है, और अगर तलब रसद के मुक़ाबले में कम हो जाये तो उसकी क़ीमत घट जाती है, जैसे फ़र्ज़ कीजिये कि बाज़ार में आम मौजूद हैं, और आम के ख़रीदार और शौक़ीन ज़्यादा हैं, उसके मुक़ाबले में उसकी सप्लाई कम है, इसका नतीजा यह होगा कि बाज़ार में आम की क़ीमत बढ़ जायेगी, लेकिन अगर वे आम ऐसे इलाक़े में पहुंचा दिये जायें जहां लोग आम खाना पसन्द नहीं करते, और उनके अन्दर आम खाने की तलब और रग़बत नहीं है तो इसका नतीजा यह होगा कि आम की क़ीमत घट जायेगी। ख़ुलासा यह है कि तलब के बढ़ने से क़ीमत बढ़ती है, और तलब के घटने से क़ीमत घटती है, यह आम उसूल और क़ानून है, जिसे हर इन्सान जानता है, सरमाया–दाराना (Capitalism) नज़रिया कहता है कि यही क़ानून जो हक़ीक़त में इस बात को मुताय्यन करता है कि क्या चीज़ पैदा की जाये और किस मिक़्दार (मात्रा) में पैदा की जाये, और किस तरह वसाइल की तख़्सीस की जाये, और इन सब चीज़ों को मुताय्यन होना हक़ीक़त में तलब व रसद के क़ानून से होता है, इसलिये कि जब हमने हर शख़्स को ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ दिया, तो अब हर शख़्स अपने मुनाफ़े की ख़ातिर वही चीज़ पैदा करने की कोशिश करेगा, जिसकी मार्केट में तलब ज़्यादा है।

मैं आज अगर एक कारोबार शुरू करना चाहता हूं तो पहले मैं यह मालूम करूंगा कि बाज़ार में किस चीज़ की तलब ज़्यादा है, ताकि जब वह चीज़ मार्केट में लाऊं तो उसको ज़्यादा क़ीमत में फ़रोख़्त करके अपना मुनाफ़ा कमा सकूं।

इसलिये लोग जब अपने मुनाफ़े के मुहर्रिक के तहत काम करेंगे

तो वही चीज़ बाज़ार में लायेंगे जिसकी तलब ज़्यादा होगी, और जब बाज़ार में उस चीज़ की तलब कम हो जायेगी तो लोग उस पैदावार को बाज़ार में और लाने से इसलिये रुक जायेंगे कि अब और लाने की सूरत में उसकी क़ीमत घटेगी, और क़ीमत घटने से उनका नुक़्सान होगा या कम से कम मुनाफ़ा पूरा नहीं कमा सकेंगे, इसलिये कहा जाता है कि तलब व रसद के क़वानीन मार्केट में इस तरह जारी हैं, कि उसके ज़रिये तरजीहात को मुताय्यन करना भी ख़ुद बख़ुद हो जाता है कि क्या चीज़ पैदा की जाये, और कितनी मिक़्दार में पैदा की जाये, और वसाइल की तख़्सीस भी इस बुनियाद पर होती है, कि इन्सान अपनी ज़मीन और अपने कारख़ाने को उस चीज़ के पैदा करने में इस्तेमाल करेंगे, जिसकी तलब मुल्क में ज़्यादा है, ताकि उससे ज़्यादा मुनाफ़ा हासिल कर सकें, इसलिये मुनाफ़े के हासिल करने के मुहर्रिक के ज़रिये इन चारों मसाइल को हल किया जाता है, इसकी बुनियाद रसद और तलब के बुनियादी क़वानीन होते हैं, और इस सिस्टम को प्राइज़ मेकनिज़म (Price Mechanism) कहा जाता है, और इसी प्राइज़ मेकनिज़म के तहत ये सारे वसाइल अन्जाम पाते हैं।

इसी तरह आमदनी की तक़्सीम का निज़ाम है, इसके बारे में सरमाया-दाराना निज़ाम का नज़रिया यह है कि रसद और तलब के क़वानीन ही के तहत आमदनी की तक़्सीम होती है, जैसे एक कारख़ाने के मालिक ने एक कारख़ाना लगाया, और उसमें एक मज़दूर को भी काम पर लगाया, अब सवाल यह है कि कारख़ाने से होने वाली आमदनी का कितना हिस्सा मज़दूर वुसूल करे, और कितना कारख़ाने का मालिक हासिल करे? इसको मुताय्यन करना भी रसद और तलब के क़वानीन के तहत होगा। यानी मज़दूर की तलब जितनी ज़्यादा होगी, उसकी उज्रत भी उतनी ही ज़्यादा होगी, और जितनी उसकी तलब कम होगी उसकी उज्रत भी कम हो जायेगी, तो इसी उसूल पर आमदनी की तक़्सीम होगी।

आख़री मस्अला यानी तरक़्क़ी (Development) का मस्अला भी

इसी बुनियाद पर हल होगा कि जब हर शख़्स ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने की फ़िक्र में है, तो अब वह मुनाफ़े को हासिल करने के लिये नई नई और तरह तरह की ईजादात सामने लायेगा, और ऐसी चीज़ पैदा करेगा जिसके ज़रिये वह ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को अपनी तरफ़ मुतवज्जह कर सके।

इसलिये जब हर शख़्स को मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ दिया जाये तो उसके ज़रिये चारों मसाइल ख़ुद बख़ुद हल हो जाते हैं, इन्ही के ज़रिये तरजीहात की तायीन होती है, इन्ही के ज़रिये वसाइल की तक़्सीम होती है, इन्ही के ज़रिये आमदनी की तक़्सीम होती है और इन्ही के ज़रिये मआशी तरक़्क़ी अ़मल में आती है, यह सरमाया-दाराना नज़रिया है।

इश्तिराकियत (communism) में इनका हल

जब इश्तिराकियत (communism) मैदान में आई तो उसने यह कहा कि जनाब! आपने मईशत के सारे अहम और बुनियादी मसाइल को बाज़ार की अन्धी और बहरी कुव्वतों के हवाले कर दिया है, इसलिये कि रसद और तलब की कुव्वतें अंधी और बहरी कुव्वतें हैं और यह जो आपने कहा कि इन्सान वही चीज़ पैदा करेगा जिसकी मार्केट में तलब है, और उसी वक़्त तक पैदा करेगा जब तक तलब होगी, यह बात नज़रियाती तौर पर तो चाहे दुरुस्त हो लेकिन अ़मली मैदान में जब इन्सान क़दम उठाता है तो उसको इस बात का इल्म बहुत मुद्दत के बाद होता है, कि इस चीज़ की तलब कम हो गयी है या ज़्यादा हो गयी, एक मुद्दत ऐसी आती है कि जिसमें तलब हक़ीक़त में घटी हुई होती है, लेकिन पैदा करने वाला यह समझता है कि तलब बढ़ी हुई है, इसलिये वह पैदावार में इज़ाफ़ा करता चला जाता है, जिसके नतीजे में आख़िर कार बाज़ार में मन्दी का रुख़ पैदा हो जाता है, और फिर बाज़ार में मन्दा होने के मुहलिक नतीजे मईशत को भुगतने पड़ते हैं, इसलिये इन मसाइल को उन अन्धी, बहरी कुव्वतों के हवाले नहीं किया

जा सकता।

सरमाया–दाराना निज़ाम ने एक जादू की छड़ी पेश की थी, और इश्तिराकियत (communism) ने दूसरी जादू की छड़ी पेश कर दी, कि इन चारों मसाइल का एक ही हल है, वह यह कि सारे पैदावार के वसाइल इन्फ़िरादी मिल्कियत में रखने के बजाये इज्तिमाई मिल्कियत में लाये जायें, जिसका तरीक़ा यह है कि पैदावार के सारे वसाइल हुकूमत की तहवील में दे दिये जायें, और फिर हुकूमत उन वसाइल की मन्सूबा बन्दी करेगी कि कितनी ज़मीन पर गेहूं पैदा किया जाये, कितनी ज़ीमन पर चावल पैदा किया जाये, कितनी ज़मीन पर रूई पैदा की जाये, कितने कारख़ानों में कपड़ा बनेगा, और कितने कारख़ानों में जूते बनेंगे, यह सारी प्लानिंग हुकूमत करेगी, और जो इन्सान ज़मीन या कारख़ाने में काम करेंगे उनकी मेह्नत कार की हैसियत से उज्रत मुहैया की जायेगी, और उस उज्रत की मिक्दार भी प्लानिंग के ज़रिये तय की जायेगी, इसलिये तरजीहात को मुताय्यन करने का काम भी हुकूमत करेगी, वसाइल की तख़्सीस भी हुकूमत करेगी, आमदनी की तक़्सीम भी हुकूमत करेगी और तरक्क़ी की मन्सूबा बन्दी भी हुकूमत करेगी।

चूंकि इश्तिराकी मईशत में ये सारे काम हुकूमत और मन्सूबा बन्दी के हवाले किये गये हैं, इसलिये इश्तिराकी मईशत को मन्सूबा बन्द मईशत (Planned Economy) भी कहते हैं, और सरमाया–दाराना मईशत ने चूंकि अपने वसाइल को मार्केट की रसद और तलब की कुव्वतों पर छोड़ दिया है, इसलिये उसको "बाज़ारी मईशत" (Market Economy) और मईशत में दख़ल अन्दाज़ी न होना (Laissez Faire Economy) भी कहते हैं।

ये दो मुख़्तलिफ़ नज़रियात हैं, जो इस वक़्त हमारे सामने हैं, और दुनिया में राइज हैं।

सरमाया–दाराना मईशत के बुनियादी उसूल

सरमाया–दाराना मईशत के बुनियादी उसूल जो उसके फ़ल्सफ़े

से निकलते हैं, उनमें से पहला उसूल "इन्फ़िरादी मिल्कियत" (Private Ownership) है, यानी तमाम वसाइले पैदावार का हर शख़्स इन्फ़िरादी तौर पर मालिक बन सकता है। दूसरा उसूल "हुकूमत की दख़ल अंदाज़ी न होना" (Laissez - Faire Policy of State) है, यानी इन्सान को मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ दिया जाये, हुकूमत की तरफ़ से दख़ल अन्दाज़ी न की जाये, और उस पर कोई पाबन्दी और कोई रोक न लगाई जाये, तीसरा उसूल "ज़ाती मुनाफ़े का मुहर्रिक" है, कि इन्सान के अपने ज़ाती मुनाफ़े को एक मुहर्रिक के तौर पर इस्तेमाल किया जाये, मआशी सरगर्मियों में तेज़ी लाने के लिये इसकी तरग़ीब दी जाये, ये सरमाया-दाराना निज़ाम के बुनियादी उसूल हैं।

इश्तिराकियत के बुनियादी उसूल

इसके उलट इश्तिराकियत (communism) के बुनियादी उसूल ये हैं कि वसाइल की पैदावार की हद तक "इन्फ़िरादी मिल्कियत" की पूरे तौर पर नफ़ी की जाये, यानी वसाइले पैदावार किसी की ज़ाती मिल्कियत नहीं हो सकते, यानी न कोई ज़मीन किसी की ज़ाती मिल्कियत हो सकती है, और न कारख़ाना किसी की ज़ाती मिल्कियत हो सकता है। दूसरा उसूल है "मन्सूबा बन्दी" यानी हर काम प्लानिंग और मन्सूबा बन्दी के तहत किया जाये, ये दो मुख़्तलिफ़ नज़रियात हैं, जो इस वक़्त आपके सामने हैं।

इश्तिराकियत (communism) के नताइज

इस वक़्त दुनिया में इन दोनों निज़ामें के तजुर्बे और नतीजे सामने आ चुके हैं, और इश्तिराकियत (communism) के नतीजे आप हज़रात अपनी आंखों से देख चुके हैं कि चौहत्तर साल के तजुर्बे के बाद पूरे निज़ाम की इमारत ज़मीन पर इस तरह गिरी कि बड़े बड़े सूरमा पिछड़े हुये नज़र आये, हालांकि एक ज़माने में नेशनलाईज़ेशन एक फ़ैशन के तौर पर दुनिया में राइज था, और अगर कोई शख़्स उसके ख़िलाफ़ ज़बान खोलता तो उसको सरमायेदार का एजेन्ट और रुजअ़त पसन्द

कहा जाता था, लेकिन आज ख़ुद रूस का राष्ट्रपति यह कह रहा है कि:

"काश: यह इश्तिराकियत (communism) के नज़रिये का तजुर्बा रूस के बजाये अफ़्रीका के किसी छोटे मुल्क में कर लिया गया होता, ताकि कम से कम हम इसकी तबाहकारियों से बच जाते"

"इश्तिराकियत"(communism) एक ग़ैर फ़ितरी निज़ाम था

बहर हाल! तबई तौर पर यह एक ग़ैर फ़ितरी निज़ाम था, इसलिये कि दुनिया में बेशुमार समाजी मसाइल हैं, सिर्फ़ एक मआशियत ही का मस्अला नहीं है, अब अगर उन मसाइल को मन्सूबा बन्दी के ज़रिये हल करने बैठ जायें तो यक़ीन कीजिये कभी हल नहीं हो सकेंगे। आख़िर यह भी तो एक समाजी मस्अला है कि एक मर्द को एक औरत से शादी करनी है, और शादी के लिये मर्द को मुनासिब बीवी चाहिये और बीवी को मुनासिब शौहर चाहिये, अब आज अगर कोई शख़्स यह कहने लगे कि चूंकि शादी का निज़ाम लोगों की मर्ज़ी पर छोड़ दिया गया है, और उसके नतीजे में बड़ी ख़राबियां पैदा हो रही हैं, तलाक़ें हो रही हैं, घर उजड़ रहे हैं और दोनों के दर्मियान ना चाक़ियां पैदा हो रही हैं, इसलिये इस निज़ाम को चलाने के लिये बेह्तरीन तरीक़ा यह होगा कि इस निज़ाम को हुकूमत के हवाले कर दिया जाये, और प्लानिंग के ज़रिये यह तय किया जाये कि कौन सा मर्द किस औरत के लिये ज़्यादा मुनासिब है, और कौन सी औरत किस मर्द के लिये ज़्यादा मुनासिब है। ज़ाहिर है कि प्लानिंग के ज़रिये अगर कोई शख़्स इस मस्अले को हल करना चाहेगा तो वह एक ग़ैर फ़ितरी और बनावटी निज़ाम होगा, जिस से बेह्तर नतीजों की कोई उम्मीद नहीं हो सकती।

यही सूरते हाल इश्तिराकियत (communism) में पेश आई, इसमें चूंकि ये सारे मसाइल प्लानिंग और मन्सूबा बन्दी के हवाले किये गये, तो अब सवाल यह है कि प्लानिंग कौन करेगा? ज़ाहिर है कि हुकूमत करेगी और हुकूमत क्या चीज़ है? वह चन्द फ़रिश्तों के मज्मूए का नाम नहीं, बल्कि वह भी इन्सानों ही के अन्दर से वजूद में आने वाले

गुरूप का नाम है। इश्तिराकियत (communism) का कहना यह है कि सरमायादार दौलत के बहुत बड़े वसाइल पर क़ब्ज़ा करके मन मानी करता है, लेकिन उसने यह नहीं देखा कि इश्तिराकियत के नतीजे में अगरचे बहुत सारे सरमायेदार तो ख़त्म हो गये, लेकिन एक बहुत बड़ा सरमायेदार वजूद में आ गया, जिसका नाम ब्यौरो करेसी, अफ़सर शाही और नौकर शाही है, और अब सारे वसाइले पैदावार और सारी मआ़शत और ब्यौरो करेसी (अफ़सर शाही) के हाथ में आ गये, इसलिये अब इस बात की क्या गारन्टी है कि वे ना इन्साफ़ी नहीं करेंगे, वे कौन से आसमान से उतरने वाले फ़रिश्ते हैं, या वे कौन सा मासूमियत का पर्वाना अपने साथ लाये हैं? यक़ीनन इस निज़ाम में भी ख़राबियां होंगी और वे ख़राबियां पैदा हुयीं और आप हज़रात ने उसको देख लिया, और यह निज़ाम अपने अन्जाम को पहुंच गया, और आज उसका नाम लेने वाले भी शर्मा शर्मा कर उसका नाम लेते हैं।

सरमाया–दाराना निज़ाम की ख़राबियां

अब इश्तिराकियत (communism) के फ़ेल होने के बाद आज सरमायेदार मग़िरबी मुल्क बड़े ज़ोर व शोर के साथ बग़लें बजा रहे हैं, कि चूंकि अब इश्तिराकियत (communism) फ़ेल हो गई है, इसलिये अब सरमाया–दाराना निज़ाम का सही होना साबित हो गया है, अब इन्सान के लिये सरमाया–दाराना निज़ाम के अ़लावा कोई निज़ाम कार आमद नहीं हो सकता, और अब यह बात बिल्कुल तय हो चुकी है।

ख़ूब समझ लीजिये कि सरमाया–दाराना मआ़शत का जो बुनियादी फ़ल्सफ़ा है वह यह कि आज़ाद बाज़ार का वजूद, और लोगों को मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ना, अगरचे नज़रियाती तौर पर एक मन्क़ूल फ़ल्सफ़ा है, लेकिन जब इस फ़ल्सफ़े पर हद से ज़्यादा अ़मल किया गया तो इस फ़ल्सफ़े ने आगे चल कर ख़ुद अपनी जड़ काट ली। यह बात दुरुस्त है कि जब लोगों को मुनाफ़ा कमाने के लिये आज़ाद छोड़ा जायेगा तो रसद व तलब की क़ुव्वतें सामने आयेंगी और

वे इन मसाइल को हल कर देंगी, लेकिन यह बात ख़ूब समझ लीजिये कि रसद व तलब की ये कुव्वतें उस वक़्त तक कार आमद होती हैं जब तक बाज़ार में मुसाबक़त (दौड़) की फ़िज़ा हो, और अज़ाद मुक़ाबला हो, और इजारा दारी न हो।

जैसे मैं बाज़ार से एक छड़ी ख़रीदना चाहता हूं, और बाज़ार में बहुत से लोग छड़ी वाले मौजूद हैं, जो मुख़्तलिफ़ क़ीमतों पर छड़ी बेच रहे हैं, एक दुकानदार 500 रुपये में बेच रहा है, और दूसरा दुकानदार 450 रुपये की बेच रहा है, अब मुझे इख़्तियार है कि चाहे वह छड़ी 500 रुपये की ख़रीदूं या 450 रुपये की ख़रीदूं, इस सूरत में तो रसद और तलब की कुव्वतें सही तौर पर काम करती हैं, और उनका सही अमल ज़ाहिर होता है, लेकिन अगर बाज़ार में छड़ी बेचने वाला सिर्फ़ एक दुकानदार है, और मेरे पास कोई पसन्द और इन्तिख़ाब नहीं है, अगर मुझे छड़ी ख़रीदनी है तो उसी से ख़रीदनी होगी, तो अब वह मन मानी क़ीमत में छड़ी बेचेगा, और उसके अन्दर मुझे कोई इख़्तियार नहीं होगा, और अब रसद व तलब की कुव्वतें यहां ख़त्म हो गयीं, इसलिये कि अब तो सिर्फ़ एक तरफ़ा क़ीमत का मुतअय्यन करना है, जो उस इजारा दार ने मुक़र्रर कर दिया, और मुझे कोई इख़्तियार नहीं रहा।

इसलिये यह रसद और तलब की कुव्वतें वहां काम करती हैं, जहां आज़ाद मुक़ाबला हो, और अगर इजारा दारी हो तो वहां ये कुव्वतें काम नहीं देतीं।

फिर जब इन्सान को ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के लिये बिल्कुल आज़ाद छोड़ दिया गया कि जो तरीक़ा तुम इख़्तियार करना चाहो, इख़्तियार कर लो, तो उसने ऐसे ऐसे तरीक़े इख़्तियार किये, जिसके ज़रीये बाज़ार में इजारा दारी क़ायम हो गयी, और दूसरी तरफ़ सरमायेदारी निज़ाम में इन्सान का सूद के ज़रिये मुनाफ़ा कमाना भी जायज़, जुए के ज़रिये मुनाफ़ा कमाना भी जायज़, सट्टे के ज़रिये नफ़ा कमाना जायज़, और उन तमाम तरीक़ों से भी नफ़ा कमाना जायज़ है जिनको शरीअत ने हराम क़रार दिया है, जो तरीक़ा चाहे इख़्तियार

करे, इन्सान को इसकी बिल्कुल खुली इजाज़त है, और इसकी खुली छूट की वजह से बहुत सी बार इजारा दारियां क़ायम हो जाती हैं जिस के नतीजे में रसद व तलब की कुव्वतें काम करना छोड़ देती हैं और बेकार होकर रह जाती हैं, जिसकी वजह से सरमाया-दाराना निज़ाम का फ़लसफ़ा अमली तौर पर वजूद में नहीं आता।

मुनाफ़ा कमाने के लिये बिल्कुल आज़ादी देने के नतीजे में दूसरी ख़राबी यह पैदा हुई कि कोई अख़्लाक़ी क़द्र ऐसी बाक़ी नहीं रही जो इस बात का ख़्याल करे कि मुआशरे को कौन सी चीज़ मुफ़ीद होगी, और कौन सी चीज़ नुक़्सान देने वाली होगी, अभी चन्द दिन पहले अमरीकी रिसाले टाइम में, मैंने पढ़ा कि एक मॉडल गर्ल उत्पादों के इश्तिहार पर अपनी तसवीर देने के लिये एक दिन में 25 मिल्यिन डालर वुसूल करती है, अब सवाल यह है कि वह ताजिर और कारख़ानेदार यह 25 मिल्यिन डालर कहां से हासिल करेगा? ज़ाहिर है कि वह ग़रीब अवाम से वुसूल करेगा, इसलिये कि जब वह चीज़ और वह पैदावार बाज़ार में आयेगी तो यह 25 मिल्यिन डालर उसकी लागत, और कोस्ट में शामिल होकर मेरी और आपकी जेब से वुसूल करेंगे।

यह फ़ाईव स्टार होटल जिनमें एक दिन का किराया 2500 रुपये या 3000 रुपये है, एक औसत दर्जे का आदमी इन होटलों की तरफ़ रुख़ करते हुये डरता है, लेकिन वे तमाम फ़ाईव स्टार होटल इन ग़रीब अवाम की आमदनियों से वजूद में आये, आप यह देखें कि उन होटलों में कौन जाकर ठहरता है? या तो सरकारी मुलाज़िमीन और सरकारी अफ़सर हुकूमत के ख़र्चों पर ठहरते हैं, अब ज़ाहिर है कि उनका ख़र्चा हुकूमत अदा करती है, और हुकूमत का मतलब है टैक्स अदा करने वालों का रुपया, या फिर दूसरा तबक़ा उन होटलों में आकर ठहरता है, ये ताजिर, उधोगपति होते हैं, जो अपने तिजारत के सफ़रों के दरमियान उन होटलों में ठहरते हैं, लेकिन वे उन होटलों का ख़र्चा कहाँ से वुसूल होता है? ज़ाहिर है कि वे सरमायेदार अपनी जेब से ख़र्च नहीं करते, बल्कि हक़ीक़त में वे इख़राजात उस चीज़ की लागत

(Cost) में शामिल होंगे, जो चीज़ वह बाज़ार में फ़रोख़्त कर रहा है, और उसकी लागत में शामिल होकर उसकी क़ीमत में इज़ाफ़ा करेंगे, फिर वह क़ीमत अवाम से वुसूल की जायेगी।

इसलिये कोई अख़्लाक़ी क़दर और कोई अख़्लाक़ी पैमाना इस बात का मौजूद नहीं है कि मुनाफ़ा कमाने का कौन सा तरीक़ा दुरुस्त और समाज के लिये मुफ़ीद है, और कौन सा तरीक़ा समाज के लिये मुज़िर (नुक़्सान देने वाला) और तबाह करने वाला है, इसका नतीजा यह है कि बद अख़्लाक़ियां, ना इन्साफ़ियां और मज़ालिम वजूद में आ रहे हैं।

इस्लाम के मआशी अह्काम

अब मैं इस्लाम की मआशी तालीमात की तरफ़ आता हूं, ताकि ऊपर ज़िक्र हुए पस मन्ज़र में इसको अच्छी तरह समझा जा सके, इस्लम के नुक़्ता-ए-नज़र से यह फ़ल्सफ़ा कि मआशी मसाइल का तस्फ़िया प्लानिंग के बजाये मार्केट की कुव्वतों के तहत होना चाहिये, इस बुनियादी फ़ल्सफ़े को इस्लाम तस्लीम करता है, कुरआने करीम कहता है:

" نَحْنُ قَسَمْنَا بَيْنَهُمْ مَعِيْشَتَهُمْ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَرَفَعْنَا بَعْضَهُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجَاتٍ لِّيَتَّخِذَ بَعْضُهُمْ بَعْضًا سُخْرِيًّا (الزخرف:٣٢)

यानी हमने उनके दरमियान उनकी मओ़शत तक़्सीम कर दी है, और एक को दूसरे पर दरजों के एतिबार से फ़ौक़ियत अ़ता की है, और उसके बाद कितना ख़ूबसूरत जुम्ला इरशाद फ़रमाया कि:

" لِّيَتَّخِذَ بَعْضُهُمْ بَعْضًا سُخْرِيًّا "

ताकि उनमें से एक दूसरे से काम ले सके, जिसका मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला ने इस कायनात का निज़ाम बनाया है, और अल्लाह तआ़ला ने इसकी मओ़शत तक़्सीम की है, यानी वसाइल की तक़्सीम, और क़ीमतों को मुतअ़य्यन करना, और दौलत की तक़्सीम के उसूल ये सारे के सारे किसी इन्सानी प्लानिंग की बुनियाद पर वजूद में नहीं आते, बल्कि अल्लाह तआ़ला ने इस बाज़ार और इस दुनिया का

निज़ाम ऐसा बनाया है कि मआशित ख़ुद बख़ुद तक़्सीम हो जाये, यह जो फ़रमाया कि हमने तक़्सीम किया, इसका मतलब यह नहीं है कि अल्लाह तआला ने आकर ख़ुद दौलत तक़्सीम फ़रमा दी कि इतना तुम लेलो, और इतना तुम लेलो, बल्कि इसका मतलब यह है कि हमने फ़ितरत के ऐसे क़वानीन बना दिये हैं जिनकी रोशनी में इन्सानों के दरमियान मआशित की तक़्सीम का अमल ख़ुद बख़ुद हो जाये।

और एक हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आला दर्जे का मआशी उसूल यह बयान फ़रमाया कि:

"دعوا الناس یرزق اللہ بعضهم من بعض" (صحیح مسلم شریف)

यानी लोगों को आज़ाद छोड़ दो, कि अल्लाह तआला उनमें से बाज़ को बाज़ के ज़रिये रिज़्क़ अता फ़रमाते हैं, यानी उन पर बिला वजह पाबन्दियां न लगाओ, बल्कि आज़ाद छोड़ दो, अल्लाह तआला ने यह बड़ा अजीब व ग़रीब निज़ाम बनाया है। जैसे मेरे दिल में इस वक़्त यह ख़्याल आया कि बाज़ार से जाकर "लीची" ख़रीदूं और बाज़ार में जो शख़्स फल बेचने वाला है उसके दिल में यह डाल दिया कि तुम जाकर "लीची" फ़रोख़्त करो, और अब जब मैं बाज़ार में गया तो देखा कि एक शख़्स "लीची" बेच रहा है, उसके पास गया, और उससे भाव ताव करके उससे "लीची" लेली, और उसको पैसे दे दिये, तो यह मतलब है इस हदीस का कि लोगों को आज़ाद छोड़ दो, अल्लाह तआला बाज़ को बाज़ के ज़रिये रिज़्क़ अता फ़रमाते हैं।

बहर हाल यह बुनियादी उसूल कि मार्केट की क़ुव्वतें इन बुनियादी मसाइल को मुताय्यन करती हैं, यह उसूल तो इस्लाम को तस्लीम है, लेकिन सरमाया-दाराना निज़ाम का यह बुनियादी इम्तियाज़ कि मआशित को मार्केट की क़ुव्वतों पर बिल्कुल आज़ाद छोड़ दिया जाये, इसको इस्लाम तस्लीम नहीं करता, बल्कि यह कहता है कि इन्सानों को मुनाफ़ा कमाने के लिये इतना आज़ाद न छोड़ो कि एक की आज़ादी दूसरे की आज़ादी को ख़त्म कर दे, यानी एक को इतना आज़ाद छोड़ा

कि वह इजारा दार बन गया, और बाज़ार में उसकी इजारा दारी क़ायम हो गयी, और उसके नतीजे में दूसरों की आज़ादी ख़त्म हो गयी, इसलिये इस्लाम ने इस आज़ादी पर कुछ पाबन्दियां लागू की हैं, वे पाबन्दियां क्या हैं? उनको मैं तीन हिस्सों में तक़सीम करता हूं, नम्बर एक "शरई और इलाही पाबन्दी" यानी अल्लाह तआला ने यह पाबन्दी लागू कर दी है कि तुम अपना नफ़ा तो कमाओ, लेकिन तुम्हें फ़लां काम नहीं करना है, इसको दीनी पाबन्दी भी कहते हैं। दूसरी क़िस्म है "अख़्लाक़ी पाबन्दी" तीसरी क़िस्म "क़ानूनी पाबन्दी" है। ये तीन क़िस्म की पाबन्दियां हैं जो इन्सान पर शरीअ़त ने लागू की हैं।

(1) दीनी पाबन्दी

पहली क़िस्म की पाबन्दी जो "दीनी पाबन्दी" है यह बहुत अहमियत की हामिल है, जो इस्लाम को दूसरे मआशी नज़रियात से मुम्ताज़ करती है, अगर्चे सरमाया–दाराना निज़ाम अब अपने बुनियादी उसूलों को छोड़ कर इतना नीचे आ गया है कि अब इसमें हुकूमत की कुछ न कुछ दख़ल अन्दाज़ी होती है, लेकिन हुकूमत की यह दख़ल अन्दाज़ी ज़ाती अक़्ल और सैकूलर तसव्वुरात की बुनियाद पर होती है, और इस्लाम जो पाबन्दी आयद करता है, वह "दीनी पाबन्दी" होती है, वे दीनी पाबन्दियां क्या हैं? वे ये हैं कि इस्लाम यह कहता है कि तुम बाज़ार में मुनाफ़ा कमाओ, लेकिन तुम्हारे लिये सूद के ज़रिये आमदनी हासिल करना जायज़ नहीं, अगर ऐसा करोगे तो फिर अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से ऐलाने जंग है, इसी "क़िमार" (जुए) को मना क़रार दे दिया, "क़िमार" के ज़रिये आमदनी हासिल करना जायज़ नहीं, और "एह्तिकार" यानी ज़ख़ीरा करने और स्टाक लगाने को मना क़रार दे दिया "सट्टे" को मना क़रार दिया, वैसे तो शरीअ़त ने यह कह दिया है कि जब दो आदमी अगर कोई मामला करने पर राज़ी हो जायें, तो फिर वह क़ानूनी मामला हो जाता है, लेकिन वे दोनों अगर

किसी ऐसे मामले पर राज़ी हो जायें जो समाज की तबाही का सबब हो, उस मामले की इजाज़त नहीं, जैसे "सूद" के मामले पर दो आदमी रज़ामन्दी से मामला कर लें, तो चूंकि "सूद" के ज़रिये मआशी तौर पर नुक़्सानात पैदा होते हैं, तबाहकारियां पैदा होती हैं, इसलिये शरीअत में इसकी इजाज़त नहीं। अब "सूद" के ज़रिये मआशी तौर पर क्या तबाहकारियां पैदा होती हैं, यह एक मुस्तक़िल मौज़ू है और इस मौज़ू पर बहुत सी किताबें मन्ज़रे आम पर आ चुकी हैं, लेकिन मैं आपके सामने एक सादा सी मिसाल पेश करता हूं जिस से उन तबाहकारियों का जरा सा इशारा हो जायेगा।

सूदी निज़ाम की ख़राबी

सूद के नज़रिये की बुनियाद इस बात पर है कि एक शख़्स की आमदनी यक़ीनी और दूसरे की आमदनी ख़तरे में और ग़ैर यक़ीनी है। जैसे एक शख़्स ने किसी से सूद पर क़र्ज़ लिया, तो अब उसने जिस से क़र्ज़ लिया उसको तो एक मुक़र्ररा रक़म बतौर सूद के ज़रूर अदा करनी है, और जिसने क़र्ज़ लिया है वह उस क़र्ज़ की रक़म से जब कारोबार करेगा तो हो सकता है कि उसको कारोबार में नफ़ा हो, और हो सकता है कि उसको कारोबार में नुक़्सान हो जाये, दोनों बातें हो सकती हैं, और अब जिस सूरत में क़र्ज़ लेने वाला नुक़्सान में रहा, उस सूरत में भी 16 फ़ीसद क़र्ज़ देने वाले बैंक या इदारे को अदा करना उसके ज़िम्मे ज़रूरी और लाज़िम है। इसलिये क़र्ज़ लेने वाला नुक़्सान में रहा, और बाज़ मर्तबा इसके उलट क़र्ज़ देने वाला नुक़्सान में होता है और क़र्ज़ लेने वाला फ़ायदे में रहता है।

जैसे एक शख़्स ने बैंक से सूद पर दस करोड़ रुपया क़र्ज़ लिया और उससे कारोबार शुरू किया, बहुत सी तिजारतें ऐसी होती हैं कि उनमें सौ फ़ीसद भी नफ़ा होता है, फ़र्ज़ करें कि उस शख़्स को दस करोड़ पर पचास फ़ीसद नफ़ा हुआ अब वह बैंक को सिर्फ़ सूद की

मुक़र्ररा शरह जैसे 15 फ़ीसद उस नफ़े में से अदा करेगा और बाक़ी पूरा 35 फ़ीसद ख़ुद उसकी जेब में चला गया, अब यह देखिये कि जो उसने तिजारत की वह पैसा किसका था? वह तो अ़वाम का था, और उसके ज़रिये जो नफ़ा कमाया गया, उसका 35 फ़ीसद नफ़ा सिर्फ़ एक शख़्स की जेब में चला गया, जिसने तिजारत की और सिर्फ़ 15 फ़ीसद बैंक के पास पहुंचा और फिर बैंक ने उसमें से अपना हिस्सा निकालने के बाद बाक़ी थोड़ा सा हिस्सा जैसे दस फ़ीसद तमाम डिपॉज़िटर के दरमियान तक़सीम कर दिया, नतीजा यह निकला कि अ़वाम के पैसे से जो 50 फ़ीसद नफ़ा हुआ था, उसका सिर्फ़ दस फ़ीसद अ़वाम में तक़सीम हुआ और 35 फ़ीसद सिर्फ़ एक आदमी की जेब में चला गया, और अ़वाम वह दस फ़ीसद लेकर बहुत ख़ुश है कि हमने बैंक में सौ रुपये रखवाये थे और अब साल भर के बाद एक सौ दस हो गये, लेकिन उस बेचारे को यह मालूम नहीं कि यह दस रुपये फिर वापस उस सरमायेदार ताजिर के पास चले जाते हैं, इसलिये कि उस ताजिर ने 15 फ़ीसद बैंक को जो सूद की शक्ल में दिया था, वह उसको अपनी प्रोडेक्शन की लागत में शामिल करेगा और लागत में शामिल होकर उसकी क़ीमत का हिस्सा बन जायेगा, और वह क़ीमत फिर अ़वाम से वुसूल करेगा, इसलिये हर एतिबार से वह फ़ायदे में रहा, फिर उसको नुक़्सान का भी ख़तरा नहीं, और अगर मान लें कि उसको नुक़्सान हो भी जाये तो उसकी तलाफ़ी के लिये बीमा कम्पनियां मौजूद हैं वह उन बीमा कम्पनियों से जिनमें उन अ़वाम के पैसे रखे हैं जो अपनी गाड़ी उस वक़्त तक सड़क पर नहीं ला सकते जब तक वे बीमा की क़िस्त (Premium) अदा न करें, उन अ़वाम के पैसों से इस सरमायेदार के नुक़्सान की तलाफ़ी (भरपाई) की जाती है।

बहर हाल! सूदी निज़ाम के ज़ालिमाना तरीक़े की तरफ़ मैंने थोड़ा सा इशारा कर दिया इसलिये सूद के ज़रिये मओ़शत में ना इन्साफ़ी, ना बराबरी पैदा होना लाज़मी है, इसलिये शरीअ़त ने इसको मना किया है।

शिर्कत और साझेदारी के फ़ायदे

अब अगर यही तिजारत सूद के बजाये "शिर्कत" (साझेदारी) "मुज़ारबत" (नफ़े और नुक़्सान में हिस्सेदारी) की बुनियाद पर हो तो इस सूरत में बैंक और सरमाया लेने वाले के दरमियान यह मुआहदा नहीं होगा कि यह बैंक को 15 फ़ीसद अदा करेगा, बल्कि यह मुआहदा होगा कि सरमाया लेने वाला जो कुछ नफ़ा कमायेगा उसका आधा जैसे बैंक को अदा करेगा और आधा तिजारत करने वाले का होगा, अब अगर पचास फ़ीसद नफ़ा हुआ है तो पच्चीस फ़ीसद बैंक को मिलेगा और पच्चीस फ़ीसद उसको मिलेगा, इस तरह दौलत का रुख़ ऊपर के बजाये नीचे की तरफ़ होगा, इस तरह कि बैंक के वास्ते से वह पच्चीस फ़ीसद डिपाज़िटर को मिलेगा, इससे मालूम हुआ कि "सूद" का बुरा असर दौलत की तक़सीम पर भी पड़ता है, और इसके नतीजे मआशियत की पीठ पर भी नज़र आते हैं।

जुआ हराम है

इसी तरह इस्लाम ने "जुए" को हराम क़रार दिया है, "जुए" के मायने यह हैं कि एक शख़्स ने तो अपना पैसा लगा दिया अब दो सूरतें होंगी या तो जो पैसा उसने लगाया वह भी डूब गया, या अपने साथ बहुत बड़ी दौलत ले आया, इसको "क़िमार" यानी जुआ कहते हैं, इसकी बेशुमार शक्लें हैं, अजीब बात यह है कि हमारे इस पश्चिमी निज़ामे ज़िन्दगी में "जुआ" (Gambling) को बहुत सी जगहों पर क़ानून के अन्दर मना क़रार दिया गया है, लेकिन जब (Gambling) तहज़ीब याफ़्ता शक्ल इख़्तियार कर लेती है तो फिर वह जायज़ हो जाती है और ख़िलाफ़े क़ानून नहीं रहती। जैसे एक ग़रीब आदमी सड़क के किनारे "जुआ" खेल रहा है तो पुलिस उसको पकड़ ले जायेगी लेकिन अगर "जुए" को तहज़ीब याफ़्ता शक्ल दे दी जाये और उसके लिये कोई इदारा क़ायम कर लिया जाये और उसका कोई दूसरा नाम रख दिया जाये तो उसको जायज़ समझा जाता है, इस क़िस्म का "क़िमार"

हमारे सरमायेदाराना समाज में फैला हुआ है जिसके नतीजे में बेशुमार इन्सानों से पैसे जोड़ जोड़ कर एक इन्सान पर उसकी बारिश बरसा दी जाती है, इसलिये यह "जुआ" शरीअत ने हराम क़रार दिया है।

ज़ख़ीरा अन्दोज़ी

इसी तरह "एहतिकार" (Hoarding) यानी ज़ख़ीरा अन्दोज़ी शरअ़न मना और ना जायज़ है, चूंकि हर इन्सान इसको जानता है इसलिये इस पर ज़्यादा बहस करने की ज़रूरत नहीं।

इक्तिनाज़ जायज़ नहीं

इसी तरह "इक्तिनाज़" यानी इन्सान अपना पैसा इस तरह जोड़ जोड़ कर रखे कि उस पर जो शरअ़ी फ़राइज़ हैं उनको अदा न करे, जैसे ज़कात और दूसरे माली हुक़ूक़ अदा नहीं करता, इसको शरीअ़त में इक्तिनाज़ कहते हैं और शरअ़न यह भी हराम और ना जायज़ है।

एक और मिसाल

और सुनिये हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"لا يبيع حاضر لباد" (صحيح مسلم شريف)

कोई शहरी किसी देहाती का माल फ़रोख़्त न करे, यानी देहाती अपना माल देहात से शहर में बेचने के लिये ला रहा है, उस वक़्त में किसी शहरी के लिये जायज़ नहीं कि वह जाकर उससे कहे कि मैं तुम्हारा माल फ़रोख़्त कर दूंगा। बज़ाहिर तो इसमें कोई ख़राबी नज़र नहीं आती, इसलिये कि इस मामले में शहरी भी राज़ी और देहाती भी राज़ी, लेकिन सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमा दिया, इसलिये कि शहरी जब देहाती का माल अपने क़ब्ज़े में कर लेगा तो वह उस माल को उस वक़्त तक रोके रखेगा जब तक बाज़ार में उसकी क़ीमत ज़्यादा न हो जाये, इसलिये आ़म मंहगाई पैदा करने का सबब बनेगा, इसके उलट अगर देहाती अपना

माल शहर में लाकर फ़रोख़्त करेगा तो ज़ाहिर है कि वह भी अपना माल नुक़्सान पर तो फ़रोख़्त नहीं करेगा लेकिन उसकी ख़्वाहिश यह होगी कि जल्दी से अपना माल फ़रोख़्त करके वापस अपने घर चला जाऊं, तो इस तरह हक़ीक़ी तलब और हक़ीक़ी रसद के ज़रिये क़ीमतों को मुतअय्यन करना हो जायेगा, और अगर दरमियान में (Middleman) यानी बिचोलिया आ गया तो उसकी वजह से रसद और तलब की कुव्वतों को आज़ादाना काम करने का मौक़ा नहीं मिलेगा और उस (Middleman) की वजह से क़ीमत बढ़ जायेगी।

इसलिये वे तमाम ज़राये और तमाम रास्ते जिनके ज़रिये मुआशरे (समाज) को मंहगाई का शिकार होना पड़े, और जिनके ज़रिये समाज को ना इन्साफ़ी का शिकार होना पड़े उन पर शरई एतिबार से पाबन्दी आयद की गयी है, बहर हाल। यह पाबन्दियों की पहली क़िस्म है जो इस आज़ाद मओशत पर शरअ़न लागू की गयी है।

(2) अख़्लाक़ी पाबन्दी

आज़ाद मओशत पर शरअ़न दूसरी पाबन्दी जो आयद की गयी है उसको "अख़्लाक़ी पाबन्दी" कहते हैं, इसलिये कि बहुत सी चीज़ें ऐसी हैं जो शरअ़न हराम तो नहीं और न उनके करने का हुक्म दिया गया है लेकिन उनकी तरग़ीब ज़रूर दी है, और जैसा कि मैं पहले अर्ज़ कर चुका हूं कि इस्लाम एक मआशी निज़ाम नहीं है, बल्कि यह एक दीन है और एक निज़ामे ज़िन्दगी है जिसमें सब से पहले यह बात सिखाई जाती है कि इन्सान का बुनियादी मक़्सद आख़िरत की बेह्तरी है इसलिये इस्लाम यह तरग़ीब देता है कि अगर तुम फ़लां काम करोगे तो आख़िरत में तुम्हें बहुत बड़ा अज्र मिलेगा, इस्लाम ज़ाती मुनाफ़े का मुहर्रिक तो है लेकिन वह सिर्फ़ दुनियावी मुनाफ़े की हद तक मह्दूद नहीं, बल्कि ज़ाती मुनाफ़े में आख़िरत के मुनाफ़े को भी लाज़मी तौर पर शामिल समझता है, इसलिये इस्लम ने बहुत से अह्काम हमें इस बात के दिये हैं कि तुम्हें दुनिया में अगरचे नफ़ा कुछ कम मिले लेकिन

आख़िरत में इसका नफ़ा बहुत मिलेगा, जैसे शरीअत में यह कहा गया है कि हर वह इन्सान जो अपनी मआशत को कमाने के लिये बाज़ार में निकला है अगर यह नियत करे कि वह इसलिये बाज़ार में निकला है कि मुआशरे की फ़लां ज़रूरत को पूरा करूंगा तो उसकी इस नियत की वजह से उसका यह सारा अमल इबादत बन जायेगा और बाइसे अज्र हो जायेगा, और फिर इस नुक़्ता-ए-नज़र से इन्सान उस चीज़ का इन्तिख़ाब करेगा जिसकी मुआशरे (समाज) को ज़रूरत होगी, और हक़ीक़त में मुआशरे को दीनी एतिबार से ज़रूरत होनी चाहिये। जैसे फ़र्ज़ करें कि लोग अगर नाच गाने के ज़्यादा शौक़ीन हैं तो इस सूरत में कैपटलिज़्म का तसव्वुर तो यह है कि लोग ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने के लिये नाच-घर क़ायम करें चूंकि तलब उसकी ज़्यादा है, लेकिन इस्लाम की इस दीनी पाबन्दी के तहत उसके लिये नाच-घर क़ायम करना जायज़ नहीं। जैसे एक शख़्स यह देखता है कि अगर मैं फ़लां कारख़ाना लगाऊंगा तो उसमें मुझे नफ़ा तो बहुत होगा लेकिन इस वक़्त चूंकि रिहाइशी ज़रूरत के लिये लोगों को मकानात की ज़रूरत है और इसमें मुनाफ़ा तो ज़्यादा नहीं होगा लेकिन लोगों की ज़रूरत पूरी होगी तो उस वक़्त शरीअत की इस अख़्लाक़ी पाबन्दी पर अमल करने की वजह से आख़िरत के मुनाफ़े का हक़दार होगा।

(3) क़ानूनी पाबन्दी

तीसरी पाबन्दी "क़ानूनी पाबन्दी" है यानी इस्लाम ने इस्लामी हुकूमत को यह इख़्तियार दिया है कि जिस मर्हले पर हुकूमत यह महसूस करे कि मुआशरे को किसी ख़ास सिम्त पर डालने के लिये कोई ख़ास पाबन्दी आयद करने की ज़रूरत है तो ऐसे वक़्त में हुकूमत कोई हुक्म जारी कर सकती है, और फिर वह हुक्म तमाम इन्सानों के लिये क़ाबिले एहतिराम है, चुनांचे क़ुरआने करीम में फ़रमाया:

"يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَ اُولِي الْاَمْرِ مِنْكُمْ"

(سورة النسآ:٥٩)

यानी ऐ ईमान वालो! अल्लाह की इताअ़त करो और रसूल की भी इताअ़त करो और "उलुल अम्रि मिन्कुम" यानी हाकिमों की भी इताअ़त करो, इसी लिये फ़ुक़हा–ए–किराम ने फ़रमाया कि अगर हाकिमे वक़्त जो सही मायने में इस्लामी हुकूमत का सरबराह हो, अगर किसी मस्लिहत की बुनियाद पर यह हुक्म दे दे कि फ़लां दिन तमाम लोग रोज़ा रखें तो उस दिन पूरे दिन रोज़ा रखना पूरी रिआ़या पर अ़मलन वाजिब हो जायेगा, और अगर कोई शख़्स रोज़ा नहीं रखेगा तो अ़मली तौर पर उसे ऐसा ही गुनाह होगा जैसे रमज़ान का रोज़ा छोड़ने का गुनाह होता है, इसलिये कि "उलुल अम्र" यानी हाकिम की इताअ़त फ़र्ज़ है। (शामी)

इसी तरह फ़ुक़हा–ए–किराम ने लिखा है कि अगर उलुल अम्र यह हुक्म जारी कर दे कि लोगों के लिये ख़र्बूज़ा खाना मना है तो अब रिआ़या के लिये ख़र्बूज़ा खाना हराम हो जायेगा। बहर हाल! उलुल अम्र को इन चीज़ों का इख़्तियार दिया गया है, बशर्तेकि वे ये अह्काम आ़म लोगों की मसलिहत के तहत जारी करें, अब इसमें जुज़्वी मन्सूबा बन्दी भी दाख़िल है, जैसे यह कह दे कि फ़लां चीज़ में लोग सरमाया कारी करें और फ़लां चीज़ में सरमाया कारी न करें तो हुकूमत शरीअ़त की हदों में क़ानूनी तौर पर इस क़िस्म की पाबन्दी आ़यद कर सकती है।

बहर हाल कैपिटलिज़्म के मुक़ाबले में इस्लाम के मआ़शी निज़ाम में यह बुनियादी इम्तियाज़ और फ़र्क़ है और याद रखिये कि जहां तक क़ानूनी पाबन्दी का ताल्लुक़ है यह पाबन्दी कैपिटलिज़्म में भी पाई जाती है लेकिन ये पाबन्दियां इन्सानी ज़ेहन की पैदावार हैं और इस्लाम में असल इम्तियाज़ दीनी पाबन्दियों का है जो "वही" के ज़रिये हासिल होती हैं, और जिसमें अल्लाह तआ़ला जो पूरी कायनात का ख़ालिक़ है वह यह हिदायत करता है कि फ़लां चीज़ तुम्हारे लिये मुज़िर (नुक़सान देने वाली) है और मना है, हक़ीक़त में यह चीज़ ऐसी है कि जब तक इन्सानियत इस रास्ते पर नहीं आयेगी उस वक़्त तक इन्सानियत कमी

बेशी का शिकार रहेगी।

बेशक इश्तिराकियत मैदान में शिकस्त खा गयी, लेकिन सरमाया दाराना निज़ाम की जो ख़राबियां थीं या उसकी जो बेइन्साफ़ियां और ना बराबरियां थी, क्या वे ख़त्म हो गयीं? वे यक़ीनन आज भी इसी तरह बर्क़रार हैं और उनका हल अगर है तो वह इन ख़ुदाई पाबन्दियों में है, और इन ख़ुदाई पाबन्दियों की तरफ़ आये बग़ैर इन्सान को सुकून हासिल नहीं हो सकता। बस हमारी आमाल की ख़राबी यह है कि अभी तक इन "ख़ुदाई पाबन्दियों" पर मब्नी (आधारित) मआ़शत का कोई अ़मली ढांचा और अ़मली नमूना दुनिया के सामने पेश नहीं कर सके और हमारे मुल्क (पाकिस्तान) के सामने यही सब से बड़ा चैलेंज है कि वह इन मआ़शी तालीमात का अ़मली नमूना दुनिया के सामने पेश कर के दिखाये ताकि दुनिया को पता चले कि हक़ीक़त में इस्लामी मआ़शत किन बुनियादी ख़ुसूसियात की हामिल है और किस तरह उनको अपनाया जा सकता है।

मैं समझता हूं कि मैंने अपने हक़ से ज़्यादा आप हज़रात का वक़्त ले लिया और इस बात का भी एहसास है कि एक ख़ुश्क मौज़ू के अन्दर आपको मश्ग़ूल रखा, और आप हज़रात के अच्छी तरह सुनने का शुक्र गुज़ार हूं कि आपने बड़े सब्र व ज़ब्त और तहम्मुल के साथ इस गुफ़्तगू को सुना, अल्लाह तआ़ला इसको मेरे लिये भी और सुनने वालों के लिये मुफ़ीद बनाये और इसके बेह्तर नतीजे पैदा करे, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين.

कुरआने करीम की दौलत

की कद्र व अज़मत

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ:

اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْدِىْ لِلَّتِىْ هِىَ اَقْوَمُ......

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العلمين.

हज़राते उलमा-ए-किराम, बुज़ुर्गाने मोहतरम और प्यारे भाईयो! अल्लाह तआला का बहुत बड़ा एहसान व करम है कि आज एक ऐसी मज्लिस में शिर्कत की सआदत हासिल हो रही है जो कुरआने करीम की तालीम के साल पूरा होने पर मुन्अकिद (आयोजित) हुई और इस मौके पर कई बच्चों ने कुरआने करीम हिफ़्ज़ मुकम्मल किया है इस कुरआने करीम के पढ़ने पढ़ाने की तक्मील के मौके पर शरीक होना हर मुसलमान के लिये बड़ी सआदत का सबब है, अल्लाह तआला मुझे, आपको और सब को कुरआने करीम की इस बरकत में हिस्सेदार बनने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

नेमत व दौलते कुरआन की कद्र

हक़ीक़त यह है कि आज हम लोगों को कुरआने करीम की इस नेमत और दौलत की क़दर मालूम नहीं, बच्चे कुरआने करीम पढ़ते हैं, हिफ़्ज़ करते हैं और अल्हम्दु लिल्लाह तौफ़ीक़ के मुताबिक़ हम इस पर

ख़ुशी मना लेते हैं, लेकिन सच्ची बात यह है कि इस कुरआने करीम की दौलत की क़दर व क़ीमत का सही अन्दाज़ा हमें आपको इस दुनिया में रहते हुये हो ही नहीं सकता, इसकी वजह यह है कि अल्लाह तबारक व तआला ने यह कुरआन की दौलत हमें घर बैठे छप्पर फाड़ के अता कर दी, हमें इस दौलत को हासिल करने के लिये कोई जद्दो जिहद नहीं करनी पड़ी, हमने कोई मेहनत नहीं उठाई, कोई कुरबानी नहीं दी, कोई पैसा ख़र्च नहीं किया, कोई जान व माल की कुरबानी इस राह में पेश नहीं की, इस वास्ते इसकी क़दर का सही अन्दाज़ा हमें आपको नहीं, इस दौलते कुरआने करीम की क़दर सहाबा–ए–किराम रिज़यल्लाहु अन्हुम से पूछिये, जिन्हों ने एक एक आयत को हासिल करने के लिये अपनी जान की, अपने माल की, आबरू की, ख़ानदान की, जज़्बात की ऐसी कुरबानियां दीं कि उसकी मिसाल मिलनी मुश्किल है।

कुरआने करीम और सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम

कुरआने करीम की एक एक आयत को सीखने के लिये सहाबा–ए–किराम, ने जो दुश्वारियां उठायी हैं, उनका हाल आज हमें मालूम नहीं, कुरआन हमारे सामने एक निहायत ख़ुश्नुमा मुजल्लद किताब की सूरत में मौजूद है, मदरसा खुला हुआ है, उस्ताद पढ़ाने के लिये मौजूद है और हमारा काम सिर्फ़ यह है कि निवाला बना कर मुंह में ले जायें, और हलक़ से उतार दें, लेकिन वह भी सही मायनों में जिस तरह उतारना चाहिये इस तरह नहीं उतरता।

कुरआने करीम की क़द्र उन सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से पूछिये जिन्हों ने एक एक छोटी छोटी आयत की ख़ातिर मारें खायीं हैं, कुफ़्फ़ार के ज़ुल्म व सितम बर्दाश्त किये हैं, और किस किस तरह इस कुरआने करीम को हासिल किया है, सही बुख़ारी शरीफ़ में एक वाक़िआ आता है कि एक सहाबी रज़ियल्लाहु अन्हु जो नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में छोटे बच्चे थे, और

मदीना तैयबा से बहुत फ़ासले पर एक बस्ती में रहते थे, मदीना तैयबा आना जाना मुम्किन नहीं था, मुसलमान हो चुके थे, लेकिन नबी-ए-करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में मदीना तैयबा जाकर इल्म हासिल करना, उनकी अपनी ज़ाती मजबूरी की वजह से मुश्किल था। वह ख़ुद अपना वाक़िआ बयान करते हैं कि मैं यह किया करता था कि रोज़ाना उस सड़क पर चला जाता जहां से मदीना तैयबा के क़ाफ़िले आया करते थे, जो कोई क़ाफ़िला आता तो उनसे पूछता कि भाई अगर आप लोग मदीना तैयबा से आ रहे हैं तो क्या आप लोगों में से किसी को कुरआने करीम की कोई आयत याद है? अगर किसी को कुरआने करीम की कोई आयत याद हो तो मुझे सिखा दीजिये, क़ाफ़िले में से किसी को एक आयत याद होती, किसी को दो आयतें याद होतीं, इस तरह उन क़ाफ़िले वालों से सुन सुन कर, और उनके पास जा जा कर मैंने एक एक दो दो आयतें हासिल कीं और अल्हम्दु लिल्लाह इस तरह मेरे पास कुरआने करीम का एक बड़ा ज़ख़ीरा महफ़ूज़ हो गया।

उनसे इस कुरआन की क़दर पूछिये जिनको एक एक आयत हासिल करने के लिये क़ाफ़िले वालों की मिन्नत समाजत करनी पड़ रही है, लेकिन हमारे पास पूरा कुरआने करीम तैयार शक्ल में मौजूद है, जिन अल्लाह के बन्दों ने इसे हम तक पहुंचाया, जिन मेहनतों, कुरबानियों और मुश्किलात से गुज़र कर इसको हमारे लिये तैयार करके छोड़ गये, हमारा काम सिर्फ़ इतना रह गया है कि इसको पढ़ लें, पढ़ना सीख लें, इसको समझने की कोशिश करें, और फिर अमल करें, गोया पकी पकाई रोटी तैयार है सिर्फ़ खाने की देर है, इस वास्ते क़दर नहीं मालूम होती।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के बहनोई और बहन का वाक़िआ है (इस वाक़िए को हर मुसलमान जानता है) वे दोनों जानते थे कि अगर हम यह कुरआन हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के सामने बैठ

कर पढ़ेंगे (उस वक़्त तक हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु मुसलमान नहीं हुये थे) तो वह हमें पढ़ने नहीं देंगे, बल्कि हमें सज़ा देंगे, इस वास्ते छुप छुप कर पढ़ते। एक दिन हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़त्ल के इरादे से जा रहे थे किसी ने कहा कि दूसरों को इस्लाम से रोकते हैं अपने घर की जाकर ख़बर नहीं लेते, वहां पर क्या हो रहा है. वापस आकर देखा कि बहन और बहनोई कुरआने करीम खोले बैठे हुये हैं, और वे उस वक़्त सूरः ताहा की तिलावत कर रहे थे (लम्बा वाक़िआ है जो आप हज़रात को मालूम है)

बहर हाल! उस मुश्किलात के दौर में एक एक आयत सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने इस तरह हासिल की है, इसलिये वे इसकी क़दर व क़ीमत पहचानते थे, चूंकि हम और आपको बैठे बिठाये यह दौलत मिल गयी है इसलिये इसकी क़द्र नहीं पहचानते, जब तक ये आंखें खुली हुयी हैं, जब तक यह दुनिया का निज़ाम चल रहा है, जब तक मौत नहीं आती, उस वक़्त तक ज़ेहन दुनिया की ज़ाहिरी चमक दमक में और दूसरी चीज़ों में लगा हुआ है, एक वक़्त आना है जब दुनिया से जाना है, जब इन्सान क़ब्र के अन्दर पहुंचेगा, वहां इस कुरआने करीम की दौलत और अज़्मत का पता चलेगा, वहां जाकर इस नेमत का पता चलेगा, एक एक आयत पर क्या कुछ अनवार, क्या कुछ इनामात मिलेंगे।

कुरआने करीम की तिलावत का अज्र

एक हदीस शरीफ़ में नबी-ए-करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि जब कोई शख़्स कुरआने करीम पढ़ता है तो उसको एक एक हर्फ़ की तिलावत पर दस नेकियां लिखी जाती हैं, फिर तफ़्सील नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह बयान फ़रमायी कि मैं नहीं कहता कि "अलिफ़ लाम मीम" एक हर्फ़ है, बल्कि "अलिफ़" एक हर्फ़ "लाम" एक हर्फ़ "मीम" एक हर्फ़, तो अलिफ़ लाम मीम पढ़ा तो इस अलिफ़ लाम मीम के पढ़ने से

नामा-ए-आमाल में तीस नेकियों का इज़ाफ़ा हो गया।

बाज़ लोग यह कहते हैं कि कुरआने करीम को बग़ैर समझे, पढ़ने से क्या हासिल? यह तो एक नुस्ख़ा-ए-हिदायत है, इसको इन्सान पढ़े, और इस पर अमल करे तो इसका फ़ायदा हासिल होगा, सिर्फ़ तोते मैना की तरह इसको रट लिया, इससे क्या फ़ायदा? तो सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाया कि यह कुरआन ऐसा नुस्ख़ा-ए-शिफ़ा है कि जो शख़्स इसको समझ कर इस पर अमल करे, उसके लिये तो शिफ़ा का सबब है ही, लेकिन अगर कोई शख़्स सिर्फ़ इसकी तिलावत किया करे, बग़ैर समझे भी तो इस पर अल्लाह तबारक व तआला ने इतनी नेकियां लिखी हैं कि एक "अलिफ़ लाम मीम" के पढ़ने पर तीस नेकियों का इज़ाफ़ा हो जाता है।

कुरआने करीम से ग़फ़लत का सबब

इन नेकियों को हासिल करने के लिये कोई कशिश पैदा न हुई, कोई जुंबिश न हुई, कोई हर्कत नहीं हुई, कोई जज़्बा दिल में पैदा न हुआ, क्यों? इसलिये कि आज दुनिया का सिक्का नेकियां नहीं, यह जो कहा जा रहा है कि नेकियों में इज़ाफ़ा हो जायेगा, नामा-ए-आमाल में इज़ाफ़ा हो जायेगा, यह सिक्का राइजुल वक़्त नहीं, अगर यों कहा जाता कि "अलिफ़ लाम मीम" के अलिफ़ पर दस रुपये मिलेंगे, लाम पर दस रुपये मिलेंगे, मीम पर दस रुपये मिलेंगे, यानी अलिफ़ लाम मीम पढ़ने पर तीस रुपये मिलेंगे, तो दिल उसकी तरफ़ खिंचता, कशिश होती, लोग दौड़ते और भागते कि यहां तो बहुत सस्ता सौदा मिल रहा है कि अलिफ़ लाम मीम पढ़ो और तीस रुपये कमाओ, लेकिन चूंकि यह कहा जा रहा है कि रुपये के बजाये नेकियां मिलेंगी, इसलिये कोई कशिश, कोई जुंबिश और कोई हर्कत दिल में पैदा नहीं हो रही, इस वास्ते कि नेकियों की क़दर नहीं मालूम, जानते नहीं कि नेकी बढ़ने से क्या होता है और रुपये की क़दर मालूम है, दस रुपये मिलेंगे तो उनसे इतना काम होगा, और तीस रुपये मिलेंगे तो उनसे इतना काम होगा, इस वास्ते उनकी क़दर व क़ीमत का पता है, नेकियां बढ़ने

से कौन सी कार हाथ आ गयी, कौन सा बंगला बन गया, कौन से बैंक बैलेंस में इज़ाफ़ा हो गया, नेकियां बढ़ गयीं तो क्या हो गया, सिक्का राइजुल तो है नहीं, इस वास्ते इसकी तरफ़ कशिश नहीं होती, इसकी तरफ़ दिल में हर्कत नहीं होती।

जिस दिन यह आंख बन्द होगी, जिस दिन इस दिल की हर्कत रुक जायेगी और अल्लाह तबारक व तआला के हुज़ूर हाज़री होगी उस दिन पता चलेगा कि ये नेकियां क्या चीज़ थीं और ये रुपये जिनकी हम क़दर किया करते थे जो आज बड़ी क़ीमती चीज़ हैं ये क्या थे?

हक़ीक़त में मुफ़्लिस कौन है?

हदीस में आता है कि एक मर्तबा नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से दरयाफ़्त फ़रमाया कि यह बताओ, मुफ़्लिस किसे कहते हैं? मुफ़्लिस के क्या मायने हैं? सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया, या रसूलल्लाह! मुफ़्लिस तो उसे कहते हैं जिसके पास दीनार व दिर्हम न हों यानी जिसके पास रुपया पैसा न हो, उस ज़माने में दिर्हम चलते थे अशरफ़ियां सोने की और दिर्हम चांदी के, तो जिसके पास रुपया पैसा न हो, दौलत न हो वह मुफ़्लिस है। हुज़ूर ने फ़रमाया कि वह हक़ीक़ी मुफ़्लिस नहीं, हक़ीक़ी मुफ़्लिस कौन है? मैं तुम्हें बताता हूं। हक़ीक़ी मुफ़्लिस वह है कि जब क़ियामत के दिन अल्लाह तबारक व तआला की बारगाह में हाज़िर हुआ तो नेकियों से उसकी अ़मल की तराज़ू का पल्ला भरा हुआ था, बहुत सी नेकियां लेकर आया था, नमाज़ें पढ़ी थीं, रोज़े रखे थे, तसबीहात पढ़ी थीं, अल्लाह का ज़िक्र किया था, तालीम की थी, तब्लीग़ की थी, दीन की ख़िदमत अन्जाम दी थी, बहुत सारी नेकियां अल्लाह तबारक व तआला के दरबार में लेकर आया था।

लेकिन जब नेकियां पेश हुयीं तो मालूम हुआ कि नेकी तो बहुत की थीं, नमाज़ भी पढ़ी, रोज़ा भी रखा, ज़कात भी दी, हज भी किया, सब कुछ किया लेकिन बन्दों के हुक़ूक़ अदा न किये, किसी को मारा,

किसी को बुरा कहा, किसी का दिल दुखाया, किसी को तक्लीफ़ पहुंचायी, किसी की ग़ीबत की, किसी की जान पर हमला किया, किसी का माल खाया, किसी की आबरू पर हमला किया। ये अल्लाह के बन्दों के हुकूक़ ज़ाया किये, नमाज़ें पढ़ी थीं, रोज़े रखे थे, इबादतें की थीं, कुरआने करीम की तिलावत की थी सब कुछ किया था लेकिन लोगों को अपने हाथ से, अपनी ज़बान से और मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से तक्लीफ़ पहुंचाई थी, अब जब अल्लाह तआ़ला की बारगाह में पेश हुआ, वहां तो इन्साफ़ है, इसलिये जिनके हक़ मारे थे उनसे कहा गया कि तुम इस से अपना हक़ वुसूल करो, किस का पैसा खाया था इससे पैसे वुसूल करो, अब वहां कोई पैसे तो हैं नहीं, न रुपया न पैसा न दौलत, वहां दुनिया की सब करनसियां (मुद्राएं) ख़त्म हो चुकीं वह हक़ कैसे अदा करे?

अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे, यहां का सिक्का रुपया पैसा नहीं, यहां का सिक्का तो नेकियां हैं, वे नेक आमाल हैं जो इसने दुनिया के अन्दर किये थे, इसलिये उसी के ज़रिये तबादला होगा, चुनांचे जिसके पैसे खाये थे उससे कहा जायेगा कि इसकी नेकिया इसके नामा–ए–आमाल में से ले लो, उसने बहुत सारी नफ़्ली नमाज़ें पढ़ी थीं वे सब एक हक़ वाले को मिल गयीं, दूसरी नमाज़ें दूसरा हक़ वाला ले गया, रोज़े तीसरा हक़ वाला ले गया, हज चौथा हक़ वाला ले गया, और जितने नेक आमाल किये थे एक एक करके लोग लेजाते रहे, यहां तक कि सारी नेकियां ख़त्म हो जायेंगी, वह जितना ढेर लेकर आया था वह सारा का सारा ख़त्म हो गया, अब कुछ बाक़ी नहीं, कुछ लोग फिर भी खड़े हैं कि परवर्दिगार हमारा हक़ तो रह गया है, हमारे भी पैसे खाये थे, हमें भी बुरा भला कहा था, हमारी भी ग़ीबत की थी, इससे हमारा भी बदला दिलवाइये।

लेकिन उसके पास नेकियों का ज़ख़ीरा तो ख़त्म हो गया, बदला कैसे दिलवायें? अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि अब रास्ता यह है कि तुम्हारे जो गुनाह हैं वे तुम्हारे नामा–ए–आमाल से मिटा कर इसके

नामा–ए–आमाल में डाल दिये जायें, तुमने ग़ीबत की थी तुम्हारे से वह गुनाह माफ़, वह गुनाह इसको दे दिया जाये, तुमने और कोई ना जायज़ काम किया था, उस ना जायज़ काम का गुनाह तुम्हारे नामा–ए–आमाल से मिटा कर इसके नामा–ए–आमाल में लिख दिया जाये।

तो नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नेकीयों का ढेर लेकर आया था लेकिन बन्दों के हुक़ूक़ का मामला हुआ तो बजाये इसके कि वे नेकियां बाक़ी रहतीं और लोगों के गुनाह भी उसकी गर्दन पर डाल दिये गये। फ़रमाया कि हक़ीक़त में मुफ़्लिस वह है जो नेकियां लेकर आया था और गुनाहों का बोझ लेकर जा रहा है।

बन्दों के हुक़ूक़ की अहमियत

इसलिये ये बन्दों के हुक़ूक़ बड़े डरने की चीज़ है, लोगों के हुक़ूक़ मारना चाहे पैसे की शक्ल में हो या इज़्ज़त की शक्ल में हो, या जान की शक्ल में हो, यह इतना खतरनाक मामला है कि और गुनाह तौबा से माफ़ हो जाते हैं लेकिन बन्दों के हुक़ूक़ तौबा से माफ़ नहीं होते।

अगर कोई शख़्स शराब पिये (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) ज़िना करे, जुआ खेले, कोई और गुनाह करे और कितने ही बड़े से बड़े गुनाह किये हों, अल्लाह तबारक व तआ़ला के हुज़ूर हाज़िर होकर सच्चे दिल से तौबा करे, और "अस्तग़फ़िरुल्ला–ह रब्बी मिन कुल्लि ज़ंबिन व अतूबु इलैहि" पढ़ले तो सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाते हैं:

"التائب من الذنب كمن لا ذنب له"

यानी जो एक मर्तबा गुनाह से तौबा कर ले तो ऐसा हो जाता है जैसे उसने गुनाह किया ही नहीं। सब माफ़ फ़रमा देते हैं।

लेकिन अगर बन्दों के हुक़ूक़ मारे, जैसे एक पैसा भी किसी का ना जायज़ खा लिया, किसी को बुरा भला कह दिया, किसी का दिल दुखा दिया, यह ऐसा गुनाह है इसकी माफ़ी की कोई शक्ल नहीं, यह तौबा से भी माफ़ नहीं होता, जब तक वह हक़ वाला माफ़ न करे जिसका हक़ ज़ाया किया है, इस वास्ते इस मामले में बहुत ही ज़्यादा एहतियात

की ज़रूरत है।

अभी मदरसा देखने के लिये ऊपर के हिस्से पर जाना हुआ, बड़ा दिल खुश हुआ, अल्लाह तबारक व तआ़ला इस मदरसे को ज़ाहिरी व बातिनी हर तरह की तरक्क़ियां अ़ता फ़रमाये। यहां पर दीन के सच्चे तालिब पैदा फ़रमाये, माशा अल्लाह बड़ा काम हो रहा है, लेकिन जब ऊपर बैठा था तो लाऊडिस्पीकर की आवाज़ इतनी तेज़ कान में आ रही थी बाहर भी, ऊपर भी, कि चारों तरफ़ इसका शोर मच रहा था, मैंने गुज़ारिश की कि इसकी आवाज़ हलकी करनी चाहिये, और साथ ही साथ यह भी गुज़ारिश की कि किसी एक जगह पर बात चीत सुनने के लिये लोग जमा हों तो शरीअ़त का हुक्म यह है कि आवाज़ इतनी ही होनी चाहिये जितनी कि हाज़िरीन को पहुंचाने के लिये काफ़ी हो, लेकिन सारे मौहल्ले को सारे शहर को सुनाना कई वजह से जायज़ नहीं।

सब से बड़ी वजह यह है कि इस आवाज़ की वजह से कोई अल्लाह का बन्दा किसी घर में बीमार है और सोना चाहता है और इस आवाज़ की वजह से उसको तक्लीफ़ पहुंच रही है, उसकी बीमारी में इज़ाफ़ा हो रहा है, या कोई और शख़्स है जो बीमार तो नहीं लेकिन सोना चाहता है और हमारी आवाज़ की वजह से उसकी नींद में ख़लल आ रहा है, उसकी नींद ख़राब हो रही है, और हम ख़ुश हैं कि हमारी तक़रीर की आवाज़ दूर तक पहुंच रही है, क़ियामत के दिन पूछ हो गई कि मेरा एक बन्दा तुम्हारी वजह से तक्लीफ़ में था बताओ तुम्हारे पास इसका क्या जवाब है?

मुसलमान कौन है?

हदीस में नबी–ए–करीम सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"المسلم من سلم المسلمون من لسانه ويده"

यानी मुसलमान वह है जिसकी ज़बान से और हाथ से दूसरे तमाम

मुसलमान महफ़ूज़ रहें, उसके हाथ से भी दूसरे मुसलमान को कोई तक्लीफ़ न पहुंचे, उसकी ज़बान से भी किसी को तक्लीफ़ न पहुंचे। हम तो अपने गुमान में दीन की बात कर रहे हैं लेकिन दीन की बात करने का भी शरीअ़त ने तरीक़ा बताया है और वह तरीक़ा यह है कि एक शख़्स आपकी बात सुनना नहीं चाहता, आप उसके कान के ऊपर लाऊडिस्पीकर लगा कर ज़बरदस्ती उसको बात सुनायें, इसका शरीअ़त में कोई जवाज़ नहीं।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु एक मर्तबा मस्जिदे नबवी में तश्रीफ़ लाये, देखा कि एक साहिब वाज़ कह रहे हैं और लोग जमा हैं, लोग थोड़े से हैं लेकिन वाइज़ आवाज़ बहुत तेज़ निकाल रहे हैं, जो बाहर दूर तक जा रही है, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने उनको बुला कर फ़रमाया कि ऐ वाइज़! इतनी आवाज़ निकालो, जितने तुम्हारे सुनने वाले मौजूद हों, इससे बाहर तुम्हारी आवाज़ नहीं जानी चाहिये, और अगर आइन्दा तुम्हारी आवाज़ बाहर जायेगी तो समझ लो मैं अपना दुर्रा काम में लाऊंगा, इस वास्ते कि बाहर के लोग सुनने वाले नहीं हैं, जिनको सुनना ही है वे आपके पास आकर बैठ जायें, उस ज़माने में लाऊडिस्पीकर का तो रिवाज ही नहीं था वेसे ही आवाज़ बाहर जा रही थी, तब भी फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने रोका। अगर इस ज़माने में फ़ारूक़े आज़म होते तो न जाने हम में से कितनों की कमर पर फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु का दुर्रा होता, कि दिन रात जहां देखो दीन के नाम पर हम वह काम करते हैं जो दीन के ख़िलाफ़ है और शरीअ़त में ना जायज़ है।

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का हुजरा मस्जिदे नबवी के साथ था, जहां आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आराम फ़रमा हैं, हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा का मामूल था कि वह जुमे के बाद कुछ आराम किया करती थीं, वहां एक साहिब वाज़ कहने के लिये तश्रीफ़ ले आते थे, और वह बड़ी बुलन्द आवाज़ से वाज़ कहा करते थे, हज़रत आ़यशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हा ने पैग़ाम भिजवाया कि आप जब वाज़ करें

तो जितने लोग जमा हों उनके मुताबिक़ आवाज़ निकाला करें, बाहर दूर तक आवाज़ न पहुंचाया करें, वह नहीं माने और कहने लगे कि मैं तो दीन का हुक्म सुना रहा हूं, दीन की तब्लीग़ कर रहा हूं। सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने फ़ारूके आज़म के पास शिकायत की और कहा कि वह शख़्स यहां आकर वाज़ कहता है और मेरी नींद में ख़लल होता है आप उसको रोकें।

तालीमे नबवी

नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें यह तरीक़ा सिखाया, आज हमने पता नहीं किस चीज़ का नाम दीन समझ लिया, सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो तरीक़ा सिखाया वह क्या है? आप तहज्जुद के लिये उठ रहे हैं, और उस वक़्त बिस्तर से किस अन्दाज़ में उठते हैं, हदीस शरीफ़ में आता है कि "क़ा-म रूवैदन" आहिस्ता से उठते हैं "व फ़-त-हल बा-ब रूवैदन" दर्वाज़ा आहिस्ता से खोलते हैं, क्यों? कहीं ऐसा न हो कि मेरे उठने से सिद्दीक़ा आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की नींद में ख़लल आ जाये, वह सिद्दीक़ा जो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के एक एक हुक्म पर, आपकी एक एक अदा पर जान कुरबान करने के लिये तैयार हैं, एक नींद तो क्या, करोड़ों नींदें कुरबान करने के लिये तैयार हैं सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर, तालीम यह दे रहे हैं कि अपनी इबादत अन्जाम देनी है तो इस तरह अन्जाम न दो जिस से दूसरों को तक्लीफ़ हो।

ये हैं बन्दों के हुक़ूक़, जो नबी-ए-करीम सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सिखाये, आज अगर हम कोई दीन की बात कर रहे हैं तो सारी दुनिया को सुनाना ज़रूरी है, चाहे कोई सो रहा हो, या मर रहा हो, या कोई बीमार हो, इस बात का कोई लिहाज़ नहीं, किसी के ज़ेहन में भी नहीं आता कि हम यह कोई गुनाह का काम कर रहे हैं।

मुसलमान की इज़्ज़त व अज़्मत

किसी मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना बड़ा गुनाह है, ऐसा ही गुनाह है जैसे शराब पीना, डाका डालना, चोरी करना, ज़िना करना, इब्ने माजा में हदीस है कि नबी-ए-करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक मर्तबा बैतुल्लाह शरीफ़ का तवाफ़ फ़रमा रहे थे हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु साथ थे, हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद फ़रमाते हैं कि मैंने देखा कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम काबा शरीफ़ को ख़िताब करके फ़रमा रहे हैं, ऐ अल्लाह के घर! तू कितनी हुरमत वाला है, कितनी अज़्मत वाला है, कितने तक़द्दुस वाला है, कितना मुक़द्दस है। फिर थोड़ी देर के बाद हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फिर फ़रमाया कि लेकिन एक चीज़ ऐसी है, जिसकी अज़्मत, जिसका तक़द्दुस तुझ से भी ज़्यादा है, यह काबतुल्लाह से ख़िताब करके फ़रमाया, हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक दम से मेरे कान खड़े हो गये, मैं चोंका, कि वह कौन सी चीज़ है कि जिसकी इज़्ज़त व हुरमत और जिसकी अज़्मत बैतुल्लाह से भी ज़्यादा है? फिर आपने फ़रमाया कि वह चीज़ है एक मुसलमान की जान, उसका माल, उसकी आबरू।

मुसलमान की जान, मुसलमान का माल और मुसलमान की आबरू, ये तीन चीज़ें ऐसी हैं ऐ काबतुल्लाह इनकी हुरमत तुझ से ज़्यादा है, क्या मतलब? कि अगर कोई शख़्स ना जायज़ तौर पर किसी मुसलमान की जान पर हमला आवर हो, इसमें जान से मारना, क़त्ल करना, ज़ख़्मी करना, नुक़सान पहुंचाना, तक्लीफ़ पहुंचाना, जिस्मानी तक्लीफ़ कोई भी पहुंचाई जाये वे सब इसमें दाख़िल हैं, तो किसी मुसलमान की जान या माल या आबरू को नुक़सान पहुंचाना इतना बड़ा गुनाह है कि जैसे कोई शख़्स काबतुल्लाह शरीफ़ को ढा दे, काबे का गिरा देना जितना बड़ा गुनाह है उतना ही किसी मुसलमान की जान, माल और

आबरू पर नाहक़ हमला करना गुनाह है।

अब आप अन्दाज़ा लगाइये कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने किसी मुसलमान की जान, माल और आबरू के बारे में कितनी ताकीद फ़रमाई है। आज ख़ुदा न करे, ख़ुदा न करे, कोई बद बख़्त जुर्रत करे की बैतुल्लाह शरीफ़ पर अल्लाह अपनी पनाह में रखे, हमला आवर होकर उसको ढाने की कोशिश करे, क्या कोई मुसलमान ऐसा है जो उसकी तिक्का बोटी छोड़ दे, अगर उसके क़ाबू में आ गया तो कभी ग़ैरत गवारा नहीं करेगी कि उसकी आंखों के सामने कोई बैतुल्लाह पर हमला आवर हो।

लेकिन सुबह से शाम तक कितने बैतुल्लाह ढाये जा रहे हैं, कितने काबे ढाये जा रहे हैं, मुसलमान की जान जिसको नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अ़ज़्मत वाला क़रार दिया था, वह मक्खी और मच्छर से ज़्यादा बे हक़ीक़त होकर रह गयी है कि एक मक्खी या मच्छर को मारा, या किसी मुसलमान को मारा और मारने के अ़लावा तक्लीफ़ पहुंचाने के जितने रास्ते हैं जिनका मैंने ज़िक्र किया वे सब इसके अन्दर दाख़िल हैं, और उन सब को नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कितना बड़ा गुनाह क़रार दिया और इसी वजह से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि सब से बड़ा मुफ़्लिस वह शख़्स है कि जो क़ियामत के दिन नेकियों का बड़ा ज़ख़ीरा लेकर आये, लेकिन आख़िर कार उसके पास एक नेकी भी बाक़ी न रहे, दूसरों के गुनाह उसके आमाल नामे में डाल दिये गये।

दीन इस्लाम की हक़ीक़त

आज हमने चन्द ज़ाहरी इबादतों का नाम दीन रख लिया है नामाज़ पढ़ी, रोज़ा रखा, कुछ ज़कात दे दी, कुछ नहीं भी दी और हज करने और उमरा करने की दौलत मिल गयी, ये इबादतें अपनी जगह बड़ी नेमतें हैं, लेकिन दीन इनमें मुनहसिर (सीमित) नहीं दिन का जो इल्म है जिसे फ़िक़ा कहते हैं उसके चार हिस्से हैं उनमें से एक हिस्सा

इबादतों से मुताल्लिक़ है बाक़ी तीन हिस्से बन्दों के हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ हैं, लेकिन हमने बन्दों के हुक़ूक़ को दीन से बिल्कुल ख़ारिज कर लिया है। किसी को यह ख़्याल तक नहीं आता कि मैंने कोई गुनाह का काम किया, या कोई ना जायज़ काम किया, या अल्लाह तबारक व तआला को नाराज़ करने वाला कोई काम किया है, अगर ऐसा कोई नाराज़ करने वाला काम किया, तो उसकी तौबा की कोई शक्ल नहीं जब तक वह हक़ वाला उसको माफ़ न कर दे।

रिश्वतों का दौर दौरा है, लोगों को ईज़ा पहुंचा रहे हैं, तक्लीफ़ें पहुंचाई जा रही हैं, उनका हक़ लूटा जा रहा है, ये सारी की सारी बातें बन्दों के हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ हैं, तक्लीफ़ पहुंचाने की जो भी चीज़ें हैं वे बन्दों के हुक़ूक़ को बर्बाद करने वाली हैं। बहर हाल! यह बात तो इस हदीस के तहत ज़बान पर आ गयी, लेकिन बड़ी अहम बात है, अल्लाह तआला मुझे भी अमल करने की तौफ़ीक़ दे और आप हज़रात को भी अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये और इसकी अहमियत अल्लाह तआला हमारे दिलों में पैदा फ़रमाये।

यह दीन चन्द ज़ाहिरी इबादतों का नाम नहीं है, यह हमें एक एक चीज़ के बारे में हिदायत देता है, अल्लाह तआला हम सब को अमल की तौफ़ीक़ फ़रमाये। अर्ज़ यह कर रहा था कि आजकी इस दुनिया में जब तक आंखें खुली हुई हैं उस वक़्त तक हमें इन नेकियों की क़दर व क़ीमत मालूम नहीं होती, सारी दौलत रुपये पैसे को समझ रखा है। मेरे पास बैंक बैलेंस ज़्यादा हो जाये, पैसे ज़्यादा हो जायें, बंगला बन जाये, कार मिल जाये, बस सारी दौड़ धूप, सारा सोच विचार का मेहवर (धुरा) हमने इसको बना रखा है, इसका नतीजा यह है कि नेकियों की कोई क़दर व क़ीमत नहीं।

नसीहत भरा वाक़िआ

इसकी मिसाल बिल्कुल ऐसी है, मेरे वालिद माजिद मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी रहमतुल्लाहि अलैहि (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) ने अल्लाह तआला उन पर अपना फ़ज़्ल फ़रमाये आमीन, अपना एक

वाक़िआ सुनाया और जो अल्लाह वाले होते हैं ये अपने साथ जो भी वाक़िआ पेश आये उससे कोई न कोई सबक़ लेते हैं, अपने बचपन का वाक़िअ सुनाते हैं कि बचपन में जब मैं छोटा सा बच्चा था, अपने एक भाई के साथ खेल रहा था और देवबन्द (ज़िला सहारनपुर) में हज़रत वालिद रहमतुल्लाहि अलैहि के ज़माने के बच्चों के खेल आज कल की तरह नये नये खेल तो थे नहीं, ऐसे ही छोटे छोटे खेल हुआ करते थे, यह सरकन्डे होते हैं उसके छोटे छोटे पोरे बना कर उससे बच्चे खेला करते थे, एक बच्चे ने अपना पोरा नीचे की तरफ़ लुढ़काया, दूसरे बच्चे ने भी लुढ़काया, जिसका पोरा पहले पहुंचेगा वह जीत गया, और वह दूसरे से एक पोरा ले लेता था।

फ़रमाया कि मैं यह खेल एक मर्तबा अपने भाई के साथ खेल रहा था, बहुत सारे पोरे लेकर आया, वह भी लेकर आये थे, अब जब खेलना शुरू किया तो जब भी मैं पोरा लुढ़काता तो मेरा पोरा पीछे रह जाता है भाई का पोरा आगे बढ़ जाता है और हर मर्तबा वह मुझ से एक पोरा ले लेते यहां तक कि मैं जितने पोरे लेकर आया था वे सारे के सारे एक एक करके ख़त्म हो गये, अब मेरे पास कोई पोरा नहीं, और भाई जितने लाये थे उनके पास उस से दोगुने हो गये, फ़रमाते हैं कि जब मैं सारे के सारे पोरे हार गया तो मुझे आज तक याद है कि मुझे इतना शदीद सदमा और इतना ग़म हुआ और मैं उस पर इतना रोया कि उसके बाद उससे बड़े बड़े नुक़्सान पर उतना सदमा नहीं हुआ, और यह समझा कि आज तो मेरी कायनात लुट गयी, आज तो मेरी दुनिया तबाह हो गयी, यह सदमा उस वक़्त इतना हो रहा था कि किसी बड़ी से बड़ी जायदाद के लुट जाने पर भी नहीं होता।

फ़रमाते हैं कि आज जब सोचता हूं कि किस बात पर रोया था, किस बात पर सदमा हुआ था, किस बात पर इतना ग़म किया था, उन मामूली बेहक़ीक़त, बेक़ीमत पोरों के छिन जाने से इतना सदमा हो रहा था तो आज उस वाक़िए को याद करके हंसी आती है, कितनी बेवक़ूफ़ी की बात थी, फिर फ़रमाया अब हम यह समझते हैं कि उस वक़्त हम

बेवकूफ़ थे, बच्चे थे, अ़क्ल नहीं थी इस वास्ते उस बे हक़ीक़त चीज़ के खो जाने पर इतना सदमा कर रहे थे, इसलिये अब उस पर हंसते हैं लेकिन अब समझते हैं कि अब अ़क्ल आ गयी है कि वे पोरे बे हक़ीक़त थे, हक़ीक़त में ये रुपये पैसे, ये बंगले, ये जायदादें, ये कारें, ये हैं असल चीज़ कि जिनको इन्सान हासिल करे।

लेकिन फ़रमाते हैं कि जब अल्लाह तबारक व तआ़ला के पास आख़िरत में पहुंच जायेंगे तो उस वक़्त पता चलेगा कि ये तमाम चीज़ें जिनके उपर दुनिया में लड़ रहे थे, यह ज़मीन, यह जायदाद, यह दौलत, ये कोठियां, ये बंगले, ये कारें, ये सारी की सारी ऐसी बे हक़ीक़त थीं जैसे कि वे सरकन्डे के पोरे, और जिस तरह आज इस बात पर हंस रहे हैं कि पोरों के छिन जाने से अफ़्सोस हो रहा था इसी तरह उस वक़्त इनकी हक़ीक़त मालूम होगी कि जो कोठियां हम बनाया करते थे, जायदादों पर ज़मीनों पर और माल दौलत की बुनियाद पर झगड़ते और अकड़ते और दुनिया में ऐसी चीज़ों को दौलत समझा करते थे यह हक़ीक़ी दौलत नहीं थी, हक़ीक़त में दौलत ये नेक आमाल थे, जो जन्नत में लेजाने वाले हैं।

जन्नत की राहत और जहन्नम की सख़्ती

हदीस शरीफ़ में आता है कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला एक ऐसे शख़्स को बुलायेंगे जिसने सारी उमर तक्लीफ़ों में मशक़्क़तों में, सदमों में गुज़ारी, और उससे पूछा जायेगा कि तुम्हारी ज़िन्दगी कैसी गुज़री? वह कहेगा कि परवर्दिगार! मेरी ज़िन्दगी का आप क्या पूछते हैं इतने सदमे उठाये इतनी तक्लीफ़ सही, इतनी परेशानियां उठायीं कि सारी उमर कोई ख़ुशी याद नहीं, सारी उमर सदमों ही सदमों में गुज़री, बारी तआ़ला फ़रिश्तों से फ़रमायेंगे कि इसको ज़रा जन्नत की बाहर से हवा लगा लाओ, उसको फ़रिश्ते ले जायेंगे, और जन्नत के बाहर से इस तरह से एक चक्कर लगा ले आयेंगे कि जन्नत की हवा का कोई झोंका लग जायेगा, उसके बाद उससे पूछेंगे कि अब बता

कैसी ज़िन्दगी गुज़री, वह कहेगा कि परवर्दिगार! मेरी ज़िन्दगी तो इतनी आफ़ियत में गुज़री है कि मैंने किसी ग़म की शक्ल देखी ही नहीं है, मैं तो सारी उमर मसर्रतों में, ऐश व आराम में और बहुत ख़ुशी में बसर करता रहा हूं, और मैंने कोई तक्लीफ़ नहीं देखी, वह जो ज़रा सी जन्नत की हवा लग गयी उसकी लज़्ज़त, उसकी राहत, उसका सुकून, उसका इत्मीनान दिल में इतना प्यारा होगा कि सारी दुनिया की तक्लीफ़ों को भूल जायेगा।

फिर फ़रमायेंगे कि ऐसे शख़्स को लाओ कि जिसने दुनिया के अन्दर किसी ग़म की शक्ल नहीं देखी, कोई सदमा नहीं देखा बल्कि आराम में ऐश में सारी उमर गुज़ारी, और उससे पूछा जायेगा कि तुम्हारी ज़िन्दगी कैसी गुज़री, वह कहेगा कि या अल्लाह! मेरी ज़िन्दगी तो बड़े आराम के साथ गुज़री, बड़े ऐश व आराम में गुज़री, कोई सदमा मेरे पास नहीं फटका, कहा जायेगा कि इसको ज़रा सी एक हवा जहन्नम की लगा लाओ, बाहर ही से अन्दर दाख़िल मत करना, फ़रिश्ते उसको लेजायेंगे और जहन्नम के पास इस तरह से गुज़ार कर ले आयेंगे कि जहन्नम की लपट का ज़रा सा झोंका उसको लग जायेगा।

उसके बाद उससे पूछा जायेगा कि अब बताओ तुम्हारी ज़िन्दगी कैसी गुज़री, वह कहेगा कि या अल्लाह! मैं तो सारी उमर तक्लीफ़ में रहा हूं, सारी उमर सदमों में गुज़ारी है, ख़ुशी की कोई शक्ल नहीं देखी, वह चन्द लम्हों की जहन्नम की हवा, उसकी जो शिद्दत है और उसमें जो सख़्ती है वह इतनी ज़्यादा है कि उसकी वजह से सारी उमर की राहतें, मसर्रतें भूल जायेगा। यह है जन्नत व जहन्नम की राहत व शिद्दत का हाल कि उसके मुक़ाबले में हम दुनिया को भूल जायेंगे।

हमारी हालत

और हमारा हाल यह है कि सुबह से लेकर शाम तक हमारे दिमाग़ पर और दिल पर जो फ़िक्र मुसल्लत है, जो बिचार है, जो दौड़ धूप है

वह इस दुनिया के बे हक़ीक़त माल व मता के लिये है, आख़िरत की ज़िन्दगी को दुरुस्त करने की कोई फ़िक्र नहीं है।

एक मस्अले पर दुनिया के तमाम इंसान मुत्तफ़िक़ हैं

मैं अर्ज़ किया करता हूं कि दुनिया में कोई बात ऐसी नहीं है जिस पर सारी दुनिया के इन्सान मुत्तफ़िक़ हों, हर बात में कुछ न कुछ इख़्तिलाफ़ ज़रूर है, लेकिन एक बात ऐसी है इससे किसी इन्सान को इख़्तिलाफ़ नहीं, और वह यह है कि मुझे एक दिन मरना है, मौत से कोई इन्कार नहीं कर सकता, लोगों ने ख़ुदा से इन्कार कर दिया, ख़ुदा के वजूद से इन्कार कर दिया, रिसालत से इन्कार कर दिया, लेकिन मौत से इन्कार किसी के लिये मुम्किन नहीं, बड़े बड़े ला मज़्हब, बड़े बड़े बेदीन, कोई भी यह नहीं कह सकता कि मौत नहीं आयेगी, हर शख़्स इसको मानता है और साथ ही इसको भी मानता है कि इस मरने का कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं, हो सकता है कि अगले लम्हे आ जाये, हो सकता है कल आ जाये, हो सकता है दो दिन के बाद आ जाये, हो सकता है महीने के बाद आये, हो सकता है साल भर में आये, बहुत ज़्यादा जी लिये तो सत्तर साल अस्सी साल, फिर बहुत ज़्यादा जी लिये तो सौ साल, उसके बाद तो जाना ही जाना है।

एक सबक़ भरा वाक़िआ

एक मर्तबा का वाक़िआ है और यह बड़ा अजीब वाक़िआ है, याद रखने का है, अल्लाह तआला हम सब को इससे फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु सफ़र पर जा रहे हैं, जाते जाते सफ़र के दौरान कुछ भूख लगी, वह होटलों, रेसटूरेंटों का ज़माना तो था नहीं कि भूख लगी तो किसी होटल में घुस गये और वहां जाकर खाना खा लिया। हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने तलाश किया कि आस पास बस्ती हो लेकिन वहां कोई बस्ती भी नहीं, तलाश करते करते देखा कि एक बकरियों का रेवड़ चर रहा है, ख़्याल हुआ कि इस बकरी वाले से कुछ दूध लेकर पीलें ताकि भूख मिट जाये, तो

देखा कि एक चरवाहा बकरियां चरा रहा है, उससे जाकर कहा कि मैं मुसाफ़िर हूं और मुझे भूख लगी है, मुझे एक बकरी का दूध निकाल दो तो मैं पीलूं और जो उसकी क़ीमत तुम चाहो वह मैं तुमको अदा कर दूं।

चरवाहे ने कहा कि जनाब! मैं ज़रूर आपको दूध दे देता लेकिन ये बकरियां मेरी नहीं हैं मैं तो नौकर हूं बकरियां चराने के लिये मुझे मेरे मालिक ने रखा हुआ है, और जब तक उससे इजाज़त न लेलूं उस वक़्त तक मुझे आपको दूध देने का हक़ नहीं। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु लोगों को आज़माया भी करते थे, आपने उससे कहा कि मैं तुम्हें तुम्हारे फ़ायदे की एक बात बताता हूं, अगर तुम उस पर अ़मल कर लो, पूछा क्या, आपने फ़रमायाः ऐसा करो कि इन बकरियों में से एक बकरी मेरे हाथ बेच दो, पैसे मैं तुम्हें अभी देता हूं, मेरा फ़ायदा तो यह होगा कि मुझे दूध मिल जायेगा, ज़रूरत होगी तो मैं उसे काट कर गोश्त भी खा लूंगा, और फिर मालिक जब तुमसे पूछे कि एक बकरी कहां गयी? तो कह देना कि भेड़िया खा गया, और उसकी वजह से वह तबाह हो गयी और भेड़िया तो बकरियों को खाता ही रहता है। कहां मालिक तुम्हारी तह्क़ीक़ करता फिरेगा कि भेड़िये ने खाया या नहीं खाया, तुम इन पैसों को अपनी जेब में रख कर इनको अपनी ज़रूरतों में इस्तेमाल करना। ऐसा कर लो इसमें तुम्हारा भी फ़ायदा और मेरा भी फ़ायदा।

उस चरवाहे ने यह बात सुनी और सुनते ही बेसाख़्ता जो कलिमा उसकी ज़बान से निकला वह यह था "या इब्नुल मलिक! फ़अैनल्लाह?" शहज़ादे तुम मुझ से यह कहते हो कि मैं मालिक से जाकर झूठ बोल दूं और यह कह दूं कि बकरी को भेड़िया खा गया, तो अल्लाह मियां कहां गये? अल्लाह तआ़ला कहां हैं? बेशक मेरा मालिक मुझे नहीं देख रहा है लेकिन मालिक का मालिक, मालिकुल मुल्क वह देख रहा है, उसके पास जाकर मैं क्या जावाब दूंगा, मालिक को तो ख़ामोश कर सकता हूं लेकिन मालिक के मालिक को कैसे ख़ामोश करूं।

फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि जब तक तुझ जैसे इन्सान इस उम्मत के अन्दर मौजूद है उस वक़्त तक इस उम्मत पर कोई फ़साद नहीं आ सकता, जिनके अन्दर अल्लाह के सामने जवाब दही का एहसास मौजूद है। जब तक यह एहसास बाक़ी है उस वक़्त तक दुनिया में अम्न व सुकून बाक़ी है, और जब यह ख़त्म हो गया तो उस वक़्त इन्सान, इन्सीन न रहेगा बल्कि भेड़िया बन जायेगा। जैसा कि आज कल बना हुआ नज़र आ रहा है।

इन्सान इन्सान नहीं दरिन्दा बना हुआ है, दूसरे की बोटियां नोचने की फ़िक्र में है, दूसरे की खाल उतारने की फ़िक्र में है, दूसरे का ख़ून पीने की फ़िक्र में है, सिर्फ़ इस दुनिया के कुछ फ़ायदे हासिल करने के लिये कि इसके कुछ फ़ायदे हासिल हो जायें।

हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी की फ़िक्र

नबी–ए–करीम सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह फ़िक्र पैदा फ़रमाई कि दुनियावी ज़िन्दगी तो ख़ुदा जाने कितने दिन है, कब ख़त्म हो जाये, अल्लाह के सामने जवाब दह होना है, जो हमेशा की ज़िन्दगी मिलने वाली है उसकी फ़िक्र करो, और वहां का सिक्का रुपया पैसा नहीं है, तुम लाख जमा कर लो, करोड़ कर लो, अरब कर लो, खरब कर लो, सब यहीं दुनिया में छोड़ जाओगे, कोई तुम्हारे साथ जाने वाला नहीं है, वहां अगर कोई चीज़ जाने वाली है तो वह नेक अमल है।

एक हदीस में नबी–ए–करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई मुर्दा क़ब्रिस्तान की तरफ़ लेजाया जाता है तो तीन चीज़ें उसके साथ जाती हैं। एक उसके अज़ीज़ व क़रीबी लोग जाते हैं उसको छोड़ने के लिये, दूसरे उसका माल जाता है, यानी वह कपड़े जो उसके ऊपर हैं और चारपाई है, जिनमें उसे लपेट कर लिटा कर लेजाया जा रहा है और तीसरी चीज़ जो उसके साथ जाती है वह उसका अमल है। फ़रमाया पहली दो चीज़ें अज़ीज़ व क़रीबी

लोग और माल क़ब्र के किनारे जाने के बाद वापस हो जाते हैं आगे जाने वाली चीज़ एक ही है और वह उसका अ़मल है, चाहे वह नेक अ़मल है या उसका बुरा अ़मल है।

इस वास्ते वहां का सिक्का यह रुपया पैसा नहीं, यह माल व दौलत नहीं, वहां का सिक्का नेकियां हैं और उन नेकियों के हासिल करने के लिये सब से बड़ी दौलत जो अल्लाह तआ़ला ने हमें अ़ता फ़रमाई वह यह कुरआने करीम की दौलत है, कि अल्लाह तबारक व तआ़ला ने यह कुरआने करीम इस उम्मत के वास्ते नुस्ख़ा–ए–शिफ़ा बना कर भेजा है, इसका पढ़ना इसका समझना, इस पर अ़मल करना इसकी दावत देना, इसकी तब्लीग़ करना, सब इन्सान के लिये अज्र व सवाब का सबब है, सआ़दत का सबब है।

कुरआने करीम की क़द्र का तरीक़ा

नबी–ए–करीम सरवरे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं एक ऐसी चीज़ छोड़ कर जा रहा हूं जब तक उसको मज़बूती से थामे रखोगे उस वक़्त तक कभी गुमराह नहीं होगे, और वह है अल्लाह की किताब, यह छोड़ कर आप दुनिया से तशरीफ़ ले गये, और इसकी क़दर पहचानने का तरीक़ा यह है कि कम से कम इतना तो करें कि हम मुसलमानों में से किसी का बच्चा भी कुरआने करीम की तालीम के बग़ैर न रहे। जब तक कुरआने मजीद नाज़रा न पढ़ ले उस वक़्त तक उसको किसी और काम में न लगाया जाये।

एक वक़्त था जब सुबह के वक़्त मुसलमानें की बस्तियों से हर तरफ़ से कुरआने करीम की तिलावत की आवाज़ें आया करती थीं, लेकिन अब कुरआने करीम की तिलावत को कान तरस्ते हैं, अब फ़िल्मी गानों की आवाज़ें आयेंगी और तरह तरह के खुराफ़ात की आवाज़ें आयेंगी, नहीं आयेगी तो कुरआने मजीद की तिलावत की आवाज़ नहीं आयेगी।

मुसलमानों का फ़र्ज़

हक़ीक़त में ये मदरसे इस ग़र्ज़ के लिये हैं कि उम्मत में दीनी शऊर को बेदार किया जाये, ताकि क़ुरआने करीम की तरफ़ लौटें और क़ुरआने करीम के अल्फ़ाज़, उसके मआनी, उसके मफ़ाहीम (मायने व मतलब) फैलाने और पहचानने की फ़िक्र करें, अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम है, अल्लाह तआला का इनाम है कि आपके मौहल्ले में यह मदरसा यह ख़िदमत अन्जाम दे रहा है। अल्लाह तआला इसको हर तरह की ज़ाहिरी व बातिनी तरक़्क़ियां अ़ता फ़रमाये, अभी मदरसे के हज़रात यह कह रहे थे और बजा तौर पर कह रहे थे कि यह दीन की ख़िदमत का इदारा है, तमाम मुसलमानों को इसके साथ तआ़वुन (सहयोग) करना चाहिये। वे लोग जिन्हों ने अपनी ज़िन्दगी इस्लाम के लिये खपाई है और क़ुरआने करीम की ख़िदमत के लिये, कम से कम उनको इस फ़िक्र से आज़ाद करें कि वे लोगों के पास पैसे न मांगते फिरें, बेशक यह मुसलमानों पर फ़र्ज़ है।

लेकिन मैं यह कहता हूं कि इससे भी ज़्यादा ज़रूरी चन्दा जो मुसलमानें से इस वक़्त लेने की ज़रूरत है वह है बच्चों का चन्दा, जो मुसलमान घरानों से हासिल किये जायें, जिनको क़ुरआने करीम की तालीम दी जाये, अब यह वबा फैल चुकी है कि क़ुरआने करीम को पढ़ाये बग़ैर दूसरे कामों के अन्दर लगा देते हैं और क़ुरआने करीम की दौलत से बच्चा महरूम रहता है।

बचपन की तालीम

बचपन में एक मर्तबा क़ुरआन पढ़ा दो, उसके दिल को क़ुरआने करीम से मुनव्वर करो, उसके बाद उसको किसी भी काम में लगाओगे तो इन्शा अल्लाह सुम्म इन्शा अल्लाह क़ुरआने करीम के अनवार व बरकतें उसके अन्दर शामिले हाल होंगे। जब क़ुरआन उसको पहले पढ़ा दिया उसके कान के ज़रिये ईमान का बीज उसके दिल में जमा दिया और तजुर्बा यह है कि जो बच्चे मक्तब में क़ुरआने करीम पढ़ कर

जाते हैं तो वे किसी भी माहौल में चले जायें लेकिन ईमान का बीज उनके दिल में मौजूद रहता है।

अगर आपने शुरू ही से बच्चे को बिस्मिल्लाह, सुब्हानल्लाह अल्हम्दु लिल्लाह और कुरआने करीम की आयतें सिखाने के बजाये उसको कैट (cat) पुट (put) सिखानी शुरू कर दी और उसके दिमाग़ के ऊपर कुत्ते बिल्ली को मुसल्लत रखा, और कुरआने करीम के अनवार व बरकतों को उसके दिल में दाख़िल न होने दिया, तो उसके दिल में ईमान कहां से आयेगा, उसके दिल में इस्लाम की मुहब्बत कहां से आयेगी, उसके दिल में आख़िरत की फ़िक्र कैसे पैदा होगी, फिर तो वही माद्दा परस्त इन्सान पैदा होगा जो हमें चारों तरफ़ घूमता हुआ नज़र आ रहा है, जिसको अल्लाह के हुज़ूर खड़े होने का एहसास भी नहीं, जो दूसरों पर ज़ुल्म ढाता है, दूसरों की खाल खींचता है।

अगर अपने बच्चों के मुस्तक़्बिल (भविष्य) पर रहम करना है तो ख़ुदा के लिये जब तक इन्हें कुरआने करीम की तालीम न दिला दें उस वक़्त तक उनको किसी और काम में न लगायें, आजकी महफ़िल से अगर हम यही फ़ायदा उठा लें कि हम यह अ़हद करके यहां से जायें और हम में से हर शख़्स यह पक्का इरादा करके जाये कि अपने बच्चों को जब तक कुरआने करीम नहीं पढ़ायेंगे उस वक़्त तक किसी और काम में नहीं लगायेंगे, तो मैं समझता हूं कि इन्शा अल्लाह तआ़ला इस मज्लिस का बड़ा फ़ायदा हमने हासिल कर लिया, वर्ना तक़रीरें और बातें तो दुनिया में बहुत होती हैं, आप हज़रात तशरीफ़ लाये मेरी जो समझ में आया वह मैंने अ़र्ज़ किया।

नशिस्तन्द व गुफ़्तन्द व बरख़ास्तन्द

एक कान से सुना दूसरे कान से निकाल कर और दामन झाड़ कर चल दिये, इससे कुछ हासिल नहीं, कुछ फ़ायदा नहीं। अगर कम से कम यह इरादा लेकर चलें कि अपनी हद तक तमाम बच्चों को कुरआने करीम पढ़ायेंगे और अपने मिलने जुलने वालों दोस्तों और अ़ज़ीज़ व अक़ारिब को भी इस तरफ़ मुतवज्जह करेंगे, तो इन्शा

अल्लाह इसका फ़ायदा होगा, अल्लाह तआला ने जो बातें कहलवा दी हैं, मुझे भी अमल की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये और आप हज़रात को भी अमल की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, और इस मज्लिस में ख़ैर व बर्कत अता फ़र्माये और इस मदर्से को दिन दुगनी और रात चौगुनी तरक़्क़ियों से नवाज़े और मुसलमानों को इससे फ़ायदा उठाने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعواناان الحمد للہ رب العالمین

दिल की बीमारियां और रूहानी तबीब की ज़रूरत

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔

اما بعد: قال النبی صلی الله علیه وسلم: الا ان فی الجسد مضغةً اذا صلحت صلح الجسد كله، واذا فسدت فسدت الجسد كله، الا وهی القلب:

(اتحاد المتقين)

अख़्लाक़ की अहमियत

अख़्लाक़ की दुरूस्ती और उसको अल्लाह जल्ल जलालुहू के अह्काम के मुताबिक़ बनाना इतना ही ज़रूरी है और इतना ही अहम और वाजिब है जितना कि इबादतों का बजा लाना ज़रूरी है, बल्कि ज़रा और गहरी नज़र से देखा जाये तो यह नज़र आयेगा कि इबादात, मामलात और मुआशरत के जितने अह्काम हैं, उनमें से कोई भी हुक्म उस वक़्त तक सही तरीक़े से बजा नहीं लाया जा सकता, जब तक अख़्लाक़ दुरूस्त न हों, अगर अख़्लाक़ दुरूस्त न हों तो कभी कभी यह नमाज़ रोज़ा भी बेकार हो जाता है, न सिर्फ़ बेकार बल्कि उल्टा वबाल बन जाता है, इसी लिये अख़्लाक़ की दुरूस्ती और उसको अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अह्काम के मुताबिक़ बनाना अ़मली ज़िन्दगी की बुनियाद है, यह बुनियाद न हो तो इमारत खड़ी नहीं हो सकती।

अख़्लाक़ क्या चीज़ हैं?

अख़्लाक़ का मतलब आज कल उर्फ़े आम में कुछ और समझा जाता है और जिस अख़्लाक़ की मैं बात कर रहा हूं वह कुछ और है. उर्फ़े आम में अख़्लाक़ इसको कहते हैं कि ज़रा मुस्कुरा कर किसी आदमी से मिल लिये, उसके साथ ख़न्दा पेशानी से, नरमी से बात कर ली, उसको कहते हैं कि यह अच्छे अख़्लाक़ का आदमी है, इसके अख़्लाक़ बहुत अच्छे हैं। लेकिन जिस अख़्लाक़ की मैं बात कर रहा हूं और जिस अख़्लाक़ का मुतालबा दीन ने हमसे किया है, उसको मफ़्हूम इससे कहीं ज़्यादा फैलाव रखता है, सिर्फ़ इतनी बात नहीं है कि लोगों से ख़न्दा पेशानी से मिल लिये, यह लोगों से ख़न्दा पेशानी से मिलना भी उसका एक नतीजा होता है लेकिन असल अख़्लाक़ यह नहीं है। बल्कि असल अख़्लाक़ इन्सान के बातिन की, उसके दिल की, उसकी रूह की एक सिफ़त है। इन्सान के बातिन के अन्दर मुख़्तलिफ़ क़िस्म के जज़्बात, ख़्यालात, ख़्वाहिशात परवान चढ़ते हैं, उनको अख़्लाक़ कहते हैं और उनको दुरूस्त करने की ज़रूरत पर ज़ोर दिया गया है।

रूह की अहमियत

इस बात को ज़रा वज़ाहत के साथ समझने के लिये यह जानना ज़रूरी है कि इन्सान किस को कहते है? इन्सान नाम है जिस्म और रूह के मजमूए का। सिर्फ़ जिस्म का नाम इन्सान नहीं, बिल्क इन्सान वह जिस्म है जिसमें रूह मौजूद हो। फ़र्ज़ करो कि एक शख़्स का इन्तिक़ाल हो गाया, बताइये कि उसके ज़ाहिरी जिस्म में क्या फ़र्क़ वाक़ेअ़ हुआ? आंख उसी तरह है, नाक उसी तरह मौजूद है, कान उसी तरह मौजूद हैं, ज़बान उसी तरह मौजूद है, चेहरा वैसा ही है, हाथ पांव वैसे ही हैं, सारा जिस्म जूं का तूं है लेकिन फ़र्क़ क्या पैदा हुआ? फ़र्क़ यह हुआ कि पहले उसके जिस्म के अन्दर रूह समाई हुई थी, अब वह रूह निकल गयी, और रूह निकल जाने से इन्सान, इन्सान नहीं रहता, लाश बन जाता है, जमादात में दाख़िल हो जाता है।

जल्दी से दफ़न कर दो

वही इन्सान जो रूह निकलने से पहले देखने वालों की निगाहों का प्यारा था, अ़ज़ीज़ था, लोग उससे मुहब्बत करते थे, ज़मीन जायदाद का मालिक था, बीवी बच्चों की देख भाल करने वाला था, दोस्त अहबाब का अ़ज़ीज़ था, सभी कुछ था, लेकिन इधर रूह जिस्म से निकली, उधर न तो ज़मीन जायदाद उसकी रही, न बीवी का शौहर रहा न बच्चों का ख़बरगीरी करने वाला रहा जो उससे मुहब्बत करते थे, उसको अच्छी निगाह से देखते थे, उसको अपने पास रखना चाहते थे, अब वे इस फ़िक्र में हैं कि जल्द से जल्द उसको उठा कर क़ब्र में पहुंचा कर ठिकाने लगायें। कोई कहे कि भाई यह तुम्हारा अ़ज़ीज़ है इसको ज़रा अपने घर में रख लो, तो कोई उसको रखने को तैयार नहीं, ज़्यादा से ज़्यादा एक दो दिन रखेगा, बहुत कोई रख लेगा तो बर्फ़ वग़ैरह लगा कर हफ़्ता भर रख लेगा, लेकिन इससे ज़्यादा कोई नहीं रखेगा। अब सब फ़िक्र में हैं कि जल्द से जल्द उठा कर उसको क़ब्र में फेंको और दफ़न करो। वही मुहब्बत करने वाले जो दिन रात उसकी आंख और अबरू को देखते थे, उसके इशारों पर नाचते थे, रूह निकले के बाद अब यह हालत हो गयी है कि बेटा अपने हाथ से बाप को क़ब्र में रखना चाहता है और मिट्टी देकर जल्द से जल्द उसको दफ़न कर देना चाहता है, बल्कि किसी ने क़िस्सा बताया की अख़्बार में छपा था कि एक आदमी को जिसे शायद सक्ता हो गया था, लोगों ने ग़लती से मुर्दा समझ कर दफ़न कर दिया, जब सक्ता ख़त्म हुआ तो वह बेचारा क़ब्र फाड़ कर किसी तरह घर पहुंचा, जब उसने दस्तक दी तो बाप ने अन्दर से पूछा कि कौन है, जब उसने अपना नाम बताया तो बाप घर से लाठी लेकर निकला और लाठी से उसको मारा कि यह उसका भूत कहां से आ गया। जो ग़रीब पहले नहीं मरा था, अब लाठी से मर गया।

आख़िर यह क्या इन्क़िलाबे अ़ज़ीम वाक़ेअ़ हुआ कि सारा जिस्म

उसी तरह है जैसे पहले था मगर अब कोई उसको घर में रखने को तैयार नहीं? फ़र्क़ यह वाक़िअ़ हुआ कि उसके जिस्म से रूह निकल गयी, मालूम यह हुआ कि इन्सान के जिस्म के अन्दर असल चीज़ उसकी रूह है, जब तक यह रूह इन्सान के अन्दर मौजूद है उस वक़्त तक इन्सान इन्सान है, लेकिन जब यह रूह निकल जाये तो फिर वह इन्सान नहीं है, महज़ एक लाश है जिससे किसी को कोई ताल्लुक़ नहीं, सब इस फ़िक्र में हैं कि इसको जल्द से जल्द क़ब्रिस्तान में लेजा कर दफ़न कर दें।

रूह की बीमारियां

जिस तरह इन्सान के जिस्म के अन्दर बहुत सी सिफ़ात होती हैं, कि कभी कभी जिस्म सेहत मन्द है, ख़ूबसूरत है, ताक़तवर है, तवाना है और बाज़ दफ़ा जिस्म नहीफ़, कमज़ोर, दुबला पतला, बीमार, बद–सूरत है, इसी तरह इन्सान की रूह की भी कुछ सिफ़ात होती हैं। कभी कभी रूह ताक़तवर होती है और कभी कभी कमज़ोर होती है। कभी कभी रूह अच्छी सिफ़ात की मालिक होती है और कभी कभी ख़राब सिफ़ात की मालिक होती है, जिस इन्सान के जिस्म को बीमारियां लगती हैं, कि कभी बुख़ार हो गया, कभी पेट ख़राब हो गया, कभी क़ब्ज़ हो गया, कभी दस्त आ गये, इसी तरह रूह को भी बीमारियां लगती हैं। रूह को क्या बीमारियां लगती हैं? रूह को ये बीमारियां लगती हैं कि कभी उस में तकब्बुर पैदा हो गया, कभी उसमें हसद परवरिश पाने लगा, कभी उसमें बुग्ज़ पैदा हो गया, कभी उसमें नाशुक्री पैदा हो गयी, ये सारी की सारी रूह की बीमारियां हैं।

रूह का हुस्न व जमाल

इसी तरह जैसे इन्सान के जिस्म की ख़ूबसूरती है, जैसे कहते हैं, कि उसका चेहरा बहुत ख़ूबसूरत है, उसकी आंखें बड़ी ख़ूबसूरत हैं, उसका जिस्म बहुत ख़ूबसूरत है। इसी तरह रूह की भी कुछ ख़ूबसूरती है, इसका भी कुछ जमाल है, इसका भी कुछ हुस्न है। रूह का हुस्न

क्या है? रूह का हुस्न यह है कि इन्सान के अन्दर तवाज़ो हो, सब्र व शुक्र हो, इख़्लास हो, खुदपसन्दी न हो, रियाकारी (दिखावा) न हो, यह सब रूह का हुस्न व जमाल है।

जिस्मानी इबादतें

अल्लाह तआ़ला ने हमें और आपको बहुत से अह्काम दिये हैं, जिनका ताल्लुक़ हमारे ज़ाहिरी जिस्म से है, जैसे नमाज़ है कि नमाज़ किस से पढ़ी जाती है? जिस्म को कभी खड़ा किया जाता है, कभी रुकूअ़ में चले जाते हैं, कभी सज्दे में चले जाते हैं, कभी सलाम फेरते हैं, ये सारी हरकतें जिस्म के ज़रिये अन्जाम पाती हैं, तो यह एक जिस्मानी इबादत है। रोज़ा किस तरह रखते हैं? एक मुक़र्ररा वक़्त तक भूखे प्यासे रहते हैं, यह भी एक जिस्मानी इबादत है, माल की एक ख़ास मिक़्दार (मात्रा) ग़रीब को देना फ़र्ज़ किया गया है, जिसको ज़कात कहते हैं। यह भी अपने हाथ से दी जाती है और हज भी एक जिस्मानी और माली इबादत है। हज के अन्दर मेह्नत करनी पड़ती है, सफ़र करना पड़ता है, ख़ास अर्कान अन्जाम देने पड़ते हैं ये सारे काम जिस्म से अदा किये जाते हैं इसलिये यह भी एक जिस्मानी इबादत है।

तवाज़ो दिल का एक फ़ेल है

जिस तरह ये सारी इबादतें अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हमारे जिस्म से मुताल्लिक़ रखी हैं, इसी तरह बहुत से फ़राइज़ हमारी रूह और बातिन से मुताल्लिक़ रखे हैं, जैसे यह हुक्म दिया कि हर इन्सान को तवाज़ो इख़्तियार करनी चाहिये, अब यह तवाज़ो जिस्म का फ़ेल नहीं है, यह दिल का फ़ेल है, बातिन का फ़ेल है, रूह का फ़ेल है, अल्लाह तआ़ला ने हुक्म दिया कि यह सिफ़त अपने दिल में पैदा की जाये।

बहुत से बे पढ़े लिखे लोग तावाज़ो का यह मतलब समझते हैं कि कोई मेह्मान आया तो उसकी ख़ातिर तवाज़ो कर दो, कुछ खाना वग़ैरह उसको खिला दो, इसको तवाज़ो कहते हैं, तवाज़ो का यह

मतलब नहीं है। जो कुछ पढ़े लिखे हैं वे भी तवाज़ो का मतलब समझते हैं इन्किसार, दूसरों से इन्किसारी के साथ पेश आना, बाज़ लोग यह समझते हैं कि आदमी की ज़रा गर्दन झुकी हुयी हो, कुछ सीना मुड़ा हो, तो जो आदमी इस तरह लोगों से मिलता है, उसको कहते हैं "बड़ा मुन्किसिरुल मीज़ाज आदमी है, बहुत मुतवाज़े है।"

ख़ूब समझ लीजिये कि तवाज़ो का कोई ताल्लुक़ जिस्म से नहीं है, तवाज़ो का ताल्लुक़ दिल से और रूह से है, इन्सान अपने दिल में आपने आपको बे हक़ीक़त समझे कि मेरी कोई हक़ीक़त नहीं है, मेरी कोई कुदरत नहीं है, मैं तो एक बेकस, बेबस बन्दा हूं। यह ख़्याल दिल के अन्दर पैदा हो जाये, इसको कहते हैं तवाज़ो और अल्लाह तआ़ला ने इसी का हुक्म दिया है।

इख़्लास दिल की एक कैफ़ियत है

अल्लाह तबारक व तआ़ला ने इख़्लास का हुक्म दिया है कि अपने अन्दर इख़्लास पैदा करो, इबादतों में इख़्लास पैदा करो, जो काम करो अल्लाह जल्ल जलालुहू की रज़ामन्दी और ख़ुश्नूदी के लिये करो, यह है इख़्लास, इख़्लास ज़बान से कहने से नहीं हासिल होता, यह दिल की एक कैफ़ियत है, बातिन की एक सिफ़त है, जिसको हासिल करने का हमें हुक्म दिया गया है।

शुक्र दिल का अ़मल है

अल्लाह तबारक व तआ़ला ने शुक्र का हुक्म दिया है कि जब कोई नेमत तुम्हें हासिल हो तो अल्लाह जल्ल जलालुहू का शुक्र अदा करो, यह शुक्र भी इन्सान के दिल का फ़ेल है, इन्सान की रूह का फ़ेल है, जितना शुक्र अदा करेगा रूह इतनी ही ज़्यादा ताक़तवर होगी।

सब्र की हक़ीक़त

अल्लाह तआ़ला ने सब्र का हुक्म दिया है अगर कोई नागवार बात पेश आ जाये तो समझो कि अल्लाह जल्ल जलालुहू की तरफ़ से है, जो कुछ भी हुआ है अल्लाह तबारक व तआ़ला की हिक्मत से हुआ है,

उसकी चाहत के मुताबिक़ है, चाहे यह मुझ को कितना ही नागवार हो लेकिन अल्लाह तबारक व तआ़ला की मसलिहत इसी में थी, इन्सान हर नागवार वाक़िए के वक़्त यह सोचे और इसका एहसास दिल में पैदा करे, इसको सब्र कहते हैं।

अख़्लाक़े बातिना का हासिल करना फ़र्ज़ है

इसलिये बहुत से अहकाम ऐसे हैं जो अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हमारी रूह और हमारे बातिन से मुताल्लिक़ हमको अ़ता फ़रमाये हैं। याद रखिये कि सब्र के मौक़े पर सब्र करना ऐसा ही फ़र्ज़ है जैसा कि नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है, शुक्र के मौक़े पर शुक्र करना ऐसा ही फ़र्ज़ है जैसा कि रोज़ा रखना फ़र्ज़ है, इख़्लास के मौक़े पर इख़्लास ऐसा ही फ़र्ज़ है जैसा कि ज़कात देना फ़र्ज़ है, ये सब भी फ़रायज़ हैं जो अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हमें अ़ता फ़रमाये हैं।

बातिनी बीमारियां हराम हैं

बहुत से काम ज़ाहिरी और जिस्मानी एतिबार से गुनाह क़रार दिये गये हैं। जैसे झूठ बोलना, ग़ीबत करना, रिश्वत लेना, सूद खाना, डाका डालना। ये सारे के सारे काम गुनाह हैं जो हमारे ज़ाहिरी जिस्म से मुताल्लिक़ हैं, हमारे आज़ा (अंगों) से ज़ाहिर होते हैं, इसी तरह अल्लाह तबारक व तआ़ला ने बहुत से बातिनी कामों को भी गुनाह क़रार दिया है, जैसे तकब्बुर एक बातिनी बीमारी है जो हाथ पांव से अन्जाम नहीं दी जाती, यह इन्सान के बातिन का एक रोग है, अल्लाह तआ़ला ने इसको हराम क़रार दिया है और यह इतना ही हराम है जितना शराब पीना हराम है, जितना सुअर खाना हराम है, जितना ज़िना और बदकारी करना हराम है। इसी तरह हसद भी एक बातिनी बीमारी है और इसको भी अल्लाह तआ़ला ने हराम क़रार दिया है और यह भी इतना ही हराम है जितने वे गुनाह हराम हैं जिनका मैंने पहले आपके सामने ज़िक्र किया है।

ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तबारक व तआ़ला ने इन्सान के बातिन

और रूह से मुताल्लिक भी कुछ अह्काम रखे हैं, कुछ सिफ़ात को पैदा करने का हुक्म दिया है, और कुछ सिफ़ात से बचने का हुक्म दिया है, जिन सिफ़ात को अल्लाह तबारक व तआला ने पैदा करने का हुक्म दिया है, वे सिफ़ात अपने अन्दर पैदा कर ले, और जिन सिफ़ात से बचने का हुक्म दिया है वे सिफ़ात अपने बातिन से अलग कर ले तो कहेंगे कि इसके अख़्लाक़ दुरुस्त हो गये। अख़्लाक़ इन्हीं बातिनी कैफ़ियतों और रूह की सिफ़ात का नाम है जिनका ऊपर ज़िक्र किया गया है। अच्छे अख़्लाक़ जिनको अपने अंदर पैदा करना चाहिये, उनको अख़्लाक़े फ़ाज़िला (बेह्तरीन अख़्लाक़) और बुरे अख़्लाक़ जिन को दूर करना चाहिये, उनको अख़्लाक़े रज़ीला (बुरे अख़्लाक़) कहते हैं।

उम्मीद है कि अब यह बात समझ में आ गयी होगी कि अख़्लाक़ का मतलब एक दूसरे से अच्छी तरह बात कर लेना या अच्छी तरह मुस्कुरा देना नहीं है, यह उसका एक नतीजा होता है। क्योंकि जब अख़्लाक़ दुरुस्त हो जाते हैं तो इन्सान का रवैया हर दूसरे इन्सान के साथ बेह्तर हो जाता है, लेकिन बुनियादी तौर पर इसको अख़्लाक़ नहीं कहते। अख़्लाक़ की हक़ीक़त यह है कि इन्सान का बातिन दुरुस्त हो जाये, अख़्लाक़े फ़ाज़िला पैदा हो जायें, अख़्लाक़े रज़ीला दूर हो जायें और इन्सान का बातिन अल्लाह तबारक व तआला के अह्काम के मुताबिक़ ढल जाये।

गुस्से की हक़ीक़त

अख़्लाक़ की इस्लाह कैसे होती है? यह बात एक मिसाल के ज़रिये आसानी के साथ समझ में आ जायेगी। जैसे गुस्सा इन्सान के बातिन की एक सिफ़त है, यह गुस्सा इन्सान के दिल में पैदा होता है, फिर इसका मुज़ाहरा कभी कभी हाथ पांव से होता है, कभी कभी ज़बान से, जब गुस्सा आ गया और गुस्से से मग़लूब हो गया तो चेहरा सुर्ख़ हो गया, रगें तन गयीं, ज़बान बेक़ाबू होकर ओल फ़ोल बकने लगी, हाथ पांव चलने लगे। यह गुस्से का नतीजा है, लेकिन असल गुस्सा

उस कैफ़ियत का नाम है जो इन्सान के दिल में पैदा होती है, यह गुस्सा ऐसी चीज़ है कि बेशुमार बातिनी ख़राबियों की बुनियाद और जड़ है इसकी वजह से बहुत से गुनाह ज़ाहिर होते हैं और बहुत सी बातिनी बीमारियां पैदा होती हैं।

गुस्सा न आना एक बीमारी है

अगर यह गुस्सा इन्सान में बिल्कुल न हो, कोई कुछ भी करता रहे, लेकिन इसको कभी गुस्सा आता ही नहीं, यह भी एक बीमारी है। अल्लाह तआला ने इन्सान को गुस्सा इस मक़्सद के लिये दिया है कि इन्सान अपना, अपनी जान का, अपनी आबरू का, अपने दीन का दिफ़ा कर सके। अब अगर कोई शख़्स पिस्तौल ताने खड़ा है और उसकी जान लेना चाहता है और उन साहिब को गुस्सा आता ही नहीं, यह बीमारी है। अगर कोई आदमी (अल्लाह की पनाह में रखे) नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी करता है तो उस वक़्त एक आदमी को गुस्सा आता ही नहीं। इसके मायने हैं कि यह बीमार है, यह ऐसे मौक़े थे कि गुस्सा आना चाहिये था, अगर नहीं आ रहा है तो यह बीमारी है।

गुस्से में भी दरमियाना पन मतलूब है

और अगर गुस्सा एतिदाल (दरमियाने दर्जे) से ज़्यादा है तो यह भी बीमारी है, गुस्सा इसलिये आये ताकि दूसरे आदमी के शर से अपनी हिफ़ाज़त कर सके, इस हद तक गुस्सा सही है। अब अगर गुस्सा करने की जितनी ज़रूरत थी उससे ज़्यादा कर रहा है, जैसे एक थप्पड़ मार देने से काम चल सकता था लेकिन अब यह गुस्से में आकर एक थप्पड़ के बजाये मारे चला जा रहा है, यह गुस्सा हद्दे एतिदाल से ज़्यादा है और गुनाह है। इसी लिये गुस्सा अगर कम हो तो यह भी बातिन की बीमारी है और ज़्यादा हो तो यह भी बातिन की बीमारी है। गुस्सा एतिदाल की हद में होना चाहिये कि ज़रूरत के मौक़े पर आये और बिला ज़रूरत न आये और अगर बिला ज़रूरत आये भी तो आदमी

उसको इस्तेमाल न करे।

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु और ग़ुस्सा

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु का वाकिआ है कि एक यहूदी ने हुज़ूर नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी भरा कलिमा कह दिया। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु कहां सुनने वाले थे, उस यहूदी को गिरा कर उसके सीने पर चढ़ बैठे, यहूदी ने जब देखा कि अब कुछ और नहीं कर सकता तो उसने ज़मीन पर लेटे लेटे हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु के चेहरा–ए–मुबारक पर थूक दिया। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़ौरन उसे छोड़ कर अलग हो गये, किसी ने पूछा कि यह आपने क्या किया? अब तो उसने और भी गुस्ताख़ी की, उसको और मारना चाहिये था। फ़रमाया कि "असल में बात यह है कि पहले मैंने उसको इसलिये सज़ा दी थी कि उसने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी की थी। उस वक़्त मेरा ग़ुस्सा अपनी ज़ात के लिये नहीं था बल्कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इज़्ज़त की हिफ़ाज़त के लिये था, इस वास्ते मैं उस पर चढ़ बैठा। जब उसने मुझ पर थूका तो मेरे दिल में अपनी ज़ात के लिये ग़ुस्सा पैदा हुआ कि इसने मेरे मुंह पर क्यों थूका? अपनी ज़ात का इन्तिक़ाम लेने का जज़्बा मेरे दिल में पैदा हुआ, उस वक़्त मुझे ख़्याल आया कि अपनी ज़ात के लिये इन्तिक़ाम लेना कोई अच्छी बात नहीं है। नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत यह है कि उन्हों ने अपनी ज़ात के लिये कभी किसी से इन्तिक़ाम नहीं लिया। इसलिये मैं उसे छोड़ कर अलग खड़ा हो गया"। यह है ग़ुस्से में एतिदाल (दरमियाना पन) कि पहले ग़ुस्से का सही मौक़ा था तो ग़ुस्सा आया और उस पर अ़मल किया और दूसरे ग़ुस्से का सही मौक़ा नहीं था इसलिये उस पर अ़मल नहीं किया और उस यहूदी को छोड़ कर अलग खड़े हो गये।

एतिदाल की हद की ज़रूरत

इन्सान के बातिन के जितने भी अख़्लाक़ हैं उन सब का यही हाल है कि अपनी ज़ात में वे बुरे नहीं होते, जब तक वे हद्दे एतिदाल में रहें उस वक़्त तक वे सही हैं लेकिन अगर एतिदाल से कम हो गये तो वह बीमारी और एतिदाल से ज़्यादा हो गये तो वह बीमारी। इस्लाहे नफ़्स के मायने यह होते हैं कि इन अख़्लाक़ को एतिदाल पर रखा जाये, न कम हों न ज़्यादा हों।

दिल की अहमियत

इसी लिये नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़र्माया कि:

"الا ان فی الجسد لمضغة اذا صلحت صلح الجسد كله واذا فسدت فسد الجسد كله، الا وهی القلب" (اتحاف)

यानी ख़ूब याद रखो कि इन्सान के जिस्म में एक लोथड़ा है अगर वह सही हो जाये तो सारा जिस्म सही हो जाता है और अगर वह ख़राब हो जाये तो सारा जिस्म ख़राब हो जाता है। फिर फ़रमाया कि ख़ूब सुन लो कि वह लोथड़ा जिसकी वजह से सारा जिस्म सही या ख़राब होता है वह इन्सान का दिल है। मगर उस लोथड़े से वह गोश्त का लोथड़ा मुराद नहीं है इसलिये कि अगर दिल को चीर कर देखो तो उसमें ये बीमारियां नज़र नहीं आयेंगी, न तकब्बुर नज़र आयेगा, न हसद नज़र आयेगा, न बुग़्ज़ नज़र आयेगा। और अगर डाक्टर के पास जाओ तो वह दिल की ज़ाहिरी बीमारियां चेक करके बता देगा कि उसकी धड़कन सही है या नहीं है, रगें काम कर रही हैं या नहीं, इसमें ख़ून की सप्लाई सही हो रही है या नहीं, लेकिन ये तमाम चीज़ें जो चेक—अप और आलात के ज़रिये मालूम की जा सकती हैं, ये दिल के सिर्फ़ ज़ाहिरी अमल का नक़्शा पेश करती हैं।

यह अनदेखी बीमारियां हैं

लेकिन इन्सान के दिल के साथ कुछ चीज़ें ऐसी जुड़ी हैं जो अनदेखी हैं, आंखों से नज़र नहीं आतीं, वे यही हैं जिनका मैंने ऊपर

ज़िक्र किया, यानी दिल में शुक्र है या नही? हसद है या नहीं? बुगूज़ है या नहीं? सब्र व शुक्र की कैफ़ियतें हैं या नहीं? ये ऐसी चीज़ें हैं जो ज़ाहिरी बीमारियों का डाक्टर देख कर नहीं बता सकता और कोई ऐसी मशीन ईजाद नहीं हुई है जिसके ज़रिये चेक करके बता दिया जाये कि इसको यह बातिनी बीमारी है।

दिल के डाक्टर सूफ़िया–ए–किराम

इस बीमारी के डाक्टर, इसकी तश्ख़ीस करने वाले, इसका इलाज करने वाली कोई और ही क़ौम है, यही वह क़ौम है जिनको "हज़राते सूफ़िया–ए–किराम" कहते हैं। जो अख़्लाक़ के इल्म के माहिर होते हैं बातिन की बीमारियों की तश्ख़ीस और उनका इलाज करते हैं, यह एक मुस्तक़िल फ़न है, एक मुस्तक़िल इल्म है, इसको भी इसी तरीक़े से पढ़ा और पढ़ाया जाता है जिस तरह डाक्टरी पढ़ी और पढ़ाई जाती है।

फिर आपने ज़ाहिरी बीमारियों में देखा होगा कि बहुत सी ज़ाहिरी बीमारियां ऐसी होती हैं कि जिनका इन्सान को ख़ुद पता लग जाता है, बुख़ार हो गया तो मालूम होगा कि गरमी लग रही है, बदन में दर्द है, मालूम होगा कि बुख़ार है, बीमार ख़ुद भी पहचान लेगा कि बुख़ार है और ख़ुद नहीं पहचान सकेगा तो थरमा मीटर लगा कर देख लेगा, उससे पता चल जायेगा कि बुख़ार है। अगर ख़ुद भी नहीं पहचान सका, उसके घर वाले ज़ाती आलात से भी नहीं पहचान सके तो डाक्टर के पास चला जायेगा, वह डाक्टर बता देगा कि फ़लां बीमारी है।

लेकिन बातिन की बीमारियां ऐसी हैं कि न तो बहुत सी बार मरीज़ को ख़ुद पता लगता है कि मेरे अन्दर यह बीमारी है और न कोई आला ऐसा इन्सान के पास मौजूद है जिस से पता लग जाये कि तकब्बुर का टमप्रेचर क्या है? और ज़ाहिरी डाक्टर के पास जाये तो वह भी बेचारा नहीं बता सकता कि इसके अन्दर यह बीमारी है कि नहीं? इसके लिये

ज़रूरी है कि आदमी किसी बातिन के मुआलिज के पास जाकर तश्ख़ीस कराये कि मेरे अन्दर तकब्बुर है या नहीं।

तवाज़ो या तवाज़ो का दिखावा

तवाज़ो का मतलब आपकी समझ में आ गया कि तवाज़ो का मतलब यह है कि अपने आपको बे हक़ीक़त समझना, इसको उर्फ़े आम में इंकिसारी भी कहते हैं। अब सुनिये, हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि कभी कभी लोग कहते हैं कि मैं तो बड़ा बेकार आदमी हूं, मैं तो बे हक़ीक़त हूं, जाहिल हूं, बहुत गुनाहगार हूं, बड़ा नाचीज़ हूं, मेरी कोई हक़ीक़त नहीं है। इससे बज़ाहिर शुबह यह होता है कि यह बेचारा बहुत तवाज़ो कर रहा है, कि अपने आपको बेहक़ीक़त, नाकारा, नाचीज़, जाहिल और गुनाहगार समझ रहा है।

बज़ाहिर देखने में यह तवाज़ो मालूम हो रही है लेकिन हज़रत फ़रमाते हैं कि कस्रत से ऐसा होता है कि जो शख़्स यह अल्फ़ाज़ कह रहा होता है हक़ीक़त में वह मुतवाज़े नहीं होता बल्कि उसमें दो बीमारियां होती हैं, एक तकब्बुर और दूसरी तवाज़ो का दिखावा। यानी यह जो कह रहा है कि मैं बड़ा बेहक़ीक़त आदमी हूं, जाहिल आदमी हूं, यह सच्चे दिल से नहीं कह रहा, बल्कि इसलिये कह रहा है ताकि देखने वाले इसको मुतवाज़े समझें और कहें कि यह तो बड़ा मुंकसिरुल मिज़ाज है।

ऐसे शख़्स की आज़माइश का तरीक़ा

हज़रत फ़रमाते हैं कि जो शख़्स यह कह रहा हो कि मैं बड़ा गुनाहगार, जाहिल, नाकारा और नाचीज़ हूं, उसके इम्तिहान का तरीक़ा यह है कि उसको अगर उस वक़्त दूसरा आदमी यह कह दे कि बेशक आप नाकारा भी हैं और नाचीज़ भी, गुनाहगार भी हैं और जाहिल भी और बे हक़ीक़त भी, फिर देखो कि उस वक़्त उसके दिल पर क्या गुज़रेगी? क्या उसका शुक्र गुज़ार होगा कि आपने बड़ी अच्छी बात

कही? मेरे ख़्याल में तक़रीबन सौ फ़ीसद मामलात में अगर दूसरा कह देगा कि बेशक आप ऐसे ही हैं तो तबीयत को बड़ी नागवारी होगी कि देखो इसने मुझे नाचीज़, नाकारा और जाहिल कह दिया।

मालूम हुआ कि सिर्फ़ ज़बान से कह रहा था कि नाकारा है, नाचीज़ है, जाहिल है, लेकिन दिल में यह ख़्याल नहीं था, बल्कि मक़सद यह था कि जब मैं अपनी ज़बान से कहूंगा कि जाहिल हूं, नाकारा नाचीज़ हूं, तो सामने वाला यह कहेगा कि नहीं हज़रत! यह आपकी तवाज़ो है। आप तो हक़ीक़त में बड़े आ़लिम फ़ाज़िल आदमी हैं, बड़े मुत्तक़ी पारसा हैं। यह कहलवाने के लिये यह सब कुछ कह रहा है और दिखावा कर रहा है कि मैं बड़ा मुतवाज़े हूं, हक़ीक़त में दिल में तकब्बुर भरा हुआ है, दिखावा भरा हुआ है और ज़ाहिर यह कर रहा है कि मैं बहुत मुतवाज़े हूं।

आप अन्दाज़ा लगाइये कि इसको कौन पहचानेगा कि ये अल्फ़ाज़ सच्चे दिल से कहे जा रहे हैं या अन्दर बीमारी भरी हुयी है? इसको तो वही पहचान सकता है जो बातिनी बीमारियों का माहिर और मुआ़लिज हो। इसलिये ज़रूरत होती है मुआ़लिज के पास जाने की कि अक्सर ऐसा होता है कि इन्सान ख़ुद अपनी बातिनी बीमरियों को नहीं पहचान सकता।

दूसरों की जूतियां सीधी करना

एक साहिब मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की मज्लिस में आया करते थे। एक दिन वालिद साहिब ने देखा कि उन्हों ने ख़ुद अपनी मर्ज़ी से मज्लिस में आने वालों के जूते सीधे करने शुरू कर दिये, उसके बाद हर दफ़ा वह आकर पहले मज्लिस में आने वालों के जूते सीधे करते और फिर मज्लिस में बैठते। वालिद साहिब ने कई दफ़ा उनको यह काम करते देखा तो एक दिन उनको मना कर दिया कि यह काम मत किया करो। फिर बाद में बताया कि बात असल में यह थी कि यह बेचारा यह समझता था कि

मेरे अन्दर तकब्बुर है और उस तकब्बुर का इलाज अपनी राये से तज्वीज़ कर लिया कि लोगों के जूते सीधे करूंगा तो इससे मेरा तकब्बुर दूर होगा। तो वालिद साहिब फ़रमाते हैं कि इस इलाज से फ़ायदा होने के बजाये उसको उल्टा नुक़्सान होता, तकब्बुर और ख़ुद पसन्दी में इज़ाफ़ा होता। इसलिये कि जब जूते सीधे करने शुरू कर दिये, तो दिल व दिमाग़ में यह बात पैदा होती कि मैंने तो अपने आप को मिटा दिया, मैंने तवाज़ो की हद कर दी। इससे मज़ीद ख़ुद पसन्दी पैदा होती, इसलिये उसे रोक दिया कि तुम्हारा काम यह नहीं, और उसके लिये दूसरा इलाज तज्वीज़ फ़रमाया।

अब बताइयेः बज़ाहिर देखने में जो शख़्स दूसरों के जूते सीधे कर रहा है वह मुतवाज़े मालूम हो रहा है लेकिन जानने वाला जानता है कि यह काम हक़ीक़त में तकब्बुर पैदा कर रहा है, तवाज़ो से इसका ताल्लुक़ नहीं। इसलिये नफ़्स के अन्दर इतने बारीक नुक्ते होते हैं कि आदमी ख़ुद से अन्दाज़ा नहीं लगा सकता, जब तक किसी बातिनी बीमारियों के माहिर से रुजू न करे और वह न बताये कि तुम्हारा यह अ़मल अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुक़र्रर की हुयी हद के अन्दर है या नहीं? वही बता सकता है कि इस हद तक दुरुस्त है और इस हद से बाहर यह अ़मल दुरुस्त नहीं है।

तसव्वुफ़ क्या है?

यही वजह है कि आज तसव्वुफ़ नाम हो गाया इस बात का कि किसी पीर साहिब के पास चले गये, उनके हाथ पर हाथ रख दिया, बैअ़त कर ली और बैअ़त करने के बाद उन्हों ने कुछ वज़ीफ़े बता दिये कुछ औराद सिखा दिये कि सुबह को यह पढ़ा करो, शाम को यह पढ़ा करो, और अल्लाह अल्लाह ख़ैर सल्ला। अब न बातिन की फ़िक्र, न अख़्लाक़ दुरुस्त करने का एहतिमाम, न अख़्लाक़े फ़ाज़िला को हासिल करने का शौक़, न अख़्लाक़े रज़ीला ख़त्म करने की फ़िक्र। यह सब कुछ नहीं बस बैठे हुये वज़ीफ़े पढ़ रहे हैं और कभी कभी यह वज़ीफ़े

पढ़ना इन बीमारियों के अन्दर और ज़्यादा शिद्दत पैदा कर देता है।

वज़ीफ़ों व मामूलात की हक़ीक़त

इन वज़ीफ़ों, अज़्कार, मामूलात की मिसाल ऐसी है जैसे ताक़त देने वाली दवाएं। और मुक़व्वियात (ताक़त देने वाली दवाओं) का उसूल यह है कि अगर किसी के अन्दर बीमारी मौजूद है और बीमारी की हालत में वह मुक़व्वियात खाता रहे तो बहुत सी बार न सिर्फ़ यह कि उसको कुव्वत हासिल नहीं होती बल्कि बीमारी को कुव्वत हासिल होती है, बीमारी बढ़ जाती है, अगर दिल में तकब्बुर भरा हुआ है ख़ुद पसन्दी भरी हुई है और बैठ कर वज़ीफ़े घोंट रहा है और ज़िक्र बहुत कर रहा है तो कभी कभी इसके नतीजे में इस्लाह होने के बजाये तकब्बुर और बढ़ जाता है, इसलिये यह जो बताया जाता है कि जब भी कोई वज़ीफ़ा करो या ज़िक्र करो किसी शैख़ की रहनुमाई में करो, इसलिये कि शैख़ जानता है कि इससे ज़्यादा अगर बताऊंगा तो वह इसके अन्दर बीमारी पैदा करेगा। इस वास्ते वह उसको रोक देता है कि बस, अब मज़ीद ज़िक्र की ज़रूरत नहीं। हज़रत हकीमुल उम्मत रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने कितने आदमियों के लिये यह इलाज तज्वीज़ किया कि तमाम वज़ीफ़े और अज़्कार छोड़ दें, हज़रत रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने उनके तमाम मामूलात छुड़ा दिये, ख़ास हालात में जब देखा कि इसके लिये यह वज़ीफ़ा मुज़िर (नुक़सान दह) साबित हो रहा है तो वह छुड़ा दिया।

मुजाहदात का असल मक़्सद

लेकिन आज कल तसव्वुफ़ का और पीरी मुरीदी का सारा ज़ोर इस पर है कि मामूलात बता दिये गये कि फ़लां वक़्त यह ज़िक्र करना है, फ़लां वक़्त यह ज़िक्र करना है। बस! वह महज़ ज़िक्र के पीछे लगे हुये हैं, चाहे बातिन के अन्दर कितनी ही बीमारियां जोश मार रही हों। पहले ज़माने में सुफ़िया-ए-किराम के यहां मामूल था कि किसी शख़्स की इस्लाह का पहला क़दम यह होता था कि उसके अख़्लाक़ की इस्लाह करने की फ़िक्र करते, उसके लिये मुजाहदात करवाये जाते थे,

रियाज़तें होती थीं, रगड़ा जाता था, तब जाकर अन्दर की इस्लाह होती थी और उसके बाद इन्सान किसी क़ाबिल होता था।

शैख़ अ़ब्दुल कुद्दूस गंगोही रह० के पोते का वाक़िआ

शैख़ अ़ब्दुल कुद्दूस गंगोही रह्मतुल्लाहि अ़लैहि गंगोह के बड़े ऊंचे दर्जे के औलिया अल्लाह में से हैं। हमारे बुज़ुर्गों के शज्रे के अन्दर उनका आला दर्जे का वास्ता है। उनके एक पोते थे, जब तक शैख़ ज़िन्दा थे, पोते को फ़िक्र न हुयी सारी दुनिया आकर दादा से फ़ैज़ हासिल करती रही लेकिन वह साहिबज़ादगी की मौज में रहे और दादा की तरफ़ इस नुक़्ता–ए–नज़र से रुजू न किया कि अपनी इस्लाह करायें, जब शैख़ का इन्तिक़ाल हो गया तब उनको हसरत हुयी कि या अल्लाह! मैं कितना मह्रूम रह गया। कहां कहां से आकर सारी दुनिया फ़ैज़ उठा गयी, और मैं घर में रहते हुए कुछ भी हासिल न कर सका, और चिराग़ तले अन्धेरा। अब हसरत हुयी तो सोचा कि क्या करूं, तलाफ़ी कैसे हो, ख़्याल आया कि मेरे दादा से जिन लोगों ने इस्लाहे नफ़्स की यह दौलत हासिल की है उनमें से किसी की तरफ़ रुजू करूं, मेरे दादा के ख़ुलफ़ा में से कौन ऊंचे मक़ाम का बुज़ुर्ग है। मालूम हुआ कि बल्ख़ में एक ऊंचे मक़ाम के बुज़ुर्ग हैं, अब गंगोह कहां, कहां बल्ख़। कहां तो यह कि घर में दौलत मौजूद थी और हर वक़्त उनसे रुजू कर सकते थे वह न किया। आख़िर कार इसकी नौबत आयी कि बल्ख़ तक इतना लम्बा चौड़ा मशक़्क़त का सफ़र करें, अब चूंकि तलब सच्ची थी इसलिये सफ़र पर रवाना हो गये।

शैख़ के पोते का इस्तिक़बाल

उधर जब शैख़ के ख़लीफ़ा जो बल्ख़ में मुक़ीम थे मालूम हुआ कि मेरे शैख़ के पोते आ रहे हैं तो अपने शहर से बाहर निकल कर उन्हों ने बड़ा शाहाना इस्तिक़बाल किया। इक्राम के साथ घर लेकर आये, शानदार खाने पकवाये, आला दर्जे की दावत की, बहुत आला दर्जे का रिहाइश का इन्तिज़ाम किया क़ालीन बिछवाये और ख़ुदा जाने क्या कुछ

किया।

हम्माम की आग रोशन कीजिये

जब एक दो दिन गुज़र गये तो उन्हों ने कहा कि हज़रत आपने मेरे साथ बड़ी शफ़्क़त का मामला किया, बड़ा इक्राम फ़रमाया, लेकिन हक़ीक़त में मैं किसी और मक़्सद से आया था। पूछा क्या मक़्सद? कहा कि मक़्सद यह था कि आप मेरे घर से जो दौलत लेकर आये थे उस दौलत का कुछ हिस्सा मुझे भी इनायत फ़रमा दें, इसलिये हाज़िर हुआ था। शैख़ ने कहा "अच्छा! वह दौलत लेने आये हो?" कहा "जी हां!" कहा कि "अगर वह दौलत लेने आये हो तो यह ग़ालीचे, यह क़ालीन, यह ऐज़ाज़ व इक्राम, यह खाने पीने का इन्तिज़ाम सब ख़त्म कर दिया जाये, रिहाइश का इन्तिज़ाम जो आला दर्जे का किया गया था वह भी ख़त्म कर दिया जाये" उन्हों ने पूछा कि "अब क्या करूं?" फ़रमाया "हमारी मस्जिद के पास एक हम्माम है उसमें वुज़ू करने वालों के लिये लकड़ियां जला कर पानी गर्म किया जाता है, तुम वहां हम्माम के पास बैठा करो और लकड़ियां झोंक कर वुज़ू करने वालों के लिये पानी गर्म किया करो, बस तुम्हारा यही काम है" न बैअ़त, न वज़ीफ़ा, न ज़िक्र, न मामूलात, न कुछ और। उन्हों ने पूछा "रिहाइश कहां?" फ़रमाया "रात को जब सोना हो तो वहीं हम्माम के पास सो जाया करो"। कहां तो यह ऐज़ाज़ व इक्राम, इस्तिक़बाल हो रहा है, क़ालीन बिछ रहे हैं, खाने पक रहे हैं, दावतें हो रही हैं और कहां अब हम्माम झोंकने पर लगा दिये गये, अब हम्माम में बैठे हैं और आग में लकड़ियां झोंक रहे हैं।

अभी कसर बाक़ी है

लकड़ियां झोंकते झोंकते शैख़ ने एक दिन जुमादारनी को हिदायत की कि ऐसा करना कि "हम्माम के पास एक आदमी बैठा होगा यह कचरे का टोकरा लेकर उसके क़रीब से गुज़र जाना और इस तरह गुज़रना कि इस टोकरे की बू उसकी नाक में पहुंच जाये" अब वह टोकरा लेकर हम्माम के पास से गुज़री तो चूंकि यह साहिबज़ादे थे,

नवाबज़ादगी की ज़िन्दगी गुज़ारी थी, एक कड़ी निगाह उस पर डाली और कहा "तेरी यह मजाल कि तू यह टोकरा लेकर मेरे पास से गुज़रे, न हुआ गंगोह, वर्ना मैं तुझे बताता" शैख़ ने जुमादारनी को बुला कर पूछा कि "जब तू टोकरा लेकर गुज़री तो क्या हुआ?" उसने कहा कि "जी वह तो बहुत गुस्से हुये और उन्हों ने कहा कि गंगोह होता तो तुझे बहुत सख़्त सज़ा देता" कहा कि "ओह हो! अभी बहुत कसर बाक़ी है, अभी चावल गला नहीं"।

फिर कुछ दिन गुज़रे तो शैख़ ने जुमादारनी से कहा कि "अबके न सिर्फ़ वह टोकरा लेकर उनके क़रीब से गुज़रना बल्कि इस तरह गुज़रना कि उनके जिस्म से लग जाये और फिर मुझे बताना कि क्या हुआ" उसने यही किया। शैख़ ने पूछा कि "क्या हुआ?" उसने कहा कि "जी हुआ यह कि जब मैं टोकरा लेकर गुज़री और टोकरा बिल्कुल उनके जिस्म से रगड़ खाता हुआ गुज़रा तो उन्हों ने निहायत कड़वी निगाह से मेरी तरफ़ देखा, लेकिन ज़बान से कुछ नहीं कहा" शैख़ ने कहा "अल्हम्दु लिल्लाह! फ़ायदा हो रहा है।

अब दिल का शैतान टूट गया

फिर कुछ दिन बाद शैख़ ने कहा कि "अबके इस तरह गुज़रना कि टोकरा गिर जाये और इस तरह गिरे कि थोड़ा सा कचरा उनके ऊपर भी पड़ जाये और फिर मुझे बता देना कि उन्हों ने क्या कहा" उसने ऐसा ही किया, शैख़ ने पूछा कि "अब कैसा हुआ?" उसने कहा "जी! अब तो अजीब मामला हुआ, मैंने जो टोकरा गिराया तो थोड़ा सा कूड़ा उनके ऊपर भी पड़ा और मैं भी गिर गयी, मैं जो गिरी तो उनको अपने कपड़ों का तो होश नहीं था, मुझ से पूछने लगे कि चोट तो नहीं लगी?" फ़रमाया कि "अल्हम्दु लिल्लाह! अल्लाह का शुक्र है कि दिल में जो शैतान था, वह टूट गया"।

ज़न्जीर मत छोड़ना

अब उनको बुला कर ड्यूटी बदल दी। कहा कि "अब तुम्हारा वह

हम्माम का काम ख़त्म, अब तुम हमारे साथ रहा करो, और इस तरह कि हम कभी कभी शिकार के लिये जाते हैं तो हमारे शिकारी कुत्तों की ज़न्जीर पकड़ कर हमारे साथ चला करो"। अब ज़रा ऊंचा दर्जा अ़ता हुआ कि शैख़ के साथ सोहबत और साथ रहने का शर्फ़ भी अ़ता हो रहा है, लेकिन कुत्ते की ज़न्जीर थाम कर साथ चलने का हुक्म है। शिकार के दौरान कुत्तों ने कोई शिकार देख लिया और उसकी तरफ़ जो दौड़े तो चूंकि शैख़ का हुक्म था कि ज़न्जीर न छोड़ना इसलिये उन्हों ने ज़न्जीर नहीं छोड़ी। कुत्ते तेज़ भागे जा रहे हैं और यह ज़न्जीर छोड़ते नहीं, उसी हालत में ज़मीन पर गिर गये और कुत्तों के पीछे ज़मीन पर घिस्टते हुए चले जा रहे हैं, जिस्म पर कई ज़ख़्म लग गये और लहू लुहान हो गये।

वह दौलत आपके हवाले कर दी

रात को शैख़ ने अपने शैख़ हज़रत अ़ब्दुल कुद्दूस गंगोही रह० को ख़्वाब में देखा, उन्हों ने फ़रमाया कि "मियां! हमने तो तुमसे ऐसी मेहनतें नहीं ली थीं" उस वक़्त उनको तंबीह हुई, बुलाया और बुलाकर गले से लगाया और फ़रमाया "आप जो दौलत लेने आये थे और जो दौलत आपके घर से अल्लाह तआ़ला ने मुझे अ़ता फ़रमाई थी, अल्हम्दु लिल्लाह! मैंने सारी दौलत आपके हवाले कर दी, दादा की विरासत आपकी तरफ़ मुन्तक़िल हो गयी, अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से अब आप इत्मीनान से वतन वापस तशरीफ़ ले जायें"।

इस्लाह का असल मक़्सद

अ़र्ज़ करने का मक़्सद यह था कि हज़राते सूफ़िया-ए-किराम का असल काम अन्दर की बीमारियों का इलाज था। महज़ वज़ीफ़े, ज़िक्र, तसबीह, मामूलात नहीं थे। यह ज़िक्र, वज़ीफ़े तसबीह, मामूलात, ये सब बतौर मुक़व्वियात के हैं। यह इस्लाह के अ़मल में मदद करने के लिये करवाये जाते थे, लेकिन असल मक़्सद यह था कि बातिन की बीमारियां दूर हों। तकब्बुर दिल से निकले, हसद दिल से निकले, बुग़्ज़ दिल से

निकले, ख़ुद पसन्दी दिल से निकले, निफ़ाक़ दिल से निकले, दिखावे का शौक़ दिल से निकले, मर्तबे और ओहदे की मुहब्बत दिल से निकले, दुनिया की मुहब्बत दिल से निकले, दिल को इन चीज़ों से साफ़ करना असल मक़सूद है। अल्लाह तआला का ख़ौफ़ पैदा हो, अल्लाह तआला से उम्मीद बंधे, अल्लाह तआला पर भरोसा हो, तवक्कुल हो, इस्तिक़ामत हो, इख़्लास हो, अल्लाह तबारक व तआला के लिये तवाज़ो हो, ये चीज़ें पैदा करना तसव्वुफ़ का असल मक़सूद है।

बातिन का सुधार ज़रूरी क्यों?

लोग समझते हैं कि तसव्वुफ़ शरीअत से कोई अलग चीज़ है। ख़ूब समझ लो कि यह शरीअत का ही एक हिस्सा है। शरीअत इन्सान के ज़ाहिरी आमाल व अफ़आल से मुताल्लिक़ जितने अह्काम हैं उनके मज्मूए का नाम है और तरीक़त या तसव्वुफ़ बातिन के आमाल व अफ़आल से मुताल्लिक़ अह्काम के मज्मूए का नाम है और बातिन की अहमियत इसलिये ज़्यादा है कि अगर यह दुरूस्त न हो तो ज़ाहिरी आमाल भी बेकार हो जाते हैं। फ़र्ज़ करो कि इख़्लास नहीं है, इख़्लास के क्या मायने हैं? इख़्लास के मायने यह हैं कि हर काम में अल्लाह तआला की रिज़ा ढूंढने की फ़िक्र, कि इन्सान जो कम भी करे, सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह तआला को राज़ी करने के लिये करे, यह है इख़्लास। यह इख़्लास एक बातिनी फ़ेल है। एक शख़्स को इख़्लास हासिल नहीं है तो अगर वह नमाज़ बग़ैर इख़्लास के पढ़ रहा है और इसलिये पढ़ रहा है कि लोग मुझे मुत्तक़ी, प्रहेज़गार समझें, इबादत गुज़ार समझें। अब ज़ाहिरी आमाल तो दुरुस्त हैं लेकिन चूंकि बातिन में इख़्लास की रूह नहीं है इस वास्ते वे ज़ाहिरी आमाल बेकार हैं, बे फ़ायदा हैं, गुनाह हैं, क्योंकि हदीस शरीफ़ में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि:

"من صلی یرائی فقد اشرک باللّٰہ" (مشکوۃ شریف)

"यानी जो शख़्स लोगों को दिखाने के लिये नमाज़ पढ़ रहा है,

वह अल्लाह तआ़ला के साथ शिर्क का जुर्म कर रहा है"।

गोया उसने अल्लाह तआ़ला के साथ मख़्लूक़ को शरीक ठहराया, अल्लाह तआ़ला के बजाये मख़्लूक़ को राज़ी करना चाहता है इसलिये बातिन की इस्लाह ज़ाहिरी आमाल को दुरुस्त करने के लिये भी लाज़मी है, अगर यह नहीं होगी तो ज़ाहिरी आमाल भी बेकार हो जायेंगे।

अपना मुआ़लिज तलाश कीजिये

हमारे बुज़ुर्गों ने यह तरीक़ा बतलाया कि चूंकि इन्सान इन चीज़ों की इस्लाह ख़ुद नहीं कर सकता, इसलिये कोई मुआ़लिज (इलाज करने वाला) तलाश करना चाहिये। उस मुआ़लिज को चाहे पीर कह लो, चाहे शैख़ कह लो, चाहे उस्ताद कह लो, लेकिन असल में वह मुआ़लिज है, बातिन की बीमारियों का वह डाक्टर है। जब तक इन्सान यह नहीं करेगा, उस वक़्त तक इसी तरह बीमारियों में मुब्तला रहेगा और उसके आमाल ख़राब होते चले जायेंगे।

जो बाब आगे शुरू हो रहा है यह उसका थोड़ा सा तआ़रुफ़ था, अब आगे अख़्लाक़ के जितने शोबे हैं, एक एक का बयान उसमें आयेगा कि अच्छे अख़्लाक़ को हासिल करने के लिये क्या करना चाहिये और बुरे अख़्लाक़ को दूर करने के लिये क्या करना चाहिये।

अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमें इसको समझने की भी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये और इस पर अ़मल करने की भी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمدللہ رب العلمین

दुनिया से दिल न लगाओ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ:

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَلَا تَغُرَّنَّكُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَلَا يَغُرَّنَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُوْرُ۔ (سورة الفاطر:٥)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم، وصدق رسوله النبي الكريم، ونحن علىٰ ذلك من الشاهدين والشاكرين، والحمد للّٰه رب العالمين۔

दुनिया की राहत दीन पर मौक़ूफ़ है

हर मुसलमान के लिये अन्दरूनी अख़्लाक़ का हासिल करना ज़रूरी है, जिनके हासिल किये बग़ैर न दीन दुरुस्त हो सकता है, और दुनिया दुरुस्त हो सकती है। क्योंकि हक़ीक़त में दुनिया की दुरुस्तगी भी दीन की दुरुस्तगी पर मौक़ूफ़ है, यह शैतानी धोखा है कि दीन के बग़ैर भी दुनिया अच्छी, पुर सुकून और राहत व आराम वाली हो जाती है। दुनिया के असबाब व वसाइल का हासिल हो जाना और बात है, और दुनिया में पुर सुकून ज़िन्दगी, इत्मीनान, राहत व आराम और मुसर्रत की ज़िन्दगी हासिल हो जाना और बात है। दुनिया के वसाइल व असबाब तो दीन को छोड़ कर हासिल हो जायेंगे, पैसों का ढेर लग जायेगा, बंगले खड़े हो जायेंगे, कारख़ाने क़ायम हो जायेंगे, कारें हासिल हो जायेंगी। लेकिन जिसको "दिल का सुकून" कहा जाता है, सच्ची बात यह है कि वह दीन के बग़ैर हासिल नहीं हो सकता। और इसी वजह से दुनिया की हक़ीक़ी राहत भी उन्हीं अल्लाह वालों को हासिल

होती है, जो अपनी ज़िन्दगी को अल्लाह जल्ल शानुहू के अह्काम के ताबे बनाते हैं। इसलिये जब तक अख़्लाक़ की इस्लाह न हो, न दीन दुरुस्त हो सकता है, और न दुनिया दुरुस्त हो सकती है। इन अख़्लाक़ में से दो का बयान पिछले जुमे में हो चुका, एक ख़ौफ़ और एक रजा (उम्मीद) है, अल्लाह तआ़ला अपनी रह्मत से इनको हासिल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

"ज़ुहद" की हक़ीक़त

आज भी एक बहुत बुनियादी अख़्लाक़ का बयान है, जिसको "ज़ुहद" कहा जाता है। आप हज़रात ने यह लफ़्ज़ बहुत सुना होगा कि फ़लां शख़्स बड़ा आ़बिद और ज़ाहिद है। ज़ाहिद उस शख़्स को कहते हैं जिसमें "ज़ुहद" हो, और "ज़ुहद" एक बातिनी अख़्लाक़ है जिसे हर मुसलमान को हासिल करना ज़रूरी है, और "ज़ुहद" के मायने हैं "दुनिया से बेरग़बती" और "दुनिया की मुहब्बत से दिल ख़ाली होना" दिल दुनिया में अटका हुआ न हो, इसकी मुहब्बत दिल में इस तरह जमी हुई न हो कि हर वक़्त इसी का ध्यान और इसी का ख़्याल इसी की फ़िक्र है, और इसी के लिये दौड़ धूप हो रही है, इसका नाम "ज़ुहद" है।

गुनाहों की जड़ "दुनिया की मुहब्बत"

हर मुसलमान को इसका हासिल करना इसलिये ज़रूरी है कि अगर दुनिया की मुहब्बत दिल में समाई हुई हो तो फिर सही मायने में अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत दिल में नहीं आ सकती, और जब अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत नहीं होती वह मुहब्बत ग़लत रुख़ पर चल पड़ती है, इसी वजह से हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"حب الدنيا رأس كل خطيئة" (كنز العمال)

"दुनिया की मुहब्बत हर गुनाह और मासियत की जड़ है"।

जितने जराइम और गुनाह हैं अगर इन्सान उनकी हक़ीक़त में ग़ौर

करेगा तो उसको यही नज़र आयेगा कि उन सब में दुनिया की मुहब्बत काम कर रही है। चोर क्यों चोरी कर रहा है? इसलिये कि दुनिया की मुहब्बत है, अगर कोई शख़्स बद्कारी कर रहा है, तो क्यों कर रहा है? इसलिये कि दुनिया की लज़्ज़तों की मुहब्बत दिल में जमी हुई है, शराबी इसलिये शराब पी रहा है कि वह दुनियावी लज़्ज़तों के पीछे पड़ा हुआ है। किसी भी गुनाह को ले लीजिये, उसके पीछे दुनिया की मुहब्बत काम करती हुई नज़र आयेगी। और जब दुनिया की मुहब्बत दिल में समाई हुई है तो फिर अल्लाह की मुहब्बत कैसे दाख़िल हो सकती है।

मैं अबू बकर को अपना महबूब बनाता

यह दिल अल्लाह तबारक व तआ़ला ने ऐसा बनाया है कि इसमें हक़ीक़ी मुहब्बत तो सिर्फ़ एक ही की समा सकती है। ज़रूरत के वक़्त ताल्लुक़ात तो बहुत से लोगों से क़ायम हो जायेंगे, लेकिन हक़ीक़ी मुहब्बत एक ही की समा सकती है। जब एक की मुहब्बत आ गई तो फिर दूसरे की मुहब्बत उस दर्जे में नहीं आ सकेगी। इस वास्ते हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बारे में फ़रमाया कि:

"لوكنت متخذًا خليلًا لتخذت ابا بكر خليلًا" (صحيح بخارى)

अगर मैं इस दुनिया में किसी को अपना महबूब बनाता तो "अबू बकर" (रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु) को बनाता, हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से इस दर्जा ताल्लुक़ था कि दुनिया में ऐसा ताल्लुक़ किसी और से नहीं हुआ, यहां तक कि हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की मिसाल हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने ऐसी है, जैसे एक आईना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने रखा जाये, और उस आईने में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का अ़क्स नज़र

आये, और फिर कहा जाये कि यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हैं। और आईने में जो अ़क्स है वह सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु हैं, हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह मक़ाम था...... लेकिन इसके बावजूद आपने यह नहीं फ़रमाया कि मैं इनको अपना महबूब बनाता हूं, बल्कि यह फ़रमाया कि अगर मैं किसी को अपना महबूब बनाता, तो इनको बनाता। लेकिन मेरे महबूबे हक़ीक़ी तो अल्लह तआ़ला हैं, और जब वह महबूब बन गये तो दूसरे के साथ हक़ीक़ी मुहब्बत के लिये दिल में जगह न रही। लेकिन ताल्लुक़ात दूसरों से हो सकते हैं, और होते भी हैं, जैसे बीवी से ताल्लुक़, बच्चों से ताल्लुक़, मां से ताल्लुक़, बाप से ताल्लुक़, भाई से ताल्लुक़, बहन से ताल्लुक़, मगर ये ताल्लुक़ात उस मुहब्बत के ताबे होते हैं जो अल्लाह तआ़ला की हक़ीक़ी मुहब्बत दिल में होती है।

दिल में सिर्फ़ एक की मुहब्बत समा सकती है

इसलिये दिल में हक़ीक़ी मुहब्बत या तो अल्लाह तआ़ला की होगी, या दुनिया की होगी, दोनों मुहब्बतें एक साथ जमा नहीं हो सकतीं, इसी वजह से मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि:

हम ख़ुदा ख़्वाही व हम दुनिया--ए--दूं
ईं ख़्याल अस्त व मुहाल अस्त व जुनूं

यानी दुनिया की मुहब्बत भी दिल में समाई हुई हो, और अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत भी समाई हुई हो, ये दोनो बातें नहीं हो सकतीं, इसलिये कि यह सिर्फ़ ख़्याल है और मुहाल है और जुनून है। इसलिये अगर दिल में दुनिया की मुहब्बत समा गई तो फिर अल्लाह की मुहब्बत नहीं आयेगी, जब अल्लाह की मुहब्बत नहीं होगी तो फिर दीन के जितने काम हैं वे सब मुहब्बत के बग़ैर बेरूह हैं, बे हक़ीक़त हैं, उनके अदा करने में परेशानी, दुश्वारी और मशक़्क़त होगी और सही मायने में वे दीन के काम अन्जाम नहीं पा सकेंगे। बल्कि क़दम क़दम पर आदमी ठोकरें खायेगा, इसलिये कहा गया कि इन्सान दिल में दुनिया की

मुहब्बत को जगह न दे। इसी का नाम "ज़ुहद" है और "ज़ुहद" को हासिल करना ज़रूरी है।

दुनिया में हूं, दुनिया का तलबगार नहीं हूं

लेकिन यह बात भी अच्छी तरह समझ लीजिये कि यह बड़ा नाज़ुक मस्अला है कि दुनिया के बग़ैर गुज़ारा भी नहीं है, दुनिया के अन्दर भी रहना है, जब भूख लगती है तो खाने की ज़रूरत पेश आती है, और जब प्यास लगती है तो पानी की ज़रूरत पेश आती है, सर छुपाने और रहने के लिये घर की भी ज़रूरत है, रोज़ी कमाने की भी ज़रूरत है। लेकिन अब सवाल यह है कि जब ये सब काम भी इन्सान के साथ लगे हुये हैं तो फिर यह कैसे हो सकता है कि इन्सान दुनिया के अन्दर भी रहे, और दुनिया की ज़रूरियात भी पूरी करे लेकिन उसके साथ साथ दिल में दुनिया न आये, दिल में दुनिया से बेरग़बती पाई जाये। इन दोनों का एक साथ जमा होना मुश्किल नज़र आता है, यही वह काम है जो हज़राते अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके वारिसीन आकर सिखाते हैं कि किस तरह तुम दुनिया में रहो, और दुनिया की मुहब्बत को दिल में जगह न दो। एक हक़ीक़ी मुसलमान दुनिया के अन्दर भी रहेगा, दुनिया वालों से ताल्लुक़ भी क़ायम करेगा, हुक़ूक़ भी अदा करेगा, लेकिन इसके साथ साथ उसकी मुहब्बत से परहेज़ भी करेगा। हज़रत मज्ज़ूब साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि:

दुनिया में हूं, दुनिया का तलबगार नहीं हूं
बाज़ार से गुज़रा हूं, ख़रीदार नहीं हूं

यह कैफ़ियत कैसे पैदा होती है कि आदमी दुनिया में रहे, दुनिया से गुज़रे, दुनिया को बरते, लेकिन दुनिया की मुहब्बत दिल में न आए?

दुनिया की मिसाल

इसी बात को मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने एक मिसाल से समझाया है और बड़ी प्यारी मिसाल दी है, फ़रमाते हैं कि दुनिया के बग़ैर इन्सान का गुज़ारा भी नहीं है, इसलिये कि इस दुनिया में ज़िन्दा

रहने के लिये बेशुमार ज़रूरतें इंसान के साथ लगी हुई हैं, और इन्सान की मिसाल कश्ती जैसी है, और दुनिया की मिसाल पानी जैसी है, जैसे पानी के बग़ैर कश्ती नहीं चल सकती, इसलिये कि अगर कोई शख़्स खुश्की पर कश्ती चलाना चाहे तो नहीं चलेगी, इसी तरह इन्सान को ज़िन्दा रहने के लिये दुनिया ज़रूरी है, इन्सान को ज़िन्दा रहने के लिये पैसा चाहिये, खाना चाहिये, पानी चाहिये, मकान चाहिये, कपड़ा चाहिये, और इन सब चीज़ों की उसको ज़रूरत है, और ये सब चीज़ें दुनिया हैं, लेकिन जिस तरह पानी कश्ती के लिये उस वक़्त तक फ़ायदेमन्द है जब तक वह पानी कश्ती के नीचे है और उसके दायीं तरफ़ और बायीं तरफ़ है, उसके आगे और पीछे है, वह पानी उस कश्ती को चलायेगा, लेकिन अगर वह पानी दायें बायें के बजाये कश्ती के अन्दर दाख़िल हो गया तो वह कश्ती को डुबो देगा, तबाह कर देगा।

इसी तरह दुनिया का यह असबाब और यह दुनिया का साज़ व सामान जब तक तुम्हारे चारों तरफ़ है तो फिर कोई डर नहीं है इसलिये कि यह साज़ व सामान तुम्हारी ज़िन्दगी की कश्ती को चलायेगा। लेकिन जिस दिन दुनिया का यह साज़ व सामान तुम्हारे इर्द गिर्द से हट कर तुम्हारे दिल की कश्ती में दाख़िल हो गया, उस दिन तुम्हें डुबो देगा, चुनांचे मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि:

आब अन्दर ज़ेरे कश्ती पुश्ती अस्त
आब दर कश्ती हलाके कश्ती अस्त

यानी जब तक पानी कश्ती के इर्द गिर्द हो तो वह कश्ती को चलाता है, और धक्का देता है, लेकिन अगर वह पानी कश्ती के अन्दर दाख़िल हो जाता है तो वह कश्ती को डुबो देता है।

दो मुहब्बतें जमा नहीं हो सकतीं

इसलिये "ज़ुहद" इसी का नाम है कि यह दुनिया तुम्हारे चारों तरफ़ और इर्द गिर्द रहे, लेकिन इसकी मुहब्बत तुम्हारे दिल में दाख़िल न हो, इसलिये कि अगर दुनिया की मुहब्बत दिल में दाख़िल हो गयी

तो फिर अल्लाह की मुहब्बत के लिये दिल में जगह नहीं छोड़ेगी, और अल्लाह की मुहब्बत दुनिया की मुहब्बत के साथ जमा नहीं हो सकती। मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि एक शेर सुनाया करते थे, शायद हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह मुहाजिरे मक्की रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के शैख़ हज़रत मियां जी नूर मुहम्मद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की तरफ़ यह शेर मन्सूब फ़रमाते थे, वह उन्ही के मक़ाम का शेर है, फ़रमाते कि:

भर रहा है दिल में हुब्बे जाह व माल
कब समावे उस में हुब्बे ज़ुल-जलाल

यानी जब माल व जाह और ओहदे की मुहब्बत दिल में भरी हुई है तो फिर उसमें अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत कैसे समा सकती है। इसलिये हुक्म यह है कि इस दुनिया की मुहब्बत को दिल से निकाल दो, दुनिया को निकालना ज़रूरी नहीं, दुनिया को छोड़ना ज़रूरी नहीं, लेकिन दुनिया की मुहब्बत निकालना ज़रूरी है, अगर दुनिया हो लेकिन बग़ैर मुहब्बत की हो तो वह नुक़्सान देने वाली नहीं है।

दुनिया की मिसाल "बैतुल ख़ला" है

आम तौर पर यह बात समझ में नहीं आती कि एक तरफ़ तो इन्सान इस दुनिया को ज़रूरी भी समझे और इसकी अहमियत भी हो, लेकिन दिल में इसकी मुहब्बत न हो, इस बात को एक मिसाल से समझ लें। आप जब एक मकान बनाते हैं, तो उस मकान के मुख़्तलिफ़ हिस्से होते हैं, एक सोने का कमरा होता है, एक मुलाक़ात का कमरा होता है, एक खाने का कमरा होता है वग़ैरह वग़ैरह। और उसी मकान में आप एक बैतुल ख़ला (लैट्रीन) भी बनाते हैं, और बैतुल ख़ला के बग़ैर वह मकान ना मुकम्मल है, अगर एक मकान बड़ा शानदार बना हुआ है, कमरे अच्छे हैं, बैड रूम अच्छा है, ड्राइंग रूम बहुत आला है, खाने का कमरा अच्छा है और पूरे घर में बड़ा शानदार और क़ीमती क़िस्म का फर्नीचर लगा हुआ है, मगर उसमें बैतुल ख़ला नहीं है, बताइये वह मकान मुकम्मल है या अधूरा है? ज़ाहिर है कि वह मकान

नाक़िस है, इसलिये कि बैतुल ख़ला के बग़ैर कोई मकान मुकम्मल नहीं हो सकता। लेकिन यह बताइये कि क्या कोई इन्सान ऐसा होगा कि उसका दिल बैतुल ख़ला से इस तरह अटका हुआ हो कि हर वक़्त उसके दिमाग़ में यही ख़्याल रहे कि कब मैं बैतुल ख़ला जाऊंगा, और कब उसमें बैठूंगा, और किस तरह बैठूंगा और कितनी देर बैठूंगा, और कब वापस निकलूंगा, हर वक़्त उसके दिल व दिमाग़ पर बैतुल ख़ला छाया हुआ हो। ज़ाहिर है कि कोई इन्सान भी बैतुल ख़ला को अपने दिल व दिमाग़ पर इस तरह सवार नहीं करेगा, और कभी उसको अपने दिल में जगह नहीं देगा। अगरचे वह जानता है कि बैतुल ख़ला ज़रूरी चीज़ है, उसके बग़ैर चारा-ए-कार नहीं, लेकिन इसके बावजूद उसके बारे में हर वक़्त यह नहीं सोचेगा कि मैं बैतुल ख़ला को किस तरह सजाऊं, और आराम दह बनाऊं। इसलिये कि उस बैतुल ख़ला की मुहब्बत दिल में नहीं है।

दुनिया की ज़िन्दगी धोखे में न डाले

दीन की तालीम भी हक़ीक़त में यह है कि ये सारे माल व असबाब का भी यह हाल है कि वे सब ज़रूरी तो हैं, और ऐसे ज़रूरी हैं कि जैसे बैतुल ख़ला ज़रूरी होता है लेकिन इसकी फ़िक्र, इसकी मुहब्बत, इसका ख़्याल दिल व दिमाग़ पर सवार न हो जाये, बस दुनिया की हक़ीक़त यह है, इसलिये बुज़ुर्गों ने फ़र्माया कि इस बात का इस्तिहज़ार (ध्यान व ख़्याल) बार बार करे कि इस दुनिया की हक़ीक़त क्या है, यह आयत जो अभी मैंने आपके सामने तिलावत की, इसमें अल्लाह जल्ल शानुहू ने फ़रमायाः

يَآ اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَلَا تَغُرَّنَّكُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَلَا يَغُرَّنَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُوْرُ۔ (سورۃ الفاطر:٥)

ऐ लोगो! अल्लाह का वादा सच्चा है, क्या वादा है? वह वादा यह है कि एक दिन मरोगे, और उसके सामने पेशी होगी, और फिर तमाम आमाल का जवाब देना होगा, इसलिये दुनियावी ज़िन्दगी तुम्हें हरगिज़

धोखे मे न डाले, और वह धोखेबाज़ यानी शैतान तुम्हें अल्लाह से धोखे में न डाले। शरीअ़त की तालीम यह है कि दुनिया में रहो मगर इससे धोखा न खाओ, इसलिये कि यह इम्तिहान का घर है, जिसमें बहुत से मनाज़िर ऐसे हैं जो इन्सान का दिल लुभाते हैं और अपनी तरफ़ मुतवज्जह करते हैं, इसलिये इन दिल लुभाने वाले मनाज़िर की मुहब्बत को ख़ातिर में न लाओ, अगर दुनिया का साज़ व सामान जमा हो भी गया तो कुछ हर्ज नहीं, बशर्ते कि दिल उसके साथ अटका हुआ न हो।

शैख़ फ़रीदुद्दीन अ़त्तार रह्मतुल्लाहि अ़लैहि

बाज़ बन्दे ऐसे होते हैं कि अल्लाह तआ़ला उनको अपनी तरफ़ खींचने के लिये कुछ लतीफ़ क़ुव्वतें उनके पास भेज देते हैं, और उन लतीफ़ क़ुव्वतों के भेजने का मक़्सद यह होता है कि उस बन्दे को दुनिंया की मुहब्बत से निकाल कर अपनी तरफ़ बुलाया जाये। हज़रत शैख़ फ़रीदुद्दीन अ़त्तार रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो मश्हूर बुज़ुर्ग गुज़रे हैं, उनका वाक़िआ मैंने अपने वालिद माजिद (हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब) रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से सुना, फ़रमाया कि शैख़ फ़रीदुद्दीन अ़त्तार यूनानी दवाओं और इतर के बहुत बड़े ताजिर थे, और इसी वजह से उनको "अ़त्तार" कहा जाता है, दवाओं और इतर की बहुत बड़ी दुकान थी। कारोबार बहुत फैला हुआ था, और उस वक़्त वह एक आ़म क़िस्म के दुनियादार ताजिर थे। एक दिन दुकान पर बैठे हुये थे, और दुकान दवाओं और इतर की शीशियों से भरी हुयी थी, इतने में एक मज्ज़ूब क़िस्म का दुरवेश और मलंग आदमी दुकान पर आ गया और दुकान में दाख़िल हो गया, और खड़ा होकर पूरी दुकान में कभी ऊपर से नीचे की तरफ़ देखता, कभी दायीं से बायीं तरफ़ देखता, और दवाओं का मुआ़यना करता रहा, कभी एक शीशी को देखता कभी दूसरी शीशी को देखता, जब काफ़ी देर इस तरह देखते हुये गुज़र गयी, तो शैख़ फ़रीदुद्दीन ने पूछा कि तुम्हें कुछ ख़रीदना भी है? उसने जवाब दिया कि नहीं, मुझे कुछ ख़रीदना नहीं है, बस वैसे ही देख रहा हूं और

फिर इधर उधर अलमारी में रखी शीशियों की तरफ़ नज़र दौड़ाता रहा, बार बार देखता रहा। फिर शैख़ फ़रीदुद्दीन ने पूछा कि भाई! आख़िर तुम क्या देख रहे हो? उस दुरवेश ने कहा कि मैं असल में यह देख रहा हूं कि जब आप मरेंगे तो आपकी जान कैसे निकलेगी? इसलिये कि आपने यहां इतनी सारी शीशियां रखी हुयी हैं। जब आप मरने लगेंगे और आपकी रूह निकलने लगेगी तो उस वक़्त आपकी रूह कभी एक शीशी में दाख़िल हो जायेगी कभी दूसरी शीशी में दाख़िल हो जायेगी, और उसको बाहर निकलने का रास्ता कैसे मिलेगा?

अब ज़ाहिर है कि शैख़ फ़रीदुद्दीन अ़त्तार उस वक़्त चूंकि एक दुनियादार ताजिर थे, ये बातें सुन कर गुस्सा आ गया, और उससे कहा कि तू मेरी जान की फ़िक्र कर रहा है, तेरी जान कैसे निकलेगी? जैसे तेरी जान निकलेगी, वैसे मेरी भी निकल जायेगी। उस दुरवेश ने जवाब दिया कि मेरी जान निकलने में क्या परेशानी है, इसलिये कि मेरे पास तो कुछ भी नहीं है, न मेरे पास तिजारत है न दुकान है और न शीशियां हैं, न साज़ व सामान है मेरी जान तो इस तरह निकलेगी, बस इतना कह कर वह दुरवेश दुकान के बाहर नीचे ज़मीन पर लेट गया और कलिमा–ए–शहादत:

"اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ"

"अश्हदु अल्ला इला–ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसूल–ल्लाह्" कहा और रूह निकल गयी।

बस! यह वाक़िआ़ देखना था कि हज़रत शैख़ फ़रीदुद्दीन अ़त्तार रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के दिल पर एक चोट लगी कि हक़ीक़त में मैं तो दिन रात इसी दुनिया के कारोबार में मश्ग़ूल हूं, और इसी में लगा हुआ हूं, अल्लाह तबारक व तआ़ला की तरफ़ ध्यान नहीं है, और एक अल्लाह का बन्दा इतनी आसानी से अल्लाह तबारक व तआ़ला की बारगाह में चला गया। बहर हाल, यह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से एक लतीफ़ा–ए–ग़ैबी था, जो उनकी हिदायत का सबब बन गया। बस!

उसी दिन अपना कारोबार छोड़ कर दूसरों के हवाले किया, अल्लाह तआला ने हिदायत दी, और उसी रास्ते पर लग कर इतने बड़े शैख़ बन गये कि दुनिया की हिदायत का सामान बन गये।

हज़रत इब्राहीम बिन अधम रह्मतुल्लाहि अ़लैहि

शैख़ इब्राहीम बिन अधम रह० एक इलाक़े के बादशाह थे, रात को देखा कि उनके महल की छत पर एक आदमी टहल रहा है। यह समझे कि शायद कोई चोर है, और चोरी की नियत से यहां आया है, पकड़ कर उससे पूछा कि तुम इस वक़्त यहां कहां से आ गये? क्या कर रहे हो? वह शख़्स कहने लगा कि असल में मेरा एक ऊंट गुम हो गया है, ऊंट तलाश कर रहा हूं, हज़रत इब्राहीम बिन अधम ने फ़रमाया कि तुम्हारा दिमाग़ सही है? ऊंट कहां, और महल की छत कहां। अगर तेरा ऊंट गुम हो गया है तो फिर जंगल में जाकर तलाश कर, यहां महल की छत पर ऊंट तलाश करना बड़ी हिमाक़त है तुम अह्मक़ इन्सान हो। उस आदमी ने कहा कि अगर इस महल की छत पर ऊंट नहीं मिल सकता तो फिर इस महल में ख़ुदा भी नहीं मिल सकता। अगर मैं अह्मक़ हूं तो तुम मुझ से ज़्यादा अह्मक़ हो। इसलिये कि इस महल में रह कर ख़ुदा तलाश करना इससे बड़ी हिमाक़त है। बस उसका यह कहना था कि दिल पर एक चोट लगी, और सब बादशाहत वग़ैरह छोड़ कर रवाना हो गये। बहर हाल! यह भी अल्लाह तआला की तरफ़ से एक लतीफ़ा-ए-ग़ैबी था।

इससे सबक़ हासिल करें

हम जैसे लोगों के लिये इस वाक़िए से यह सबक़ लेना तो दुरुस्त नहीं कि जिस तरह वह सब कुछ छोड़ छाड़ कर अल्लाह तआला के दीन के लिये निकल पड़े, हम भी उनकी तरह निकल जायें, हम जैसे कम-ज़र्फ़ लोगों के लिये यह तरीक़ा इख़्तियार करना मुनासिब नहीं लेकिन इस वाक़िए से जो बात सबक़ लेने की है वह यह कि अगर इन्सान का दिल दुनिया के साज़ व सामान में, दुनिया के राहत व

आराम में अटका हुआ हो और सुबह से शाम तक दुनिया हासिल करने की दौड़ धूप में लगा हुआ हो। ऐसे दिल में अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत नहीं आती। हां जब अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत दिल में आ जाती है तो दुनिया का यह साज़ व सामान इन्सान के पास ज़रूर होता है। लेकिन दिल उसके साथ अटका नहीं होता।

मेरे वालिद माजिद और दुनिया की मुहब्बत

मेरे वालिद माजिद (हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब) रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, अल्लाह तआ़ला उनके दरर्जे बुलन्द फ़रमाये, आमीन। अल्लाह तआ़ला ने हमें उनकी ज़ात में शरीअ़त और तरीक़त के बेशुमार नमूने दिखा दिये। अगर हम उनको न देखते तो यह बात समझ में न आती कि सुन्नत की ज़िन्दगी कैसी होती है? उन्हों ने दुनिया में रह कर सब काम किये, पढ़ना पढ़ाना उन्हों ने किया, फ़त्वे उन्हों ने लिखे, तसनीफ़ उन्हों ने की, वाज़ व तब्लीग़ उन्हों ने की, पीरी मुरीदी उन्हों ने की और साथ साथ अपने बच्चों का पेट पालने के लिये अयालदारी के हुक़ूक़ अदा करने के लिये तिजारत भी की। लेकिन यह सब होते हुये मैंने देखा कि उनके दिल में दुनिया की मुहब्बत एक राई के दाने के बराबर भी दाख़िल नहीं हुई।

वह बाग़ मेरे दिल से निकल गया

मरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को चमनकारी का बहुत शौक़ था। चुनांचे पाकिस्तान बनने से पहले देवबन्द ही में बड़े शौक़ से एक बाग़ लगाया, दारुल उलूम देवबन्द में नौकरी के दौरान तन्ख़ाह कम और बाल बच्चे ज़्यादा थे, उस तन्ख़ाह से गुज़ारा भी बड़ी मुश्किल से होता था, लेकिन तन्ख़ाह से बड़ी मुश्किल से कुछ इन्तिज़ाम करके आम का बाग़ लगाया और उस बाग़ में पहली मर्तबा फल आ रहा था, उसी साल पाकिस्तान बनने का ऐलान हो गया और आपने हिजरत करने का फ़ैसला कर लिया। और हिजरत करके पाकिस्तान आ गये और उस बाग़ और मकान पर हिन्दुओं ने क़ब्ज़ा कर लिया। बाद में

हज़रत वालिद साहिब की ज़बान से अक्सर यह जुम्ला सुना कि "जिस दिन मैंने उस घर और बाग़ से क़दम निकाला, उस दिन से वह बाग़ और घर मेरे दिल से निकल गये। एक मर्तबा कभी भूल कर भी यह ख़्याल नहीं आया कि मैंने कैसा बाग़ लगाया था, और कैसा घर बनाया था" वजह इसकी यह थी कि ये सारे काम ज़रूर किये थे, लेकिन उनका मक़्सद हक़ अदा करना था, और दिल उनके साथ अटका हुआ नहीं था।

दुनिया ज़लील होकर आती है

सारी उमर हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का यह मामूल देखा कि जब कभी कोई शख़्स किसी चीज़ के बारे में बिला वजह आपसे झगड़ा शुरू करता तो वालिद अगरचे हक़ पर होते, लेकिन हमेशा आपका यह मामूल देखा कि आप उससे फ़रमाते कि अरे भाई झगड़ा छोड़ दो, और यह चीज़ ले जाओ। अपना हक़ छोड़ देते और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद सुनाया करते थे कि:

"انا زعیم ببیت فی ربض الجنة لمن ترك المراء وان كان محقاً"

(ابوداؤد شریف)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः मैं उस शख़्स को जन्नत के अतराफ़ में घर दिलाने का ज़िम्मेदार हूं जो हक़ पर होने के बावजूद झगड़ा छोड़ दे......हज़रत वालिद साहिब को सारी उमर इस हदीस पर अमल करते हुये देखा......कभी कभी हमें यह तरद्दुद होता कि आप हक़ पर थे अगर इसरार करते तो हक़ मिल जाता। लेकिन आप छोड़ कर अलग हो जाते। फिर अल्लाह तआ़ला ने आपको दुनिया अ़ता फ़रमाई, और ऐसे लोगों के पास दुनिया ज़लील होकर आती है। जैसा कि हदीस शरीफ़ में आता है कि:

"اتته الدنيا وهي راغمة" (ابن ماجه شريف)

यानी जो शख़्स एक मर्तबा इस दुनिया की तलब से मुंह फेर ले

तो अल्लाह तआ़ला उसके पास दुनिया ज़लील करके लाते हैं। वह दुनिया उसके पांव से लगी फिरती है, लेकिन उसके दिल में उसकी मुहब्बत नहीं होती।

दुनिया साए की तरह है

किसी शख़्स ने दुनिया की बड़ी अच्छी मिसाल दी है, फ़रमाया कि दुनिया की मिसाल ऐसी है जैसे इन्सान का साया, अगर कोई शख़्स चाहे कि मैं अपने साये का पीछा करूं और उसको पकड़ लूं। तो नतीजा यह होगा कि वह अपने साये के पीछे जितना दौड़ेगा, वह साया और आगे दौड़ता चला जायेगा, कभी उसको पकड़ नहीं सकेगा। लेकिन अगर इन्सान अपने साये से मुंह मोड़ कर उसकी मुख़ालिफ़ सिम्त में दौड़ना शुरू कर दे तो फिर यह साया उसके पीछे पीछे आयेगा......अल्लाह तआ़ला ने दुनिया को भी ऐसा ही बनाया है कि अगर दुनिया का तालिब बन कर और उसकी मुहब्बत दिल में लेकर उसके पीछे भागोगे तो वह दुनिया तुमसे आगे आगे भागेगी, तुम कभी उसको पकड़ नहीं सकोगे। लेकिन जिस दिन एक मर्तबा तुमने उसकी तलब से मुंह मोड़ लिया, तो फिर देखो कि अल्लाह तआ़ला उसको इस तरह ज़लील करके लाते हैं। बेशुमार मिसालें ऐसी हुई हैं कि दुनिया उसके पास आती है और वह उसको ठोकर मार देता है लेकिन वह दुनिया फिर भी पांव में पड़ती है। इसलिये एक मर्तबा सच्चे दिल से इस दुनिया की तलब से मुंह मोड़ना ज़रूरी है, और यह बात दुनिया की हक़ीक़त समझने से हासिल होती है। और दुनिया की हक़ीक़त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इन हदीसों में बयान फ़रमा दी। इन हदीसों को पढ़ कर दुनिया की मुहब्बत दिल से निकालने की फ़िक्र करनी चाहिये।

बहरैन से माल का आना

"عن عمربن عوف الانصاری رضی اللہ عنہ ان رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم بعث عبیدۃ بن الجراح رضی اللہ تعالیٰ عنہ الی البحرین، الخ"

(بخاری شریف)

हज़रत उमर बिन औफ़ अन्सारी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अन्हु को बहरैन का गवर्नर बना कर भेजा और उनको यह काम भी सुपुर्द किया कि वहां के काफ़िरों और मुश्रिकीन पर जो जिज़्या और टैक्स वाजिब है वह उनसे वुसूल करके लाया करें, चुनांचे एक मर्तबा यह बहरैन से टैक्स और जिज़्ये का माल लेकर मदीना तैयबा हाज़िर हुये, वह माल नक़दी की शक्ल में भी होता था, कपड़े की शक्ल में भी होता था। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामूल था कि वह जिज़्या का माल सहाबा-ए-किराम के दर्मियान तक़्सीम फ़रमा दिया करते थे, चुनांचे जब कुछ अन्सार सहाबा को पता चला कि हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु बहरैन से माल लाये हैं तो वे अन्सारी सहाबा फ़ज्र की नमाज़ में मस्जिदे नबवी में हाज़िर हो गये, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़ज्र की नमाज़ से फ़ारिग़ होकर वापस घर की तरफ़ तश्रीफ़ लेजाने लगे तो वे अन्सारी सहाबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने आ गये, और ज़बान से कुछ नहीं कहा। सामने आने का मक़्सद यह था कि जो माल बहरैन से आया हुआ है वह हमारे दरमियान तक़्सीम फ़रमा दें......यह वह ज़माना था जिसमें सहाबा-ए-किराम तंगदस्ती की इंतिहा को पहुंचे हुये थे, कई कई वक़्तों के फ़ाक़े गुज़रते थे, पहनने का कपड़ा नहीं था। इन्तिहाई तंगी का ज़माना था......जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन सहाबा-ए-किराम को देखा कि इस तरह सामने आ गये हैं तो आपने तबस्सुम फ़रमाया, और समझ गये कि ये हज़रात उस माल की तक़्सीम का मुतालबा कर रहे हैं......फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे फ़रमाया कि मेरे ख़्याल में तुम को यह मालूम हो गया कि उबैदा बिन जर्राह बहरैन से कुछ सामान लेकर आये हैं, उन्हों ने जवाब दिया कि जी हां! या रसूलल्लाह! हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पहले तो उनसे यह फ़रमाया कि ख़ुश--ख़बरी सुन लो कि तुम्हें ख़ुश करने वाली चीज़ मिलने वाली

है, वह माल तुम्हें मिल जायेगा।

तुम पर फ़क्र व फ़ाके का अन्देशा नहीं है

लेकिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह महसूस फ़रमाया कि सहाबा-ए-किराम को इस तरह आना और अपने आपको इस काम के लिये पेश करना, और इस बात का इन्तिज़ार करना कि यह माल हमें मिलने वाला है, यह अ़मल कहीं उनके दिल में दुनिया की मुहब्बत पैदा न कर दे, इसलिये आपने उनको ख़ुश-ख़बरी सुनाने के फ़ौरन बाद फ़रमा दिया कि:

"فواللہ مالفقراخشی علیکم، ولکنی اخشی ان تبسط الدنیا علیکم کما لبسطت علیٰ من کان قبلکم، فتنافسوھا کما تنا فسوھافتھلککم کما اھلکتھم"

(بخاری شریف)

ख़ुदा की क़सम, मुझे तुम्हारे ऊपर फ़क्र व फ़ाके का अन्देशा नहीं है, यानी इस बात का अन्देशा नहीं है कि तुम्हारे ऊपर फ़क्र व फ़ाक़ा गुज़रेगा और तुम तंगी के अन्दर मुब्तला हो जाओगे, और मशक़्क़त और परेशानी होगी, इसलिये कि अब तो ऐसा ज़माना आने वाला है कि इन्शा अल्लाह मुसलमानों में ख़ुशहाली और फ़राख़ी हो जायेगी। हक़ीक़त यह है कि उम्मत के हिस्से का सारा फ़क्र व फ़ाक़ा ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम झेल गये। चुनांचे हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि तीन तीन महीने तक हमारे घर में आग नहीं जलती थी, और उस वक़्त हमारा खाना सिर्फ़ दो चीज़ों पर मुश्तमिल होता था, एक ख़ुजूर और एक पानी। और सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी दो वक़्त पेट भर कर रोटी नहीं खाई, गेहूं तो मयस्सर ही नहीं थे, जौ की रोटी का यह हाल था, इसलिये फ़क्र व फ़ाक़ा तो ख़ुद सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम झेल गये।

सहाबा के ज़माने में तंगदस्ती

हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि उस ज़माने में

हमारा यह हाल था कि एक मर्तबा हमारे घर में छींट का कपड़ा कहीं से तोहफ़े में आ गया, यह ख़ास क़िस्म का नक़्श व निगार वाला सूती कपड़ा था, और कोई बहुत ज़्यादा क़ीमती कपड़ा नहीं था, लेकिन पूरे मदीना मुनव्वरा में जब भी किसी की शादी होती और किसी औरत को दुल्हन बनाया जाता तो उस वक़्त मेरे पास यह फ़रमाइश आती कि वह छींट का कपड़ा मांगा हुआ हमें दे दें। ताकि हम अपनी दुल्हन को पहनायें। चुनांचे शादियों के मौक़े पर वह कपड़ा दुल्हनों को पहनाया जाता......बाद में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती थीं कि आज उस जैसे बहुत से कपड़े बाज़ारों में फ़रोख़्त हो रहे हैं, और वही कपड़ा आज अगर मैं अपनी बांदी को भी देती हूं तो वह भी नाक मुंह चढ़ाती है कि मैं तो यह कपड़ा नहीं पहनती। इससे अन्दाज़ा लगायें कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में कितनी तंगी थी और अब कितनी फ़रावानी है।

यह दुनिया तुम्हें हलाक न कर दे

इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि आने वाले ज़माने में अव्वल तो उम्मत पर आम फ़क़्र व फ़ाक़ा नहीं आयेगा। चुनांचे मुसलमानों की पूरी तारीख़ उठा कर देख लीजिये कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने के बाद आम फ़क़्र व फ़ाक़ा नहीं आया, बल्कि कुशादगी का दौर आता चला गया, और आपने फ़रमा दिया कि अगर मुसलमानों पर फ़क़्र व फ़ाक़ा भी आ गया तो उस फ़क़्र व फ़ाक़े से मुझे नुक़्सान का अन्देशा नहीं है। ज़्यादा से ज़्यादा यह होगा कि दुनियावी तक्लीफ़ होगी, लेकिन उससे गुमराही फैलने का अन्देशा नहीं होगा। लेकिन अन्देशा इस बात का है कि तुम्हारे ऊपर दुनिया इस तरह फैला दी जायेगी जिस तरह पिछली उम्मतों पर फैला दी गयी, और तुम्हारे चारों तरफ़ दुनिया के साज़ व सामान और माल व दौलत के अंबार लगे होंगे और उस वक़्त तुम एक दूसरे से रेस करोगे और एक दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश

करोगे और यह सोचोगे कि फ़लां शख़्स का जैसा बंगला है मेरा भी वैसा ही हो जाये, फ़लां शख़्स की जैसी कार है, मेरे पास भी वैसी हो जाए, फ़लां शख़्स के जैसे कपड़े हैं मेरे भी वैसे हो जायें। बल्कि उस से आगे बढ़ने की ख़्वाहिश होगी जिसका नतीजा यह होगा कि यह दुनिया तुम्हें इस तरह हलाक कर देगी जिस तरह पिछली उम्मतों को हलाक कर दिया।

जब तुम्हारे नीचे क़ालीन बिछे होंगे

एक और रिवायत में आता है कि एक बार हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ फ़रमा थे कि आपने सहाबा-ए-किराम से फ़रमाया कि उस वक़्त तुम्हारा क्या हाल होगा जब तुम्हारे नीचे क़ालीन बिछे होंगे? सहाबा-ए-किराम को इस बात पर बहुत ताज्जुब हुआ कि क़ालीन तो बहुत दूर की बात है हमें तो बैठने के लिये खजूर के पत्तों की चटाई भी मयस्सर नहीं है, नंगे फ़र्श पर सोना पड़ता है, इसलिये क़ालीन कहां और हम कहां? चुनांचे हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया गया, या रसूलल्लाह!

"انا لنا الا انمار، قال انها ستکون" (بخاری شریف)

क़ालीन हमारे पास कहां से आयेंगे। हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि अगरचे आज तुम्हारे पास क़ालीन नहीं हैं लेकिन वह वक़्त आने वाला है जब तुम्हारे पास क़ालीन होंगे।

जन्नत के रूमाल इससे बेह्तर हैं

हदीस शरीफ़ में है कि एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास शाम से रेशमी कपड़ा आ गया, ऐसा कपड़ा सहाबा-ए-किराम ने उससे पहले कभी नहीं देखा था, इसलिये सहाबा-ए-किराम उठ उठ कर हाथ लगा कर उसको देखने लगे, हुज़ूर सल्ल-ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जब यह देखा कि सहाबा-ए-किराम इस कपड़े को इस तरह देख रहे हैं तो आपने फ़ौरन इरशाद फ़रमाया कि:

"لمناديل سعد بن معاذ فی الجنة افضل من هذا" (بخاری شریف)

"क्या इस कपड़े को देख कर ताज्जुब हो रहा है और क्या यह कपड़ा तुम्हें पसंद आ रहा है? अरे साद बिन मुआज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) को अल्लाह तआ़ला ने जन्नत में जो रूमाल अ़ता फ़रमाये हैं वे इस कपड़े से कहीं ज़्यादा बेह्तर हैं। गोया कि आपने फ़ौरन दुनिया से सहाबा-ए-किराम की तवज्जोह हटा कर आख़िरत की तरफ़ मुतवज्जह फ़रमाया, कहीं ऐसा न हो कि दुनिया की मुहब्बत तुम्हें धोखे में डाल दे और तुम आख़िरत की नेमतों से ग़ाफ़िल हो जाओ, क़दम क़दम पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा की घुट्टी में यह बात डाल दी कि यह दुनिया बे हक़ीक़त है, यह दुनिया ना पायेदार है इस दुनिया की लज़्ज़तें, इसकी नेमतें सब फ़ानी हैं और यह दुनिया दिल लगाने की चीज़ नहीं।

पूरी दुनिया मच्छर के एक पर के बराबर भी नहीं

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"لو كانت الدنيا تعدل عند الله جناح بعوضة ماسقى كافرًا منها شربة"

(ترمذی شریف)

यानी अगर इस दुनिया की हक़ीक़त अल्लाह तबारक व तआ़ला के नज़्दीक मच्छर के एक पर के बराबर भी होती तो किसी काफ़िर को दुनिया से पानी का एक घूंट भी न दिया जाता। लेकिन तुम देख रहे हो कि दुनिया की दौलत काफ़िरों को ख़ूब मिल रही है और वे ख़ूब मज़े उड़ा रहे हैं, इसके बावजूद कि वे लोग अल्लाह तआ़ला की ना फ़रमानी कर रहे हैं, अल्लाह तआ़ला के ख़िलाफ़ बग़ावत कर रहे हैं, मगर फिर भी दुनिया उनको मिली हुई है। इसलिये कि यह दुनिया अल्लाह तआ़ला के नज़्दीक बे हक़ीक़त है, पूरी दुनिया की हैसियत मच्छर के एक पर के बराबर भी नहीं है। अगर इसकी हैसियत मच्छर के पर के बराबर भी होती तो काफ़िरों को एक घूंट पानी भी न दिया जाता।

एक बार हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा-ए-किराम के साथ एक रास्ते से गुज़र रहे थे, रास्ते में आपने देखा कि एक बकरी का मरा हुआ कान कटा बच्चा पड़ा है, और उसकी बदबू फैल रही है। आपने बकरी के उस मुर्दा बच्चे की तरफ़ इशारा करते हुये सहाबा-ए-किराम से पूछा कि तुममें से कौन शख़्स इस मुर्दा बच्चे को एक दिर्हम में ख़रीदेगा? सहाबा-ए-किराम ने फ़रमाया कि या रसूलल्लाह! यह बच्चा अगर ज़िन्दा भी होता तब भी कोई शख़्स इसको एक दिर्हम में लेने के लिये तैयार न होता, इसलिये कि यह ऐबदार था, और अब तो यह मुर्दा है, इस लाश को लेकर हम क्या करेंगे? उसके बाद आपने फ़रमाया कि यह सारी दुनिया और इसके माल व दौलत अल्लाह तआ़ला के नज़्दीक इससे ज़्यादा बे हक़ीक़त और बे हैसियत है जितना बकरी का यह मुर्दा बच्चा तुम्हारे नज़्दीक बे हक़ीक़त है।

सारी दुनिया उनकी ग़ुलाम हो गयी

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बात सहाबा-ए-किराम के दिलों में बिठा दी कि दुनिया से दिल मत लगाओ, दुनिया की तरफ़ रग़बत का इज़्हार मत करो। ज़रूरत के वक़्त दुनिया को इस्तेमाल ज़रूर करो, लेकिन मुहब्बत न करो, यही वजह है कि जब दुनिया सहबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के दिल से निकल गयी तो फिर अल्लाह तआ़ला ने सारी दुनिया को उनका ग़ुलाम बना दिया, किस्रा (ईरानी बादशाह) उनके क़दमों में आकर ढेर हुआ, क़ैसर (रूम का बादशाह) उनके क़दमों में आकर ढेर हुआ, और उन्हों ने उनके माल व दौलत की तरफ़ नज़र उठा कर नहीं देखा।

शाम के गवर्नर हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ि०

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़माने में हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अ़न्हु को शाम का गवर्नर बना दिया गया, इसलिये कि शाम का अक्सर इलाक़ा उन्हों ने ही फ़तह किया था। उस वक़्त शाम एक बहुत बड़ा इलाक़ा था आज उस शाम के इलाक़े में चार

मुल्क बने हुए हैं, यानी शाम, उर्दुन, फ़िलिस्तीन, लबनान। और उस वक़्त ये चारों मिल कर इस्लामी रियासत का एक सूबा था और हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु उसके गवर्नर थे, और शाम का सूबा बड़ा हरा भरा और सर सब्ज़ था। माल व दौलत की रेल पेल थी और रूम का पसन्दीदा और चहीता इलाक़ा था। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु मदीना मुनव्वरा में बैठ कर सारी इस्लामी हुकूमत की कमान संभाले हुए थे, चुनांचे वह एक बार मुआयने के लिये शाम के दौरे पर तशरीफ़ लाये, शाम के दौरे के दरमियान एक मर्तबा हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि ऐ उबैदा! मेरा दिल चाहता है कि मैं अपने भाई का घर देखूं जहां तुम रहते हो।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के ज़ेहन में यह था कि अबू उबैदा इतने बड़े सूबे के गवर्नर बन गये हैं और यहां माल व दौलत की रेल पेल है इसलिये उनका घर देखना चाहिये कि उन्हों ने क्या कुछ जमा किया है।

शाम के गवर्नर के रहने की जगह

हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु ने जवाब दिया कि अमीरुल मोमिनीन! आप मेरे घर को देख कर क्या करेंगे, इसलिये कि जब आप मेरे घर को देखेंगे तो आंखें निचोड़ने के सिवा कुछ हासिल न होगा, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने इसरार फ़र्माया कि मैं देखना चाहता हूं। चुनांचे हज़रत उबैदा अमीरुल मोमिनीन को लेकर चले, शहर के अन्दर से गुज़र रहे थे, जाते जाते जब शहर की आबादी ख़त्म हो गयी तो हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने पूछा कि कहां लेजा रहे हो? हज़रत उबू उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु ने जवाब दिया कि बस अब तो क़रीब है। चुनांचे पूरा दमिश्क़ शहर जो दुनिया के माल व असबाब से जगमगा रहा था, गुज़र गया तो आख़िर में लेजा कर खजूर के पत्तों से बना हुआ एक झोंपड़ा दिखाया, और फ़रमायाः अमीरुल मोमिनीन! मैं इसमें रहता हूं। जब हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु अन्दर

दाख़िल हुये तो चारों तरफ़ नज़रें घुमा कर देखा तो वहां सिवाये एक मुसल्ले के कोई चीज़ नज़र नहीं आयी, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़िय–ल्लाहु अन्हु ने पूछा कि ऐ अबू उबैदा! तुम इसमें रहते हो? यहां तो कोई साज़ व सामान, कोई बर्तन, खाने पीने और सोने का इन्तिज़ाम कुछ भी नहीं है, तुम यहां कैसे रहते हो।

उन्हों ने जवाब दिया कि अमीरुल मोमिनीन अल्हम्दु लिल्लाह मेरी ज़रूरत के सारे सामान मयस्सर हैं, यह मुसल्ला है, इस पर नमाज़ पढ़ लेता हूं और रात को इसी पर सो जाता हूं और फिर अपना हाथ ऊपर छप्पर की तरफ़ बढ़ाया और वहां से एक प्याला निकाला, जो नज़र नहीं आ रहा था, और वह प्याला निकाल कर दिखाया कि अमीरुल मोमिनीन! बर्तन यह है। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब उस बर्तन को देखा तो उसमें पानी भरा हुआ था और सूखी रोटी के टुकड़े भीगे हुये थे, और फिर हज़रत अबू उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अमीरुल मोमिनीन! मैं दिन रात तो हुकूमत के सरकारी कामों में मसरूफ़ रहता हूं, खाने वग़ैरह का इन्तिज़ाम करने की फ़ुर्सत नहीं होती, एक औरत मेरे लिये दो तीन दिन की रोटी एक वक़्त पका देती है, मैं उस रोटी को रख लेता हूं और जब वह सूख जाती है तो मैं उसको पानी में डुबो देता हूं और रात को सोते वक़्त खा लेता हूं।

(सियर आलामुन–नुबला)

बाज़ार से गुज़रा हूं ख़रीदार नहीं हूं

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह हालत देखी तो आंखों में आंसू आ गये, हज़रत अबू उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अमीरुल मोमिनीन! मैं तो आपसे पहले ही कह रहा था कि मेरा मकान देखने के बाद आपको आंखें निचोड़ने के सिवा कुछ हासिल न होगा। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि ऐ अबू उबैदा! इस दुनिया की रेल पेल ने हम सब को बदल दिया, मगर ख़ुदा की क़सम तुम वैसे हो जैसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के

ज़माने में थे, इस दुनिया ने तुम पर कोई असर नहीं डाला। हक़ीक़त में यही लोग इसके मिसदाक़ हैं कि:

बाज़ार से गुज़रा हूं ख़रीदार नहीं हूं।

सारी दुनिया आंखों के सामने है, इसकी दिल कशियां भी सामने हैं और इसकी रानाईयां भी सामने मौजूद हैं और दूसरे लोग जो दुनिया की रेल पेल में घिरे हुये हैं वे सब सामने हैं लेकिन आंखों में कोई जचता नहीं है, इसलिये कि अल्लाह जल्ल जलालुहू की मुहब्बत इस तरह दिल पर छाई हुई है कि सारी दुनिया के जगमग करते हुये मनाज़िर धोखा नहीं दे सकते, अल्लाह तआला की मुहब्बत हर वक़्त दिल व दिमाग़ पर मुसल्लत और तारी है, हमारे हज़रत मज्ज़ूब साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि:

जब महर नुमायां हुआ सब छुप गये तारे
तू मुझ को भरी बज़्म में तन्हा नज़र आया (मज्ज़ूब)

ये सहाबा-ए-किराम थे जिनके क़दमों में दुनिया ज़लील होकर आयी, लेकिन दुनिया की मुहब्बत को दिल में जगह नहीं दी। हक़ीक़त में यह नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरबियत थी। आपने बार बार सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को दुनिया की हक़ीक़त की तरफ़ मुतवज्जह किया और बार बार दुनिया की ना पायदारी की तरफ़ और आख़िरत की हमेशगी और दाइमी नेमतों और अज़ाबों की तरफ़ मुतवज्जह किया जिससे क़ुर्आन व हदीस भरे हुये हैं।

एक दिन मरना है

इन्सान ज़रा सोचे तो सही कि यह दुनिया किस वक़्त तक की है? एक दिन की, दो दिन की, तीन दिन की, किसी को पता है कि कब तक इस दुनिया में रहूंगा? क्या उसको यक़ीन है कि मैं अगले घन्टे बल्कि अगले लम्हे ज़िन्दा रहूंगा? बड़े से बड़ा वैज्ञानिक, बड़े से बड़ा फ़ल्सफ़ी, बड़े से बड़ा ओहदे दार यह नहीं बता सकता कि इस दुनिया की ज़िन्दगी कितनी है? लेकिन इसके बावजूद इन्सान दुनिया का साज़

व सामान इकट्ठा करने में लगा हुआ है, और दिन रात दुनिया की दौड़ धूप लगी है और सुबह से शाम तक इसी का चक्कर चल रहा है, और जिस दिन बुलावा आयेगा सब कुछ छोड़ कर चला जायेगा, कोई चीज़ साथ नहीं जायेगी।

"दुनिया" धोखे का सामान है

इसी वजह से कुरआने करीम की यह आयत:

"وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ" (سورة حديد:٢٠)

यह बता रही है कि दुनियावी ज़िन्दगी धोखे का सौदा है, इस धोखे के सौदे में इस तरह न पड़ जाना कि वह तुम्हें आख़िरत से ग़ाफ़िल कर दे, इस दुनिया से ज़रूर गुज़रो मगर इससे धोखा न खाओ। अगर यह बात दिल में उतर जाये तो फिर चाहे तुम्हारी कोठियां खड़ी हों या बंगले खड़े हों या मिल हों, या दुनिया का साज़ व सामान हो या माल व दौलत और बैंक बेलैंस हो, लेकिन इनकी मुहब्बत दिल में नहीं है, तो फिर ज़ाहिद हो अल्हम्दु लिल्लाह फिर तुम्हें ज़ुहद की नेमत हासिल है।

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि सब से ज़्यादा टोटे का सौदा उस शख़्स का है जिसने दुनिया में कमाया तो कुछ भी नहीं और मुफ़्लिस है मगर दिल में दुनिया की मुहब्बत भरी है, तो उस शख़्स को ज़ुहद हासिल नहीं है, उसको ज़ाहिद नहीं कहेंगे। इसलिये कि वह दुनिया के इश्क़ व मुहब्बत में मुब्तला है और ऐसा शख़्स बड़े ख़सारे (टोटे) में है।

"ज़ुहद" कैसे हासिल हो?

अब सवाल यह है कि यह चीज़ कैसे हासिल हो? इसके हासिल करने का तरीक़ा यह है कि इन्सान कुरआन व हदीस के इन इरशादात पर ग़ौर करे और मौत का और अल्लाह तआला के सामने पेश होने का मुराक़बा (ध्यान) करे, और आख़िरत की नेमतों का, आख़िरत के अ़ज़ाब का, दुनिया की ना पायदारी का मुराक़बा करे और उसके लिये रोज़ाना

पांच दस मिन्ट का वक्त निकाले। इससे रफ़्ता रफ़्ता दुनिया की मुहब्बत दिल से ख़त्म होगी। अल्लाह तआला हम सब को दुनिया की हकीकत समझने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

क्या माल व दौलत का नाम दुनिया है?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ:

وَابْتَغِ فِيْ مَآ اٰتَاكَ اللّٰهُ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ، وَلَا تَنْسَ نَصِيْبَكَ مِنَ الدُّنْيَا وَاَحْسِنْ كَمَآ اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ وَلَاتَبْغِ الْفَسَادَ فِي الْاَرْضِ، اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ.

(سورة القصص:۷۷)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم، وصدق رسوله النبي الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمدلله رب العالمين.

बुज़ुर्गाने मुहतरम और प्यारे भाईयो! अभी जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की है, उसकी थोड़ी सी तशरीह इस मुख़्तसर वक़्त में करना चाहता हूं, अल्लाह तआला सही तौर पर अपनी कामिल रिज़ा के मुताबिक़ बयान करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

एक गलत फ़हमी

इस आयत का इन्तिख़ाब मैंने इसलिये किया कि आज एक बहुत बड़ी ग़लत फ़हमी अच्छे ख़ासे पढ़े लिखे लोगों में भी कस्रत के साथ पाई जाती है और इस ग़लत फ़हमी का इलाज और इसका इज़ाला कुरआने करीम की इस आयत में किया गया है। ग़लत फ़हमी यह है कि अगर कोई शख़्स आजकी इस दुनिया में दीन के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारना चाहे, और इस्लाम के अहकाम पर अमल करते हुये अपनी ज़िन्दगी बसर करना चाहे तो उसे दुनिया छोड़नी होगी, दुनिया का ऐश व आराम, दुनिया की आसाइश छोड़नी होगी और दुनिया के माल व

असबाब को छोड़े बग़ैर और उससे नज़र हटाए बग़ैर इस दुनिया में इस्लाम के मुताबिक़ और दीन के मुताबिक़ ज़िन्दगी नहीं गुज़ारी जा सकती। और ग़लत फ़हमी का मंशा हक़ीक़त में यह है कि हमें यह बात मालूम नहीं कि इस्लाम ने दुनिया के बारे में क्या तसव्वुर पेश किया है? यह दुनिया क्या चीज़ है? दुनिया के माल व असबाब और इसके ऐश व आराम की हक़ीक़त क्या है? किस हद तक इसे इख़्तियार किया जा सकता है? और किस हद इससे बचना ज़रूरी है? यह बात ज़ेहनों में पूरी तरह वाज़ेह नहीं है।

कुरआन व हदीस में दुनिया की बुराई

ज़ेहनों में थोड़ी सी उलझन इसलिये पैदा होती है कि ये जुम्ले कस्रत से कानों में पड़ते रहते हैं कि कुरआन व हदीस में दुनिया की बुराई की गयी है, एक रिवायत में है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"الدنيا جيفة وطالبوها كلاب" (كشف الخلفاء للعجلوني)

कि दुनिया एक मुर्दार जानवर की तरह है, और इसके पीछे लगने वाले कुत्तों की तरह हैं।

इस हदीस को अगरचे बाज़ उलमा ने लफ़्ज़न मौज़ू कहा है, लेकिन एक मकूले के एतिबार से इसको तसलीम किया गया है। तो दुनिया को मुर्दार क़रार दिया गया, और इसके तलबगार को कुत्ते क़रार दिया गया, इसी तरह कुरआने करीम में फ़रमाया गयाः

"وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ" (سورة آل عمران:١٨٥)

यानी यह दुनिया की ज़िन्दगी धोखे का सामान है।

कुरआने करीम में एक और जगह फ़रमाया गयाः

"اِنَّمَآ اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ" (سورة تغابن:١٥)

यानी तुम्हारा माल और तुम्हारी औलाद तुम्हारे लिये एक फ़ितना है, एक आज़माइश है।

एक तरफ़ तो कुरआन व हदीस के ये इरशादात हमारे सामने आते

हैं, जिनमें दुनिया की बुराई बयान की गयी है इस एक तरफ़ा सूरते हाल को देख कर कभी कभी दिल में यह ख़्याल पैदा होता है कि अगर मुसलमान बनना है तो दुनिया को बिल्कुल छोड़ना होगा।

दुनिया की फ़ज़ीलत और अच्छाई

लेकिन दूसरी तरफ़ आपने यह भी सुना होगा कि अल्लाह तआ़ला ने कुरआने करीम में माल को बाज़ जगह "फ़ज़्लुल्लाह" यानी अल्लाह का फ़ज़्ल क़रार दिया, तिजारत के बारे में फ़रमाया गया कि "इब्तग़ू मिन फ़ज़्लिल्लाह" कि तिजारत के ज़रिये अल्लाह के फ़ज़्ल को तलाश करना है, चुनांचे सूरः जुमा में जहां जुमे की नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया गया है, उसी के बाद आगे इरशाद फ़रमाया कि:

"فَإِذَا قُضِيَتِ الصَّلَاةُ فَانْتَشِرُوْا فِى الْاَرْضِ وَ ابْتَغُوْا مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ"

(سورة الجمعة:١٠)

कि जब जुमे की नमाज़ ख़त्म हो जाये तो ज़मीन में फैल जाओ और अल्लाह के फ़ज़्ल को तलाश करो, तो माल और तिजारत को अल्लाह का फ़ज़्ल क़रार दिया। इसी तरह बाज़ जगह कुरआने करीम ने माल को "ख़ैर" यानी भलाई क़रार दिया, और यह दुआ तो हम और आप सब पढ़ते रहते हैं कि:

"رَبَّنَآ اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِى الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ"

(سورة البقرة:٢٠١)

"रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह–स–नतंव् व फ़िल आख़ि–रति ह–स–नतंव् वक़िना अज़ाबन्नारि"

यानी ऐ अल्लाह! हमें दुनिया में भी अच्छाई अ़ता फ़रमा और आख़िरत में भी अच्छाई अ़ता फ़रमा।

तो कभी कभी ज़ेहन में यह उलझन पैदा होती है कि एक तरफ़ तो इतनी बुराई की जा रही है कि इसको मुर्दार कहा जा रहा है, इसके तलबगारों को कुत्ता कहा जा रहा है, और दूसरी तरफ़ इसको अल्लाह का फ़ज़्ल क़रार दिया जा रहा है, ख़ैर कहा जा रहा है, इसकी अच्छाई

बयान की जा रही है तो इनमें से कौन सी बात सही है?

अख़िरत के लिये दुनिया छोड़ने की ज़रूरत नहीं

वाकिआ यों है कि कुरआन व हदीस को सही तरीके से पढ़ने के बाद जो सूरते हाल वाज़ेह होती है, वह यह है कि अल्लाह तआ़ला और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हम से यह नहीं चाहते कि हम दुनिया छोड़ कर बैठ जायें, ईसाई मज़्हब में तो उस वक़्त तक अल्लाह का कुर्ब हासिल नहीं हो सकता, जब तक इन्सान बीवी बच्चों, घर बार और कारोबार को छोड़ कर न बैठ जाये, लेकिन नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जो तालीमात हमें अ़ता फ़रमायीं, उसमें यह कहीं नहीं कहा कि तुम दुनिया छोड़ दो, कमाई न करो, तिजारत न करो, माल हासिल न करो, मकान न बानाओ, बीवी बच्चों के साथ हंसो बोलो नहीं, खाना न खाओ, इस क़िस्म का कोई हुक्म शरीअ़ते मुहम्मदिया में मौजूद नहीं, हां! यह ज़रूर कहा है कि यह दुनिया तुम्हारी आख़री मन्ज़िल नहीं, यह तुम्हारी ज़िन्दगी का आख़री मक़सद नहीं। यह समझना ही ग़लत है कि हमारी जो कुछ कार्रवाई है, वह सिर्फ़ इसी दुनिया से मुताल्लिक़ है, इससे आगे हमें कुछ नहीं सोचना है, और न कुछ करना है। बल्कि यह कहा गया है कि यह दुनिया हक़ीक़त में इसलिये है कि ताकि तुम इसमें रह कर अपनी आने वाली हमेशा वाली ज़िन्दगी यानी आख़िरत की ज़िन्दगी के लिये कुछ तैयारी कर लो, और आख़िरत को भुलाये बग़ैर इस दुनिया को इस तरह इस्तेमाल करो कि इसमें तुम्हारी दुनियावी ज़रूरियात भी पूरी हों, और साथ साथ आख़िरत की जो ज़िन्दगी आने वाली है उसकी भलाई भी तुम्हारे पेशे नज़र हो।

मौत से किसी को इन्कार नहीं

यह तो एक खुली हुई हक़ीक़त है जिस से कोई बद से बदतर काफ़िर भी इन्कार नहीं कर सकता कि हर इन्सान को एक दिन मरना है, मौत आनी है, यह वह हक़ीक़त है जिस का आज तक कोई शख़्स

इन्कार नहीं कर सका, यहां तक कि लोगों ने ख़ुदा का इन्कार कर दिया, लेकिन मौत का मुन्किर आज तक कोई पैदा नहीं हुआ, किसी ने यह नहीं कहा कि मुझे मौत नहीं आयेगी, मैं हमेशा ज़िन्दा रहूंगा। और इसमें कोई इख़्तिलाफ़ नहीं कि किसी को नहीं मालूम कि किस की मौत कब आयेगी? बड़े से बड़ा साइंसदां, बड़े से बड़ा डाक्टर, बड़े से बड़ा सरमायेदार, बड़े से बड़ा फ़ल्सफ़ी, वह यह नहीं बता सकता कि मेरी मौत कब आयेगी?

असल ज़िन्दगी आख़िरत की ज़िन्दगी है

और तीसरी बात यह कि मरने के बाद क्या होना है? आज तक कोई साइन्स फ़ल्सफ़ा कोई ऐसा इल्म ईजाद नहीं हुआ जो इन्सान को बराहे रास्त यह बता सके कि मरने के बाद क्या हालात पेश आते हैं। आज मग़रिब की दुनिया यह तो तसलीम कर रही है कि कुछ ऐसे अन्दाज़े मालूम होते हैं कि मरने के बाद भी कोई ज़िन्दगी है इस नतीजे तक वे पहुंच रहे हैं, लेकिन उसके हालात क्या हैं? उसमें इन्सान का क्या हश्र बनेगा? उसकी तफ़्सीलात दुनिया की कोई साइंस नहीं बता सकती, जब यह बात तय है कि मरना है, हो सकता है कि कल ही मर जायें, और यह भी तय है कि मरने के बाद आने वाली ज़िन्दगी के हालात का बराहे रास्त मुझे इल्म नहीं, हां! एक कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" पर ईमान लाया हूं और "मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" के मायने यह हैं कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम "वही" (ख़ुदाई पैग़ाम) के ज़रिये जो भी ख़बर लेकर आये हैं, वह सच्ची बात है और उसमें झूठ का कोई इम्कान नहीं, और मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हारी असल ज़िन्दगी वह है जो मरने के बाद शुरू होने वाली है। और यह मौजूदा ज़िन्दगी एक हद पर ख़त्म हो जायेगी और वह ज़िन्दगी कभी ख़त्म होने वाली नहीं, बल्कि हमेशा रहने वाली है, उसकी कोई हद नहीं है, हमेशा हमेशा के लिये है।

इस्लाम का पैग़ाम

तो इस्लाम का पैग़ाम यह है कि दुनिया में ज़रूर रहो, और इस दुनिया की चीज़ों से ज़रूर फ़ायदा उठाओ, दुनिया से लुत्फ़ अन्दोज़ भी हो, लेकिन साथ साथ इस दुनिया को आख़री मिशन और आख़री मन्ज़िल न समझो।

दुनिया की ख़ूबसूरत मिसाल

मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने दुनिया के बारे में एक ख़ूबसूरत मिसाल दी है, और सच्ची बात यह है कि अगर यह बात ज़ेहन में हो तो दुनिया के बारे में कभी ग़लत फ़ह्मी पैदा न हो, वह फ़रमाते हैं कि दुनिया की मिसाल पानी जैसी है, और इन्सान की मिसाल कश्ती जैसी है, अगर एक कश्ती आप पानी के बग़ैर चलाना चाहें तो वह कश्ती नहीं चल सकती, कोई कश्ती ऐसी नहीं जो पानी के बग़ैर चल सकती हो, पानी कश्ती के लिये लाज़मी है, इसी तरह इन्सान दुनिया के माल व असबाब के बग़ैर और खाये कमाये बग़ैर ज़िन्दा नहीं रह सकता, लेकिन आगे फ़रमाते हैं कि यह पानी उस वक़्त तक कश्ती के लिये फ़ायदेमन्द है जब तक कि वह कश्ती के इर्द गिर्द और नीचे हो, अगर यह पानी कश्ती के अन्दर घुस आये तो वह कश्ती के लिये फ़ायदेमन्द होने के बजाये कश्ती को डुबो देगा। तो मौलाना रूमी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि दुनिया जब तक इन्सान के इर्द गिर्द और उसके चारों तरफ़ है, और इन्सान उससे अपनी ज़रूरतें पूरी कर रहा है, खा रहा है, पी रहा है, कमा रहा है, उस वक़्त तक वह उसके लिये बेह्तरीन सरमाया–ए–ज़िन्दगी है, और वह ख़ैर है और "अल्लाह का फ़ज़्ल" है लेकिन जिस दिन यह दुनिया इर्द गिर्द से हट कर दिल की कश्ती में इस तरह दाख़िल हो गयी कि हर वक़्त उसकी मुहब्बत, उसकी फ़िक्र, उसका ख़्याल इस तरह उसके दिल व दिमाग़ पर छा गया कि बस अब उसके सिवा कुछ दिखाई नहीं देता, उसके सिवा कोई ख़्याल नहीं आता, तो इसके मायने यह हैं कि यह दुनिया

तुम्हें तबाह कर रही है। फिर यह दुनिया "मताउल गुरूर" यानी धोखे का सामान है, फिर यह दुनिया "फ़ितना" है, यह दुनिया मुर्दार है और इसके तलबगार कुत्ते हैं। जो इस दुनिया को अपने इर्द गिर्द से हटा कर अपने दिल की कश्ती में सवार कर रहे हैं। (मिफ़्ताहुल उलूम)

दुनिया आख़िरत के लिये एक सीढ़ी है

हक़ीक़त में एक मुसलमान के लिये यह पैग़ाम है कि दुनिया में रहो, दुनिया को बरतो, दुनिया को इस्तेमाल करो, लेकिन फ़र्क़ सिर्फ़ नुक़्ता–ए–नज़र का है, अगर तुम दुनिया को इसलिये इस्तेमाल कर रहे हो कि यह आख़िरत की मन्ज़िल के लिये एक सीढ़ी है, तो यह दुनिया तुम्हारे लिये ख़ैर है और यह अल्लाह का फ़ज़्ल है, जिस पर अल्लाह का शुक्र अदा करो। और अगर दुनिया को इस नियत से इस्तेमाल कर रहे हो कि यह तुम्हारी आख़री मन्ज़िल है, और बस इसकी भलाई भलाई है, और इसकी अच्छाई अच्छाई है, और इससे आगे कोई चीज़ नहीं, तो फिर यह दुनिया तुम्हारे लिये हलाकत का सामान है।

दुनिया दीन बन जाती है

ये दोनों बातें अपनी जगह सही हैं कि यह दुनिया मुर्दार है जब कि इसकी मुहब्बत और इसका ख़्याल दिल व दिमाग़ पर इस तरह छा जाये कि सुबह से लेकर शाम तक दुनिया के सिवा कोई ख़्याल न आये, लेकिन अगर इस दुनिया को अल्लाह तआला के लिये इस्तेमाल कर रहे हो तो फिर यह दुनिया भी इन्सान के लिये दुनिया नहीं रहती, बल्कि दीन बन जाती है, और अज्र व सवाब का ज़रिया बन जाती है।

क़ारून को नसीहत

और दुनिया को कैसे दीन बनाया जाता है? इसका तरीक़ा क़ुरआने करीम ने इस आयत में बयान फ़रमाया है जो मैंने आपके सामने अभी तिलावत की, यह सूरः क़िसस की आयत है, और इसमें क़ारून का ज़िक्र है। यह हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के ज़माने में बहुत बड़ा सरमायेदार था, और क़ुरआने करीम ने फ़रमाया कि उसके इतने

ख़ज़ाने थे कि (उस ज़माने में दौलत ख़ज़ानों में रखी जाती थी, और बड़े मोटे भारी क़िस्म के ताले हुआ करते थे, और चाबियां भी बहुत लम्बी चौड़ी हुआ करती थीं) उसके ख़ज़ानों की चाबियां उठाने के लिये पूरी जमाअत की ज़रूरत होती थी, एक आदमी उसके ख़ज़ानों की चाबियां नहीं उठा सकता था। इतना बड़ा सरमायेदार था, अल्लाह तआला की तरफ़ से उसको जो नसीहत और पैग़ाम दिया गया था, वह इस आयत में बयान किया गया है, इस नसीहत में क़ारून से यह नहीं कहा गया कि तुम अपने इन सारे ख़ज़ानों से अलग हो जाओ, या अपना माल व दौलत आग में फेंक दो, बल्कि उसको यह नसीहत की गयी कि:

"وَابْتَغِ فِيْمَآ اٰتٰكَ اللّٰهُ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ"

कि अल्लाह तआला ने तुम्हें जो कुछ माल व दौलत, रुपया पैसा, इज़्ज़त शोहरत, मकान, सवारियां, नौकर चाकर जो कुछ भी दिया है उससे अपने आख़िरत के घर की भलाई तलब करो, उससे अपनी आख़िरत बनाओ। यह जो फ़रमाया कि "जो कुछ अल्लाह ने तुमको दिया है" इससे इस बात की तरफ़ इशारा कर दिया कि एक इन्सान चाहे कितना माहिर हो, कितना ज़हीन हो, कितना तजुर्बेकार हो, लेकिन जो कुछ वह कमाता है, वह अल्लाह तआला की अता है, वह क़ारून कहता था कि:

"اِنَّمَآ اُوْتِيْتُهٗ عَلٰى عِلْمٍ عِنْدِيْ" (سورة القصص:٧٨)

कि मेरे पास जो इल्म, जो अक़्ल और जो तजुर्बा है इसकी बदौलत मुझे यह सारी दौलत हासिल हुई है, अल्लाह तआला ने उसके जावब में फ़रमाया कि जो कुछ तुम्हें दिया गया वह अल्लाह की अता है इस दुनिया में कितने लोग ऐसे हैं जो बड़े ज़हीन हैं, मगर बाज़ार में जूतियां चटख़ाते फिरते हैं, और कोई पूछने वाला नहीं होता, अल्लाह तआला ने इस आयत में इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि एक तो इस बात का ध्यान रखो कि जो कुछ माल है, चाहे वह रुपये पैसे की शक्ल में हो, तिजारत के सामान की शक्ल में हो, मकान की

शक्ल में हो, यह सब अल्लाह की अ़ता है।

क्या सारा माल सदक़ा कर दिया जाये?

अब सवाल यह पैदा होता है कि जो कुछ हमारे पास माल है वह सारा का सारा सदक़ा कर दें? इसलिये कि बाज़ लोगों का यह ख़्याल है कि माल आख़िरत के लिये इस्तेमाल करने के मायने सिर्फ़ यह हैं कि जो कुछ भी माल है वह सदक़ा कर दिया जाये, लेकिन क़ुरआने करीम ने अगले जुम्ले में इसकी तरदीद करते हुये फ़रमाया कि:

"وَلَا تَنْسَ نَصِيْبَكَ مِنَ الدُّنْيَا"

"दुनिया में जितना हिस्सा तुम्हें मिलना है, और जो तुम्हारा हक़ है, उसको मत भूलो" और उससे हाथ मत खींच लो, बल्कि उसको अपने पास रखो, लेकिन उस माल के साथ यह मामला करो कि:

"وَاَحْسِنْ كَمَآ اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ"

"जिस तरह अल्लाह तबारक व तआ़ला ने तुम्हारे साथ एहसान किया कि तुमको यह माल अ़ता फ़रमाया, इसी तरह तुम भी दूसरों के साथ एहसान करो, दूसरों के साथ अच्छा सुलूक करो"। और आगे फ़रमाया कि:

"وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِى الْاَرْضِ"

"और उस माल को ज़मीन में फ़साद और बिगाड़ फैलाने के लिये इस्तेमाल मत करो।

ज़मीन में फ़साद का सबब

इसका मतलब यह है कि अल्लाह तबारक व तआ़ला ने जिन कामों को हराम और ना जायज़ क़रार दे दिया उनको अंजाम देने से क़ुरआने करीम की इस्तिलाह के मुताबिक़ ज़मीन में फ़साद फैलता है, माल हासिल करने के जिस तरीक़े को अल्लाह तआ़ला ने ना जायज़ बता दिया, अगर वह तरीक़ा इस्तेमाल करोगे तो ज़मीन में फ़साद फैलेगा, जैसे चोरी करके माल हासिल करना, डाका डाल कर माल हासिल करना हराम है, कोई शख़्स अगर यह तरीक़ा इख़्तियार करेगा तो

ज़मीन में फ़साद फैलेगा। कोई शख़्स दूसरे का हक़ मार कर और दूसरे को धोखा देकर फ़रेब देकर माल हासिल करेगा तो इससे ज़मीन में फ़साद फैलेगा, और सूद के ज़रिये और जुए बाज़ी के ज़रिये या और दूसरे हराम तरीक़ों से माल हासिल करेगा तो वह सब ज़मीन में फ़साद फैलाने में दाख़िल होगा, हम सबसे कुरआने करीम का मुतालबा यह है कि माल ज़रूर हासिल करें और माल को हासिल करते वक़्त इस बात का ध्यान रखें कि माल हासिल करने का यह तरीक़ा हलाल है या हराम, अगर वह हराम है तो फिर चाहे वह कितनी ही बड़ी दौलत क्यों न हो, उसको ठुकरा दो, और अगर हलाल है तो उसको इख़्तियार करो।

दौलत से राहत नहीं ख़रीदी जा सकती

याद रखिये माल अपनी ज़ात में कोई नफ़ा देने वाली चीज़ नहीं, भूख के वक़्त इन पैसों को कोई नहीं खाता, प्यास लगे तो इनके ज़रिये प्यास नहीं बुझा सकते, लेकिन इन्सान को राहत पहुंचाने का एक ज़रिया है, और राहत अल्लाह तबारक व तआला की अ़ता है। हराम तरीक़ों से माल हासिल करके अगर तुमने बहुत बेलैंस बढ़ा लिया, और बहुत ख़ज़ाने भर लिये, लेकिन उसके ज़रिये राहत हासिल होना कोई ज़रूरी नहीं, बहुत मर्तबा ऐसा होता है कि हराम दौलत के अंबार जमा हो गये, लेकिन राहत हासिल न हो सकी, रात को उस वक़्त तक नींद नहीं आ सकती जब तक कि नींद की गोलियां न खाये, माल व दौलत, मिल फैक्ट्री, तिजारत का सामान, नौकर चाकर सब कुछ है, लेकिन जब खाने के लिये दसतरख़्वान पर बैठा तो भूख नहीं लगती, और बिस्तर पर सोने के लिये लेटा, मगर नींद नहीं आती। दूसरी तरफ़ एक मज़दूर है, जो आठ घन्टे मेहनत मज़दूरी करने के बाद डट कर खाता है और आठ घन्टे की भरपूर नींद लेकर सोता है। तो अब बताइये कि उस मज़दूर को राहत मिली या इस साहिब बहादुर को जो बहुत आ़लीशान बिस्तर पर सारी रात करवटें बदलता रहा? हक़ीक़त में राहत

अल्लाह तबारक व तआ़ला की अ़ता है, अल्लाह तआ़ला का मुसलमान के साथ यह उसूल है कि अगर वह हलाल तरीक़े से दौलत हासिल करेगा तो वह उसको राहत और सुकून अ़ता करेंगे, अगर वह हराम तरीक़े से दौलत हासिल करेगा तो वह शायद दौलत के अंबार तो जमा कर ले, लेकिन जिस चीज़ का नाम सुकून है, जिसका नाम राहत है, उसको वह दौलत के अंबार में भी हासिल नहीं कर सकेगा।

दुनिया को दीन बनाने का तरीक़ा

तो पैग़ाम सिर्फ़ इतना है कि माल कमाने में हराम तरीक़ों से बचो, और तुम्हारी इस हासिल शुदा दौलत पर जो फ़राइज़ आयद किये गये हैं, चाहे वह ज़कात की शक्ल में हो, या ख़ैरात व सदक़ात की शक्ल में हो, उनको बजा लाओ, और जिस तरह अल्लाह तआ़ला ने तुम्हारे साथ एह्सान किया है तुम दूसरों के साथ एह्सान करो। अगर इन्सान यह इख़्तियार कर ले, और जो नेमत इन्सान को मिले, उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करे, तो दुनिया की सारी नेमतें और दौलतें दीन बन जायेंगी, और वे सब अज्र बन जायेंगी, फिर खाना खायेगा तो भी अज्र मिलेगा और पानी पियेगा तो भी अज्र मिलेगा, तिजारत करेगा तो भी अज्र मिलेगा, और दुनिया की और राहतें इख़्तियार करेगा तो उस पर भी अज्र मिलेगा, क्योंकि उसने इस दुनिया को अपना मक़्सद नहीं बनाया, बल्कि मक़्सद के लिये एक रास्ता और एक ज़रिया क़रार दिया है और इसके ज़रिये वह अपनी आख़िरत तलाश कर रहा है, हराम कामों से बचता है, और अपने वाजिबात को अदा करता है तो सारी दुनिया दीन बन जाती है, और वह दुनिया अल्लाह तआ़ला का "फ़ज़्ल" बन जाती है। अल्लाह तआ़ला हम सब को इस बात की सही समझ अ़ता फ़रमाये और इसके मुताबिक़ अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

अर्ज़े नाशिर

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक हदीस में मुनाफ़िक़ की तीन निशानियां बयान फ़रमायी हैं।

(1) झूठ बोलना

(2) वादा ख़िलाफ़ी करना

(3) अमानत में ख़ियानत करना।

चूंकि इन तीनों निशानियों पर हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी साहिब मद्द ज़िल्लहुम ने अलग अलग तीन जुमों में तफ़्सील के साथ बयान फ़रमाया था, इसलिये इन तीनों ख़ुतबात (तक़रीरों) को अलग अलग शाया किया जा रहा है।

मुहम्मद नासिर ख़ां
(नाशिर)

झूठ

और उसकी राइज सूरतें

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم: آية المنافق ثلاث: اذا حدث كذب، واذا وعد اخلف، واذاأوتمن خان- وفی رواية وان صام وصلی وزعم انه مسلم- (بخاری شريف)

मुनाफ़िक़ की तीन निशानियां

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तीन ख़स्लतें ऐसी हैं जो मुनाफ़िक़ होने की निशानी हैं। यानी किसी मुसलमान का काम नहीं है कि वह यह काम करे, अगर किसी इन्सान में ये बातें पाई जायें तो समझ लो कि वह मुनाफ़िक़ है। वे तीन बातें ये हैं कि जब वह बात करे तो झुठ बोले, और जब वादा करे तो उसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी (उल्लंघन) करे, और जब उसके पास अमानत रखवाई जाये तो वह ख़ियानत करे। एक रिवायत में यह इज़ाफ़ा भी है कि चाहे वह नमाज़ भी पढ़ता हो और रोज़े भी रखता हो, और चाहे वह दावा करता हो कि वह मुसलमान है। लेकिन हक़ीक़त में वह मुसलमान कहलाने का हक़दार नहीं। इसलिये कि मुसलमान होने की जो बुनियादी सिफ़तें हैं वह उनको छोड़े हुए है।

इस्लाम एक वसीअ़ (फैलाव वाला) मज़्हब है

खुदा जाने यह बात हमारे ज़ेहनों में कहां से बैठ गयी है, और हमने यह समझ लिया है कि दीन बस! नमाज़ रोज़े का नाम है, नमाज़ पढ़ ली, रोज़ा रख लिया, और नमाज़ रोज़े की पाबन्दी कर ली, बस मुसलमान हो गये, अब और कुछ हमसे किसी चीज़ का मुतालबा नहीं। चुनांचे जब बाज़ार गये तो अब वहां झूठ, फ़रेब और धोखे से माल हासिल हो रहा है, हराम और हलाल एक हो रहे हैं, इसकी कोई फ़िक्र नहीं, ज़बान का भरोसा नहीं, अमानत में ख़ियानत है, वादे का पास नहीं। इसलिये इस्लाम के बारे में यह तसव्वुर कि यह बस नमाज़ रोज़े का नाम है यह बड़ा ख़तरनाक और ग़लत तसव्वुर है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बता दिया कि ऐसा शख़्स चाहे नमाज़ भी पढ़ रहा हो, और रोज़े भी रख रहा हो, लेकिन वह मुसलमान कहलाने का हक़दार नहीं। चाहे उस पर कुफ़्र का फ़तवा न लगाओ, इसलिये कि कुफ़्र का फ़तवा लगाना बड़ी संगीन चीज़ है, और फ़तवे के एतिबार से उसको काफ़िर न क़रार दो, दायरा–ए–इस्लाम से उसको ख़ारिज न करो लेकिन ऐसा शख़्स सारे काम काफ़िरों जैसे और मुनाफ़िक़ जैसे कर रहा है।

फ़रमाया कि तीन चीज़ें मुनाफ़िक़ की निशानी हैं, नम्बर एक झूठ बोलना, दूसरे वादा ख़िलाफ़ी करना, तीसरे अमानत में ख़ियानत करना। इन तीनों की थोड़ी सी तफ़्सील अ़र्ज़ करना चाहता हूं, इसलिये कि आ़म तौर पर लोगों के ज़ेहनों में इन तीनों का तसव्वुर बहुत महदूद (सीमित) है, हालांकि इन तीनों का मफ़्हूम बहुत वसीअ़ और आ़म है, इसलिये उनकी थोड़ी सी तफ़्सील की ज़रूरत है।

ज़माना–ए–जाहिलिय्यत और झूठ

चुनांचे फ़रमाया कि सब से पहली चीज़ झूठ बोलना। यह झूठ बोलना हराम है, ऐसा हराम है कि कोई मिल्लत, कोई क़ौम ऐसी नहीं गुज़री जिसमें झूठ बोलना हराम न हो, यहां तक कि हुज़ूरे पाक के

ज़माने से पहले के लोग (जिसे जाहिलिय्यत का ज़माना कहा जाता है) के लोग भी झूठ बोलने को बुरा समझते थे। वाकिआ याद आया कि जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रूम के बादशाह की तरफ़ इस्लाम की दावत के लिये ख़त भेजा तो ख़त पढ़ने के बाद उसने अपने दरबारियों से कहा कि हमारे मुल्क में अगर ऐसे लोग मौजूद हों जो इन (हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से वाकिफ़ हों तो उनको मेरे पास भेज दो, ताकि मैं उनसे हालात मालूम करूं कि वह कैसे हैं। इत्तिफ़ाक़ से हज़रत अबू सुफ़ियान रज़ियल्लाहु अन्हु जो उस वक़्त तक मुसलमान नहीं हुये थे एक तिजारती क़ाफ़िला लेकर वहां गये हुये थे, चुनांचे लोग उनको बादशाह के पास ले आये। यह बादशाह के पास पहुंचे तो बादशाह ने सवालात करना शुरू किये, पहला सवाल यह किया कि यह बताओ कि यह (मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) किस ख़ानदान से ताल्लुक़ रखते हैं? वह कैसा ख़ानदान है? उसकी शोहरत कैसी है? उन्हों ने जवाब दिया कि वह ख़ानदान तो बड़े आला दर्जे का है, आला दर्जे के ख़ानदान में वह पैदा हुये, और सारा अरब उस ख़ानदान की शराफ़त का क़ायल है। उस बादशाह ने तसदीक़ करते हुये कहा बिल्कुल ठीक है, जो अल्लाह के नबी होते हैं वे आला ख़ानदान से होते हैं। फिर दूसरा सवाल बादशाह ने यह किया कि उनकी पैरवी करने वाले मामूली दर्जे के लोग हैं या बड़े बड़े रईस हैं। उन्हों ने जवाब दिया कि उनके मानने वालों की अक्सरियत कम दर्जे के मामूली क़िस्म के लोग हैं। बादशाह ने तसदीक़ की कि नबी के पैरोकार शुरू में ज़ईफ़ और कमज़ोर क़िस्म के लोग होते हैं। फिर सवाल किया कि तुम्हारी उनके साथ जब जंग होती है तो तुम जीत जाते हो या वह जीत जाते हैं? उस वक़्त तक चूंकि सिर्फ़ दो जंगें हुयी थीं, एक जंगे बदर और एक उहद, और ग़ज़वा–ए–उहद में चूंकि मुसलमानों को थोड़ी सी शिकस्त हुयी थी इसलिये उन्हों ने इस मौक़े पर जवाब दिया कि कभी हम ग़ालिब आ जाते हैं और कभी वह ग़ालिब आ जाते हैं।

झूठ नहीं बोल सकता था

हज़रत अबू सुफ़ियान रज़ियल्लाहु अन्हु मुसलमान होने के बाद फ़रमाते थे कि उस वक़्त तो मैं काफ़िर था इसलिये मैं फ़िक्र में था कि कोई ऐसा जुम्ला कह दूं जिस से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ख़िलाफ़ तअस्सुर क़ायम हो, लेकिन उस बादशाह ने जितने सवालात किये उनके जवाब में इस क़िस्म की कोई बात कहने का मौक़ा नहीं मिला, इसलिये कि जो वह सवाल कर रहा था उसको जवाब देना था और झूठ बोल नहीं सकता था। इसलिये जितने जवाबात दे रहा था वे सब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हक़ में जा रहे थे। बहर हाल! जाहिलिय्यत के लोग जो अभी इस्लाम नहीं लाये थे वे भी झूठ बोलने को गवारा नहीं करते थे, कहां यह कि मुसलमान इस्लाम लाने के बाद झूठ बोले? (बुख़ारी शरीफ़)

झूठा मैडिकल सर्टीफ़िकेट

अफ़्सोस कि अब इस झूठ में आ़म तौर पर लोग मुलव्वस हैं, यहां तक कि जो लोग हराम व हलाल और जायज़ व ना जायज़ का और शरीअ़त पर चलने का एहतिमाम करते हैं उनमें भी यह बात नज़र आती है कि उन्हों ने भी झूठ की बहुत सी क़िस्मों को झूठ से ख़ारिज समझ रखा है, और समझते हैं कि गोया यह झूठ ही नहीं है। हालांकि झूठ का काम कर रहे हैं, ग़लत बयानी कर रहे हैं, और उसमें दोहरा जुर्म है। एक झूठ बोलने का जुर्म और दूसरे उस गुनाह को गुनाह न समझने का जुर्म। चुनांचे एक साहिब जो बड़े नेक थे, नमाज़ रोज़े के पाबन्द, अज़्कार व अश्ग़ाल के पाबन्द, बुज़ुर्गों से ताल्लुक़ रखने वाले, पाकिस्तान से बाहर क़ियाम था। एक मर्तबा जब पाकिस्तान आये तो मेरे पास भी मुलाक़ात के लिये आ गये, मैंने उनसे पुछा कि आप कब वापस तशरीफ़ लेजा रहे हैं? उन्हों ने जवाब दिया कि मैं अभी आठ दस दिन और ठहरूंगा, मेरी छुट्टियां तो ख़त्म हो गयीं लेकिन कल ही मैंने और छुट्टी लेने के लिये एक मैडिकल सर्टीफ़िकेट भिजवा दिया है।

क्या दीन नमाज़ रोज़े का नाम है?

उन्हों ने मैडिकल सर्टीफ़िकेट भिजवाने का ज़िक्र इस अन्दाज़ से किया कि जिस तरह यह एक मामूली बात है, इसमें कोई परेशानी की बात नहीं, मैंने उनसे पूछा कि मैडिकल सर्टीफ़िकेट कैसा है? उन्हों ने जवाब दिया कि और छुट्टी लेने के लिये भेज दिया है। वैसे अगर छुट्टी लेता तो छुट्टी न मिलती, उसके ज़रिये छुट्टी मिल जायेंगी। मैंने फिर सवाल किया कि आपने उस मैडिकल सर्टीफ़िकेट में क्या लिखा था? उन्हों ने जवाब दिया कि उसमें यह लिखा था कि यह इतने बीमार हैं कि सफ़र के लायक़ नहीं हैं। मैंने कहा कि क्या दीन सिर्फ़ नमाज़ रोज़े का नाम है? ज़िक्र व शग़ल का नाम है? आपको बुज़ुर्गों से ताल्लुक़ है, फिर यह मैडिकल सर्टीफ़िकेट कैसा जा रहा है? चूंकि नेक आदमी थे इसलिये उन्हों ने साफ़ साफ़ कह दिया कि मैंने आज पहली बार आपके मुंह से यह बात सुनी कि यह भी कोई ग़लत काम है, मैंने कहा कि झूठ बोलना और किसको कहते हैं? उन्हों ने कहा कि और छुट्टी किस तरह लें? मैंने कहा कि जितनी छुट्टियों का हक़ है, उतनी छुट्टी ले लो, अगर और छुट्टी लेनी ज़रूरी हो तो बग़ैर तन्ख़्वाह के ले लो, लेकिन यह झूठा सर्टीफ़िकेट भेजने का जवाज़ तो पैदा नहीं होता।

आज कल लोग यह समझते हैं कि झूठा मैडिकल सर्टीफ़िकेट बनवाना झूठ में दाख़िल ही नहीं है, और दीन सिर्फ़ ज़िक्र व शग़ल का नाम रख दिया है, बाक़ी ज़िन्दगी के मैदान में जाकर झूठ बोल रहा हो तो उसका कोई ख़्याल नहीं।

झूठी सिफ़ारिश

एक अच्छे ख़ासे पढ़े लिखे नेक और समझदार बुज़ुर्ग का मेरे पास सिफ़ारिशी ख़त आया, उस वक़्त मैं जद्दा में था, उस ख़त में लिखा था कि यह साहिब जो आपके पास आ रहे हैं यह इन्डिया के रहने वाले हैं, अब यह पाकिस्तान जाना चाहते हैं। इसलिये आप पाकिस्तानी सिफ़ारत ख़ाने से सिफ़ारिश कर दें कि इनको पाकिस्तानी पास्पोर्ट जारी कर

दिया जाये, इस बुनियाद पर कि यह पाकिस्तानी बाशिन्दे हैं, और उनका पास्पोर्ट यहां सऊदी अरब में गुम हो गया है, और ख़ुद उन्हों ने पाकिस्तानी सिफ़ारत ख़ाने में दरख़्वास्त दे रखी है कि उनका पास्पोर्ट गुम हो गया है। इसलिये उनकी सिफ़ारिश कर दें।

अब बताइये! वहां उमरे हो रहे हैं, हज भी हो रहा है, तवाफ़ और सई भी हो रही है, और साथ में यह झूठ और फ़रेब भी हो रहा है, गोया कि यह दीन का हिस्सा नहीं है। इसको दीन से कोई ताल्लुक़ नहीं है। शायद लोगों ने यह समझ रखा है कि जब क़स्द और इरादा करके बाक़ायदा झूठ को झूठ समझ कर बोला जाये तब झूठ होता है, लेकिन डाक्टर से झूठा सर्टीफ़िकेट बनवा लेना, झूठी सिफ़ारिश लिखवा लेना या झूठे मुक़द्मे दायर कर देना, यह कोई झूठ नहीं, हालांकि अल्लाह तआला का इरशाद है:

"مَا يَلْفِظُ مِنْ قَوْلٍ اِلَّا لَدَيْهِ رَقِيْبٌ عَتِيْدٌ" (سورة ق:١٨)

यानी ज़बान से जो लफ़्ज़ निकल रहा है वह तुम्हारे आमाल नामे में रिकार्ड हो रहा है।

बच्चों के साथ झूठ न बोलो

एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सामने एक औ़रत एक बच्चे को बुला कर गोद में लेना चाहती थी, लेकिन वह बच्चा क़रीब नहीं आ रहा था, उस औ़रत ने बच्चे को बहलाने के लिये कहा, बेटा यहां आओ, हम तुम्हें चीज़ देंगे। आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसकी वह बात सुन ली और आपने औ़रत से पूछा कि तुम्हारा कोई चीज़ देने का इरादा है या वैसे ही इसको बुलाने और बहलाने के लिये कह रही हो? उस औ़रत ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मेरा खजूर देने का इरादा है कि जब वह मेरे पास आयेगा तो मैं उसको खजूर दूंगी, आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर तुम्हारा खजूर देने का इरादा न होता बल्कि सिर्फ़ बहलाने के लिये कहती कि मैं तुम्हें खजूर दूंगी, तो तुम्हारे आमाल नामे

में एक झूठ लिख दिया जाता। (अबू दाऊद शरीफ़)

इस हदीस से यह सबक़ दे दिया कि बच्चे के साथ भी झूठ न बोलो, और उसके साथ भी वादा ख़िलाफ़ी न करो, वर्ना शुरू से ही झूठ की बुराई उसके दिल से निकल जायेगी।

मज़ाक़ में झूठ न बोलो

हम लोग मज़ाक़ और तफ़रीह के लिये ज़बान से झूठी बातें निकाल देते हैं, हालांकि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मज़ाक़ में भी झूठी बातें ज़बान से निकालने से मना फ़रमाया है। चुनांचे एक हदीस में इरशाद फ़रमाया कि अफ़सोस है उस शख़्स पर, या सख़्त अल्फ़ाज़ में उसका तर्जुमा यह कर सकते हैं: उस शख़्स के लिये दर्दनाक अज़ाब है, जो सिर्फ़ लोगों को हंसाने के लिये झूठ बोलता है। (अबू दाऊद शरीफ़)

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मज़ाक़

दिल्लगी की बातें और मज़ाक़ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी किया, लेकिन कभी कोई ऐसा मज़ाक़ नहीं किया जिसमें बात ग़लत हो, या हक़ीक़त के ख़िलाफ़ हो, आपने कैसा मज़ाक़ किया। हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बुढ़िया हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में आई, और अर्ज़ किया कि या रसूल-ल्लाह मेरे लिये दुआ कर दें कि अल्लाह तआला मुझे जन्नत में पहुंचा दें, आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि कोई बुढ़िया जन्नत में नहीं जायेगी, वह बुढ़िया रोने लगी कि यह तो बड़ी ख़तरनाक बात हो गयी कि बुढ़िया जन्नत में नहीं जायेगी। फिर आपने वज़ाहत करके फ़रमाया कि इसका मतलब यह है कि कोई औरत इस हालत में जन्नत में नहीं जायेगी कि वह बूढ़ी हो, बल्कि वह जवान होकर जायेगी, तो आपने ऐसा लतीफ़ मज़ाक़ फ़रमाया कि इसमें कोई बात हक़ीक़त के ख़िलाफ़ और झूठी नहीं थी। (शमाइले तिर्मिज़ी)

मज़ाक़ का एक अनोखा अन्दाज़

एक देहाती आपकी ख़िदमत में आया, और अर्ज़ किया या रसूल-ल्लाह! मुझे एक ऊंटनी दे दीजिये, आपने फ़रमाया कि हम तुमको एक ऊंटनी का बच्चा देंगे, उसने कहा या रसूलल्लाह! मैं बच्चे का लेकर क्या करूंगा। मुझे तो सवारी के लिये ज़रूरत है। आपने फ़रमाया कि तुम्हें जो भी ऊंट दिया जायेगा वह किसी ऊंटनी का बच्चा ही तो होगा। यह आपने उससे मज़ाक़ फ़रमाया, और ऐसा मज़ाक़ जिसमें ख़िलाफ़े हक़ीक़त और ग़लत बात नहीं कही। तो मज़ाक़ के अन्दर भी इस बात का लिहाज़ रहे कि ज़बान को संभाल कर इस्तेमाल करें, और ज़बान से कोई लफ़्ज़ ग़लत न निकल जाये, और आज कल हमारे अन्दर सच्चे झूठे क़िस्से फैल गये हैं, और ख़ुश गप्पियों के अन्दर हम उनको बतौर मज़ाक़ बयान कर देते हैं। यह सब झूठ के अन्दर दाख़िल है। अल्लाह तआला हम सब को इससे महफ़ूज़ रखे, आमीन।

(शमाइले तिर्मिज़ी)

झूठा कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट

आज कल इसका आम रिवाज हो गया है, अच्छे ख़ासे दीनदार और पढ़े लिखे लोग भी इसमें मुब्तला हैं, कि झूठे सर्टीफ़िकेट जारी करते हैं, जैसे किसी को कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट की ज़रूरत पेश आ गयी, अब वह किसी के पास गया और उससे कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट हासिल कर लिया, और जारी करने वाले ने उसके अन्दर यह लिख दिया कि मैं इसको पांच साल से जानता हूं, यह बड़े अच्छे आदमी हैं, इनका अख़्लाक़ व किर्दार बहुत अच्छा है, किसी के हाशिया-ए-ख़्याल में यह बात नहीं आती कि हम यह ना जायज़ काम कर रहे हैं, बल्कि वह यह समझते हैं कि हम नेक काम कर रहे हैं, इसलिये कि यह ज़रूरत मन्द था, हमने इसकी ज़रूरत पूरी कर दी, इसका काम कर दिया, यह तो सवाब का काम है। हालांकि अगर आप उसके कैरेक्टर से वाक़िफ़ नहीं हैं तो आपके लिये ऐसा सर्टीफ़िकेट जारी करना ना जायज़ है,

कहां यह कि वह यह समझे कि मैं एक सवाब का काम कर रहा हूं। और किसी ऐसे शख़्स से कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट हासिल करना जो आपको नहीं जानता, यह भी ना जायज़ है। गोया कि सर्टीफ़िकेट लेने वाला भी गुनाहगार होगा और देने वाला भी गुनाहगार होगा।

कैरेक्टर मालूम करने के दो तरीक़े

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के सामने एक शख़्स ने किसी तीसरे शख़्स का तज़्किरा करते हुये कहा कि हज़रत! वह तो बड़ा अच्छा आदमी है, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़र्माया कि तुम जो यह कह रहे हो कि फ़लां शख़्स बड़े अच्छे अख़्लाक़ और किर्दार का आदमी है, अच्छा बताओ कि क्या कभी तुम्हारा उसके साथ लेन देन का मामला पेश आया? उसने जवाब दिया कि नहीं, लेन देन का मामला तो कभी पेश नहीं आया, फिर आपने पूछा कि अच्छा यह बताओ कि क्या तुमने कभी उसके साथ सफ़र किया? उसने कहा नहीं, मैंने कभी उसके साथ सफ़र तो नहीं किया, आपने फ़रमाया कि फिर तुम्हें क्या मालूम कि वह अख़्लाक़ व किर्दार के एतिबार से कैसा अदमी है, इसलिये कि अख़्लाक़ व किर्दार का अन्दाज़ा उस वक़्त होता है, जब इन्सान उसके साथ लेन देन करे, और वह उसमें खरा साबित हो, तब मालूम होता है कि उसका किर्दार अच्छा है, और उसके अख़्लाक़ मालूम करने का दूसरा रास्ता यह है कि उसके साथ सफ़र करे। इसलिये कि सफ़र के अन्दर इन्सान अच्छी तरह खुल कर सामने आ जाता है, उसके अख़्लाक़, उसका किर्दार, उसके हालात, उसके जज़्बात, उसके ख़्यालात, ये सारी चीज़ें सफ़र में ज़ाहिर हो जाती हैं। इसलिये अगर तुमने उसके साथ कोई लेन देन का मामला किया होता, या उसके साथ सफ़र किया होता, तब तो बेशक यह कहना दुरुस्त होता कि वह अच्छा आदमी है, लेकिन जब तुमने उसके साथ न मामला किया, न उसके साथ सफ़र किया तो इसका मतलब यह है कि तुम उसको जानते नहीं हो, और जब तुम जानते नहीं तो फिर ख़ामोश रहो, न बुरा

कहो और न अच्छा कहो। और अगर कोई शख़्स उसके बारे में पूछे तो तुम उस हद तक बता दो, जितना तुम्हें मालूम है, जैसे यह कह दो कि भाई! मस्जिद में नमाज़ पढ़ते हुये तो मैंने देखा है, बाक़ी आगे के हालात मुझे मालूम नहीं।

सर्टीफ़िकेट एक गवाही है

कुरआने करीम का इरशाद है कि:

"اِلَّا مَنْ شَهِدَ بِالْحَقِّ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ" (سورة الزخرف:٨٦)

याद रखियेः यह सर्टीफ़िकेट और यह तस्दीक़ नामा शरअ़न एक गवाही है, और जो शख़्स इस सर्टीफ़िकेट पर दस्तख़त कर रहा है वह हक़ीक़त में गवाही दे रहा है और इस आयत की रू से गवाही देना उस वक़्त जायज़ है जब आदमी को उस बात का इल्म हो, और यक़ीन से जानता हो कि यह हक़ीक़त में ऐसा है, तब इन्सान गवाही दे सकता है, उसके बग़ैर इन्सान गवाही नहीं दे सकता। आज कल होता यह है कि आपको उसके बारे में कुछ मालूम नहीं लेकिन आपने कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट जारी कर दिया, तो यह झूठी गवाही का गुनाह हुआ, और झूठी गवाही इतनी बुरी चीज़ है कि हदीस में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको शिर्क के साथ मिलाकर ज़िक्र फ़रमाया।

झूठी गवाही शिर्क के बराबर है

हदीस शरीफ़ में आता है कि एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम टेक लगाये हुये बैठे थे, सहाबा-ए-किराम से फ़रमाया कि क्या मैं तुमको बताऊं कि बड़े बड़े गुनाह कौन कौन से हैं? सहाबा-ए-किराम ने अ़र्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! ज़रूर बताइये। आपने फ़रमाया कि बड़े गुनाह ये हैं कि अल्लाह के साथ किसी को शरीक ठहरानां, मां बाप की ना फ़रमानी करना। उस वक़्त तक आप टेक लगाये हुये बैठे थे फिर आप सीधे होकर बैठ गये और फिर फ़रमाया कि झूठी गवाही देना, और इस जुम्ले को तीन बार दोहराया।

(मुस्लिम शरीफ़)

अब आप इससे इसकी बुराई का अन्दाज़ा लगाइये कि एक तरफ़ तो आपने इसको शिर्क के साथ मिला कर ज़िक्र फ़रमाया, दूसरे यह कि इसको तीन बार इन अल्फ़ाज़ में इस तरह दोहराया कि पहले आप टेक लगाये हुए बैठे थे फिर आप इसके बयान के वक़्त सीधे होकर बैठ गये और ख़ुद कुरआने करीम ने भी इसको शिर्क के साथ मिलाकर ज़िक्र किया है, चुनांचे फ़रमाया कि:

"فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْاَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوْا قَوْلَ الزُّوْرَ"

(سورة الحج:٣)

यानी तुम बुत परस्ती की गन्दगी से भी बचो, और झूठी बात से बचो, इससे मालूम हुआ कि झूठी बात और झूठी गवाही कितनी ख़तरनाक चीज़ है।

सर्टीफ़िकेट जारी करने वाला गुनाहगार होगा

झूठी गवाही देना झूठ बोलने से भी ज़्यादा बुरा और ख़तरनाक है। इसलिये कि इसमें कई गुनाह मिल जाते हैं, जैसे एक झूठ बोलने का गुनाह और दूसरा दूसरे शख़्स को गुमराह करने का गुनाह, इसलिये कि जब आपने ग़लत सर्टीफ़िकेट जारी करके झूठी गवाही दी और वह झूठा सर्टीफ़िकेट जब दूसरे शख़्स के पास पहुंचा तो वह यह समझेगा कि यह आदमी बड़ा अच्छा है, और अच्छा समझ कर उससे कोई मामला करेगा, और अगर उस मामला करने के नतीजे में उसको कोई नुक़्सान पहुंचेगा तो उस नुक़्सान की ज़िम्मेदारी भी आप पर होगी, या आपने अदालत में झूठी गवाही दी और उस गवाही की बुनियाद पर फ़ैसला हो गया, तो उस फ़ैसले के नतीजे में जो कुछ किसी का नुक़्सान हुआ वह सब आपकी गर्दन पर होगा। इसलिये यह झूठी गवाही का गुनाह मामूली गुनाह नहीं है, बड़ा सख़्त गुनाह है।

अदालत में झूठ

आज कल तो झूठ का ऐसा बाज़ार गर्म हुआ कि कोई शख़्स दूसरी जगह झूठ बोले या न बोले लेकिन अदालत में ज़रूर झूठ

बोलेगा, बाज़ लागों को यहां तक कहते हुये सुना कि:

"मियां सच्ची सच्ची बात कह दो कोई अ़दालत में थोड़ी खड़े हो"

मतलब यह है कि झूठ बोलने की जगह तो अ़दालत है, वहां पर जाकर झूठ बोलना, यहां आपस में जब बात चीत हो रही है तो सच्ची सच्ची बात बता दो, हालांकि अ़दालत में जाकर झूठी गवाही देने को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने शिर्क के बराबर क़रार दिया है, और यह कई गुनाहों का मज्मूआ़ है।

मदरसे की तस्दीक़ गवाही है

इसलिये जितने सर्टीफ़िकेट मालूमात के बग़ैर जारी किये जा रहे हैं, और जारी करने वाला यह जानते हुये जारी कर रहा है कि मैं यह ग़लत सर्टीफ़िकेट जारी कर रहा हूं। जैसे किसी के बीमार होने का सर्टीफ़िकेट दे दिया, या किसी के पास होने का सर्टीफ़िकेट दे दिया, या किसी को कैरेक्टर सर्टीफ़िकेट दे दिया, ये सब झूठी गवाही के अन्दर दाख़िल हैं।

मेरे पास बहुत से लोग मदरसों की तस्दीक़ कराने के लिये आते हैं, जिसमें इस बात की तस्दीक़ करनी होती है कि यह मदरसा क़ायम है, इसमें इतनी तालीम होती है, और इस तस्दीक़ का मक़्सद यह होता है कि ताकि लोगों को इत्मीनान हो जाये कि हक़ीक़त में यह मदरसा क़ायम है, और इम्दाद का मुस्तहिक़ है, और अब इन मदरसों की तस्दीक़ लिखने को दिल भी चाहता है, लेकिन वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को देखा कि जब कभी उनके पास कोई शख़्स मदरसे की तस्दीक़ लिखवाने के लिये आता था तो आप यह उज़्र फ़रमाते हुये कहते कि भाई! यह एक गवाही है और जब तक मुझे मदरसे के हालात का इल्म न हो उस वक़्त तक मैं यह तस्दीक़ नामा जारी नहीं कर सकता, इसलिये कि यह झूठी गवाही हो जायेगी, लेकिन अगर किसी मदरसे के बारे में इल्म होता तो जितना इल्म होता उतना लिख देते।

किताब की तक़रीज़ लिखना गवाही है

बहुत से लोग किताबों पर तक़रीज़ लिखवाने आ जाते हैं कि हमने यह किताब लिखी है, आप इस पर तक़रीज़ लिख दीजिये कि यह अच्छी किताब है और सही किताब है, हालांकि जब तक इन्सान उस किताब को पूरा न पढ़े, उसका पूरा मुताला न करे, उस वक़्त तक यह कैसे गवाही दे दे कि यह किताब सही है या ग़लत है। बहुत से लोग इस ख़्याल से तक़रीज़ लिख देते हैं कि इस तक़रीज़ से इसका फ़ायदा और भला हो जायेगा, हालांकि तक़रीज़ लिखना एक गवाही है और उस गवाही में ग़लत बयानी को लोगों ने ग़लत बयानी से ख़ारिज कर दिया है। चुनांचे लोग कहते हैं कि साहिब हम तो एक ज़रा सा काम लेकर उनके पास गये थे, अगर ज़रा सा क़लम हिला देते और एक सर्टीफ़िकेट लिख देते तो उनका क्या बिगड़ जाता, यह तो बड़े बद अख़्लाक़ आदमी हैं कि किसी को सर्टीफ़िकेट भी जारी नहीं करते, भाई! बात असल में यह है कि अल्लाह तआ़ला के यहां एक एक लफ़्ज़ के बारे में सवाल होगा, जो लफ़्ज़ ज़बान से निकल रहा है, जो लफ़्ज़ क़लम से लिखा जा रहा है, सब अल्लाह तआ़ला के यहां रिकार्ड हो रहा है, और उसके बारे में सवाल होगा कि फ़लां लफ़्ज़ तुमने जो ज़बान से निकाला था वह किस बुनियाद पर निकाला था, जान बूझ कर बोला था या भूल कर बोला था।

झूठ से बचिये

भाई! हमारे मुआ़शरे (समाज) में जो झूठ की वबा फैल गयी है, इसमें अच्छे ख़ासे दीनदार, पढ़े लिखे, नमाज़ी, बुज़ूर्गों से ताल्लुक़ रखने वाले, वज़ीफ़े और तसबीह पढ़ने वाले भी मुब्तला हैं, वे भी इसको ना जायज़ और बुरा नहीं समझते कि यह झूठा सर्टीफ़िकेट जारी हो जायेगा तो यह कोई गुनाह होगा, हालांकि हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह जो फ़रमाया कि "इज़ा ह–द–स कज़ि–ब" (यानी जब बात करे तो झूठ बोले) इसमें ये सब बातें भी

दाख़िल हैं, और ये सब दीन का हिस्सा हैं, और इनको दीन से ख़ारिज समझना बदतरीन गुमराही है, इसलिये इनसे बचना ज़रूरी है।

झूठ की इजाज़त के मौक़े

लेकिन बाज़ मौक़े ऐसे होते हैं कि उनमें अल्लाह तआ़ला ने झूठ की भी इजाज़त दे दी है। लेकिन वह मौक़े ऐसे हैं कि जहां इन्सान अपनी जान बचाने के लिये झूठ बोलने पर मजबूर हो जाये, और जान बचाने के लिये इसके अ़लावा कोई रास्ता न हो, या कोई ना क़ाबिले बर्दाश्त ज़ुल्म और तक्लीफ़ का अन्देशा हो, कि अगर वह झूठ नहीं बोलेगा तो वह ऐसे ज़ुल्म का शिकार हो जायेगा जो क़ाबिले बर्दाश्त नहीं है, इस सूरत में शरीअ़त ने झूठ बोलने की इजाज़त दी है। लेकिन इसमें भी हुक्म यह है कि पहले इस बात की कोशिश करो कि साफ़ झूठ बोलना न पड़े, बल्कि ऐसा कोई गोल मोल लफ़्ज़ बोल दो जिस से वक़्ती मुसीबत टल जाये, जिसको शरीअ़त की इस्तिलाह में "तारीज़ और तोरिया" कहा जाता है, जिसका मतलब यह है कि कोई ऐसा लफ़्ज़ बोल दिया जाये, जिसके ज़ाहिरी तौर पर कुछ और मायने समझ में आ रहे हैं और हक़ीक़त में दिल के अन्दर आपने कुछ और मुराद लिया है। ऐसा गोल मोल लफ़्ज़ बोल दो ताकि खुला झूठ न बोलना पड़े।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० का झूठ से बचना

हिजरत के मौक़े पर जब हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ मदीने की तरफ़ हिजरत फ़रमा रहे थे, तो उस वक़्त मक्का वालों ने आपको पकड़ने के लिये चारों तरफ़ अपने हरकारे दौड़ा रखे थे। और ऐलान कर रखा था कि जो शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को पकड़ कर लायेगा उसको सौ ऊंट इनाम के तौर पर दिये जायेंगे। अब उस वक़्त सारे मक्के के लोग आपकी तलाश में लगे हुए थे, रास्ते में हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के जानने वाला एक शख़्स मिल गया,

वह हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को जानता था मगर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नहीं जानता था. उस शख़्स ने हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु से पूछा कि यह तुम्हारे साथ कौन साहिब हैं? अब हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु यह चाहते थे कि आपके बारे में किसी को पता न चले, इसलिये कि कहीं ऐसा न हो कि दुश्मनों तक आपके बारे में इत्तिला पहुंच जाये, अब अगर उस शख़्स के जवाब में सही बात बताते हैं तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की जान को ख़तरा है, और अगर नहीं बताते तो झूठ बोलना लाज़िम आता है, अब ऐसे मौके पर अल्लाह तआ़ला ही अपने बन्दों की रहनुमाई फ़रमाते हैं। चुनांचे हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़िय-ल्लाहु अन्हु ने जवाब दिया कि:

"هذا الرجل يهدينى السبيل"

"यह मेरे रहनुमा हैं, जो मुझे रास्ता दिखाते हैं"। अब आपने ऐसा लफ़्ज़ अदा किया जिसको सुन कर उस शख़्स के दिल में ख़्याल आया कि जिस तरह आम तौर पर सफ़र के दौरान रास्ता बताने के लिये कोई रहनुमा साथ रख लेते हैं, इस किस्म के रहनुमा साथ जा रहे हैं, लेकिन हज़रत सिद्दीके अक्बर ने दिल में यह मुराद लिया कि यह दीन का रास्ता दिखाने वाले हैं, जन्नत का रास्ता दिखाने वाले हैं, अल्लाह तआ़ला का रास्ता दिखाने वाले हैं। अब देखिये कि उस मौके पर उन्हों ने खुला झूठ बोलने से पर्हेज़ फ़र्माया बल्कि ऐसा लफ़्ज़ बोल दिया जिस से वक्ती काम चल गया और झूठ भी नहीं बोलना पड़ा।

(बुख़ारी शरीफ़)

जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला यह फ़िक्र अता फ़रमा देते हैं कि ज़बान से कोई कलिमा हकीकत के ख़िलाफ़ और झूठ न निकले, फिर अल्लाह तआ़ला उनकी इस तरह मदद भी फ़रमाते हैं।

हज़रत गंगोही रहमतुल्लाहि अलैहि और झूठ से बचना

हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही रहमतुल्लाहि अलैहि जिन्हों ने

1857 की जंगे आज़ादी में अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद में बड़ा हिस्सा लिया था, आपके अ़लावा हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह साहिब मुहाजिरे मक्की वग़ैरह इन सब हज़रात ने उस जिहाद में बड़े नुमायां कारनामे अन्जाम दिये, अब जो लोग उस जिहाद में शरीक थे आख़िर कार अंग्रेज़ों ने उनको पकड़ना शुरू किया। चौराहें पर फ़ांसी के तख़्ते पर लटका दिये।

जिसे देखा हाकिमे वक़्त ने
कहा यह भी सहिबे दार है

और हर हर मौहल्ले में मजिस्ट्रेटों की मसनूई अ़दालतें क़ायम कर दी थीं, जहां कहीं किसी पर शुबह हुआ, उसको मजिस्ट्रेट की अ़दालत में पेश किया गया, और उसने हुक्म जारी कर दिया कि इसको फ़ांसी पर चढ़ा दो, फ़ांसी पर उसको लटका दिया गया। उसी दौरान एक मुक़द्दमा मेरठ में हज़रत गंगोही रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के ख़िलाफ़ भी क़ायम किया गया, और मजिस्ट्रेट के यहां पेशी हो गयी। जब मजिस्ट्रेट के पास पहुंचे तो उसने पूछा कि तुम्हारे पास हथियार हैं? इसलिये कि इत्तिला यह मिली थी कि उनके पास बन्दूकें हैं, और हक़ीक़त में हज़रत के पास बन्दूकें थीं, चुनांचे जिस वक़्त मजिस्ट्रेट ने यह सवाल किया, उस वक़्त हज़रत के हाथ में तसबीह थी, आपने वह तसबीह उसको दिखाते हुये फ़रमाया कि हमारा हथियार यह है, यह नहीं फ़रमाया कि मेरे पास हथियार नहीं है, इसलिये कि यह झूठ हो जाता, आपका हुलिया भी ऐसा था कि बिल्कुल दुर्वेश सिफ़त मालूम होते थे।

अल्लाह तआ़ला अपने बन्दों की मदद भी फ़रमाते हैं, अभी सवाल व जवाब हो रहा था कि इतने में कोई देहाती वहां आ गया, उसने जब देखा कि हज़रत से इस तरह सवाल व जवाब हो रहे हैं तो उसने कहा कि अरे! इसको कहां से पकड़ लाये, यह तो हमारे मौहल्ले का मुअज़्ज़िन है, इस तरह अल्लाह तआ़ला ने आपको छुटकारा अ़ता फ़रमाया।

हज़रत नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि और झूठ से बचना

हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के ख़िलाफ़ गिरफ़्तारी के वारन्ट जारी हो चुके हैं, चारों तरफ़ पुलिस तलाश करती फिर रही है और आप छत्ते की मस्जिद में तश्रीफ़ रखते हैं, वहां पुलिस पहुंच गयी, मस्जिद के अन्दर आप अकेले थे। हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का नाम सुन कर ज़ेहनों में तसव्वुर आता था कि आप बहुत बड़े आ़लिम हैं तो आप शानदार क़िस्म का लिबास और जुब्बा कुब्बा पहनते होंगे, वहां तो कुछ भी नहीं था। आप तो हर वक़्त एक मामूली लुंगी एक मामूली कुरता पहने हुये थे, जब पुलिस अन्दर दाख़िल हुई तो यह समझा कि यह मस्जिद का कोई ख़ादिम है, चुनांचे पुलिस ने पूछा कि मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब कहां हैं? आप फ़ौरन अपनी जगह से खड़े हुये और एक क़दम पीछे हट कर कहा कि अभी थोड़ी देर पहले तो यहां थे, और इसके ज़रिये यह तअस्सुर दिया कि इस वक़्त यहां मौजूद नहीं हैं, लेकिन ज़बान से यह झूठा कलिमा नहीं निकाला कि यहां नहीं हैं, चुनांचे वह पुलिस वापस चली गयी।

अल्लाह तआ़ला के बन्दे ऐसे वक़्त में भी, जबकि जान पर बनी हुयी हो, उस वक़्त भी यह ख़्याल रहता है कि ज़बान से कोई ग़लत लफ्ज़ न निकले, जबान से खुला झूठ न निकले। और अगर कभी मुश्किल वक़्त आ जाये तो उस वक़्त भी तोरिया करके और गोल मोल बातें करके काम चल जाये, यह बेह्तर है। लेकिन अगर जान पर बन जाये, जान जाने का ख़तरा हो, या शदीद ना क़ाबिले बर्दाश्त ज़ुल्म का अन्देशा हो और तोरिये से और गोल मोल बात करने से भी बात न बने तो उस वक़्त शरीअ़त ने झूठ बोलने की इजाज़त दे दी है। लेकिन इस इजाज़त को इतनी कसरत के साथ इस्तेमाल करना, जिस तरह आज इस्तेमाल हो रहा है, यह सब हराम है, और इसमें झूठी गवाही का

गुनाह है, अल्लाह तआला हम सबको इससे हिफ़ाज़त फ़रमाये, आमीन।

बच्चों के दिलों में झूठ की नफ़रत

बच्चों के दिल में झूठ की नफ़रत पैदा करें, ख़ुद भी शुरू से झूठ से बचने की आदत डालें और बच्चों से इस तरह बात करें कि उनके दिलों में भी झूठ की नफ़रत पैदा हो जाये, और सच्चाई की मुहब्बत पैदा हो। इसलिये बच्चों के सामने कभी ग़लत बात या कोई झूठ न बोलें, इसलिये कि जब बच्चा यह देखता है कि बाप झूठ बोल रहा है, मां झूठ बोल रही है तो फिर बच्चे के दिल से झूठ बोलने की नफ़रत ख़त्म हो जाती है और वह यह समझता है कि यह झूठ बोलना तो रोज़ाना का मामूल है, इसलिये बचपन ही से बच्चों में इस बात की आदत डाली जाये कि ज़बान से जो बात निकले वह पत्थर की लकीर हो, उसमें कोई ग़लती न हो, और हकीकत के ख़िलाफ़ कोई बात न हो। देखिये! नुबुव्वत के बाद सब से ऊंचा मकाम "सिद्दीक़" का मकाम है और "सिद्दीक़" के मायने हैं "बहुत सच्चा" जिसके कौल में ख़िलाफ़े वाकिआ बात का शुबह भी न हो।

झूठ अमल से भी होता है

झूठ जिस तरह ज़बान से होता है, कभी कभी अमल से भी होता है। इसलिये कि कभी कभी इन्सान ऐसा अमल करता है जो हकीकत में झूठा अमल होता है। हदीस में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि:

"المتشبع بمالم يعط كلا بس ثوبي زور" (ابوداؤد شریف)

यानी जो शख़्स अपने अमल से अपने आपको ऐसी चीज़ का हामिल करार दे जो उसके अन्दर नहीं है तो वह झूठ का लिबास पहनने वाला है। मतलब इसका यह है कि कोई शख़्स अपने अमल से अपने आपको ऐसा ज़ाहिर करे जैसा कि हकीकत में नहीं है, यह भी गुनाह है। जैसे एक शख़्स जो हकीकत में बहुत मालदार नहीं है लेकिन वह अपने आपको अपनी अदाओं से, अपने उठने बैठने से, अपने

ज़िन्दगी गुज़ारने के तरीके से अपने आपको मालदार ज़ाहिर करता है, यह भी अमली झूठ है, या इसके उलट एक अच्छा ख़ासा खाता पीता इन्सान है लेकिन अपने अमल से तकल्लुफ़ करके अपने आपको ऐसा ज़ाहिर करता है, ताकि लोग यह समझें कि इसके पास कुछ नहीं है, यह बहुत मुफ़्लिस है, नादार है, ग़रीब है। हालांकि हक़ीक़त में वह ग़रीब नहीं है। इसको भी नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अमली झूठ क़रार दिया। इसलिये अमली तौर पर कोई ऐसा काम करना जिस से दूसरे शख़्स पर ग़लत तअस्सुर क़ायम हो, यह भी झूठ के अन्दर दाख़िल है।

अपने नाम के साथ "सैयद" लिखना

बहुत से लोग अपने नामों के साथ ऐसे अल्फ़ाज़ और लक़ब लिखते हैं जो हक़ीक़त के मुताबिक़ नहीं होते, चूंकि रिवाज चल पड़ा है इसलिये बिला तह्क़ीक़ लिखना शुरू कर देते हैं। जैसे किसी शख़्स ने अपने नाम के साथ "सैयद" लिखना शुरू कर दिया जबकि हक़ीक़त में "सैयद" नहीं है, इसलिये कि हक़ीक़त में "सैयद" वह है जो बाप की तरफ़ से नसब के एतिबार से नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की औलाद में हो, वह "सैयद" है। बाज़ लोग अपनी मां की तरफ़ से नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की औलाद में से होते हैं और अपने आपको "सैयद" लिखना शुरू कर देते हैं, यह भी ग़लत है। इसलिये जब तक "सैयद" होने की तह्क़ीक़ न हो, उस वक़्त तक "सैयद" लिखना जायज़ नहीं। लेकिन तह्क़ीक़ के लिये इतनी बात काफ़ी है कि अगर ख़ानदान में यह बात मशहूर चली आती है कि ये सादात के ख़ानदान में हैं तो फिर "सैयद" लिखने में कोई हर्ज नहीं। लेकिन अगर "सैयद" होना मालूम नहीं है और न उसकी दलील मौजूद है, तो इसमें भी झूठ बोलने का गुनाह है।

लफ़्ज़ "प्रोफ़ेसर" और "मौलाना" लिखना

बाज़ लोग हक़ीक़त में "प्रोफ़ेसर" नहीं हैं, लेकिन अपने नाम के

साथ "प्रोफ़ेसर" लिखना शुरू कर देते हैं। इसलिये कि "प्रोफ़ेसर" तो एक ख़ास इस्तिलाह है, जो ख़ास लोगों के लिये बोली जाती है। या जैसे "आलिम" या "मौलाना" का लफ़्ज़ उस शख़्स के लिये इस्तेमाल होता है जो "दरसे निज़ामी" का कोर्स पढ़ कर फ़ारिग़ हो, और बाक़ायदा उसने किसी से इल्म हासिल किया हो। उसके लिये "मौलाना" का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया जाता है। अब बहुत से लोग जिन्हों ने बाक़ायदा इल्म हासिल नहीं किया, लेकिन अपने नाम के साथ "मौलाना" लिखना शुरू कर देते हैं। यह भी ख़िलाफ़े वाक़िआ है और झूठ है। इन बातों को हम लोग झूठ नहीं समझते, और हम यह नहीं समझते कि ये भी गुनाह के काम हैं। इसलिये इनसे परहेज़ करने की ज़रूरत है। अल्लाह तआ़ला हम सब को इनसे बचने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانااان الحمد لله رب العالمين

वादा ख़िलाफ़ी और उसकी राइज सूरतें

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله تعالیٰ عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم، آية المنافق ثلاث،اذا حدث كذب، واذا وعد اخلف، واذا اوتمن خان.

وفی رواية: ان صام وصلی وزعم انه مسلم. (بخاری شريف)

जहां तक हो सके "वादे" को निभाया जाये

पिछले जुमा को इस दीस में बयान की गयीं तीन निशानियों में से एक यानी झूठ पर अल्हम्दु लिल्लाह किसी क़दर तफ़सील के साथ बयान हो गया था। मुनाफ़िक़ की दूसरी निशानी जो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हदीस में बयान फ़रमाई वह यह है कि:

"اذا وعد اخلف"

कि जब वह वादा करे, तो उसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी करे। मोमिन का काम यह है कि जब वह वादा करता है तो उसको निभाता है, उसको पूरा करता है। चुनांचे शरीअ़त का क़ायदा यह है कि अगर किसी शख़्स ने कोई वादा किया और बाद में उस वादे को पूरा करने में कोई शदीद उज़्र पेश आया, या कोई रुकावट पेश आ गयी जिसकी वजह से उसके लिये उस वादे को पूरा करना मुम्किन नहीं रहा, तो उस सूरत में यह वादा करने वाला शख़्स उस दूसरे शख़्स से बता दे कि अब मेरे

लिये उस वादे को पूरा करना मुम्किन नहीं रहा। इसलिये मैं उस वादे से अलग होता हूं। जैसे एक शख़्स ने वादा किया कि मैं तुमको फ़लां तारीख़ को एक हज़ार रुपये दूंगा, बाद में उस वादा करने वाले के पास पैसे ख़त्म हो गये, और वह इस क़ाबिल नहीं रहा कि उसकी मदद कर सके और उसको एक हज़ार रुपये दे सके, तो इस सूरत में उसको बता दे कि मैंने एक हज़ार रुपये देने का वादा किया था लेकिन अब मैं इस पोज़ीशन में नहीं हूं कि उस वादे को पूरा कर सकूं। लेकिन जब तक उस वादे को पूरा करने की कुदरत है और कोई शरई उज़्र नहीं है, उस वक़्त तक उस वादे को पूरा करे।

"मंगनी" एक वादा है

जैसे किसी शख़्स ने मंगनी कर ली और किसी से रिश्ता करने के बारे में तय कर लिया तो यह मंगनी एक वादा है। इसलिये जहां तक हो सके उसको निभाना चाहिये। लेकिन अगर कोई उज़्र पेश आ जाये, जैसे मंगनी करने के बाद मालूम हुआ कि उन दोनों के दर्मियान इत्तिफ़ाक़ व इत्तिहाद क़ायम नहीं रहेगा, तबीयतों और मिज़ाजों में फ़र्क़ है, और कुछ हालात ऐसे सामने आये जो पहले मालूम नहीं थे, इस सूरत में उसको बता दे कि हमने आपसे शादी का वादा और मंगनी की थी, लेकिन अब फ़लां उज़्र की वजह से हम उसको पूरा नहीं कर सकते। लेकिन जब तक उज़्र न हो, उस वक़्त तक वादे को निभाना और उस वादे को पूरा करना शरअ़न वाजिब है, और अगर वादा पूरा नहीं करेगा तो इस हदीस का मिस्दाक़ बन जायेगा।

हज़रत हुज़ैफ़ा का अबू जह्ल से वादा

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसे ऐसे वादों को निभाया कि अल्लाहु अक्बर आज उसकी नज़ीर पेश नहीं की जा सकती। हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु मशहूर सहाबी हैं, और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के राज़दार हैं। जब यह और इनके वालिद साहिब यमान रज़ियल्लाहु अ़न्हु मुसलमान हुये तो

मुसलमान होने के बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में मदीना तैयबा आ रहे थे रास्ते में उनकी मुलाक़ात अबू जहल और उसके लश्कर से हो गयी, उस वक़्त अबू जहल अपने लश्कर के साथ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से लड़ने जा रहा था। जब हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की मुलाक़ात अबू जहल से हुई तो उसने पकड़ लिया और पूछा कि कहां जा रहे हो? उन्हों ने कहा कि हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में मदीना तैयाबा जा रहे हैं, अबू जहल ने कहा कि फिर तो हम तुम्हें नहीं छोड़ेंगे, इसलिये कि तुम मदीना जाकर हमारे ख़िलाफ़ जंग में हिस्सा लोगे, उन्हों ने कहा कि हमारा मक़्सद तो सिर्फ़ हुज़ूर की मुलाक़ात और ज़ियारत है। हम जंग में हिस्सा नहीं लेंगे। अबू जहल ने कहा कि अच्छा हमसे वादा करो कि वहां जाकर सिर्फ़ मुलाक़ात करोगे, लेकिन जंग में हिस्सा नहीं लोगे, उन्हों ने वादा कर लिया, चुनांचे अबू जहल ने आपको छोड़ दिया। आप जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुंचे, उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने सहाबा-ए-किराम के साथ ग़ज़वा-ए-बदर के लिये मदीना मुनव्वरा से रवाना हो चुके थे, और रास्ते में मुलाक़ात हो गयी।

हक़ व बातिल की पहली लड़ाई "ग़ज़वा-ए-बदर"

अब अन्दाज़ा लगाइये कि इस्लाम का पहला हक़ व बातिल का मुक़ाबला (ग़ज़वा-ए-बदर) हो रहा है, और यह मुक़ाबला वह है जिसको क़ुरआने करीम ने "यौमुल फ़ुरक़ान" फ़रमाया, यानी हक़ व बातिल के दरमियान फ़ैसला कर देने वाला मुक़ाबला, वह मुक़ाबला हो रहा है जिसमें जो शख़्स शामिल हो गया, वह "बदरी" कहलाया, और सहाबा-ए-किराम में "बदरी" सहाबा का बहुत ऊंचा मक़ाम है। और "असमा-ए-बदरिय्यीन" बतौर वज़ीफ़े के पढ़े जाते हैं। उनके नाम पढ़ने से अल्लाह तआला दुआयें क़ुबूल फ़रमाते हैं। वे "बदरिय्यीन" जिनके बारे में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह

पेशीन गोई फ़रमा दी कि अल्लाह तआला ने सारे अहले बदर, जिन्हों ने बदर में हिस्सा लिया, की बख़्शिश फ़रमा दी है। ऐसा मुक़ाबला होने वाला है।

गर्दन पर तलवार रख कर लिया जाने वाला वादा

बहर हाल! जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुलाक़ात हुई तो हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने सारा क़िस्सा सुना दिया कि इस तरह रास्ते में हमें अबू जहल ने पकड़ लिया था। और हमने यह वादा करके मुश्किल से जान छुड़ाई कि हम लड़ाई में हिस्सा नहीं लेंगे, और फिर दरख़्वास्त की कि या रसूलल्लाह! यह बदर का मुक़ाबला होने वाला है, आप इसमें तशरीफ़ लेजा रहे हैं। हमारी बड़ी ख़्वाहिश है कि हम भी इसमें शरीक हो जायें, और जहां तक उस वादे का ताल्लुक़ है, वह तो उन्हों ने हमारी गर्दन पर तलवार रख कर हमसे यह वादा लिया था कि हम जंग में हिस्सा नहीं लेंगे, और अगर हम वादा न करते तो वे हमें न छोड़ते, इसलिये हमने वादा कर लिया, लेकिन आप हमें इजाज़त दें कि हम इस जंग में हिस्सा ले लें, और फ़ज़ीलत और सआ़दत हमें हासिल हो जाये। (अल इसाबा)

तुम वादा करके ज़बान देकर आये हो

लेकिन सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जवाब में फ़रमाया कि नहीं, तुम वादा करके आये हो, और ज़बान देकर आये हो, और इसी शर्त पर तुम्हें रिहा किया गया है कि तुम वहां जाकर मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) की ज़ियारत करोगे, लेकिन उनके साथ जंग में हिस्सा नहीं लोगे, इसलिये मैं तुमको जंग में हिस्सा लेने की इजाज़त नहीं दूंगा।

ये वे मौक़े हैं जहां इन्सान का इम्तिहान होता है कि वह अपनी ज़बान और अपने वादे का कितना पास करता है। अगर हम जैसा आदमी होता तो हज़ार तावीलें कर लेता, जैसे यह तावील कर लेता कि उनके साथ जो वादा किया था वह सच्चे दिल से नहीं किया था, वह

हमसे ज़बरदस्ती लिया गया था। और खुदा जाने क्या क्या तावीलें हमारे ज़ेहनों में आ जातीं। या यह तावील कर लेता कि यह हालते उज़्र है इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ जिहाद में शामिल होना है और कुफ़्र का मुक़ाबला करना है। जब्कि वहां एक एक आदमी की बड़ी क़ीमत है। इसलिये कि मुसलमानों के लश्कर में सिर्फ़ 313 निहत्ते अफ़्राद थे। जिनके पास सिर्फ़ 70 ऊंट, 2 घोड़े और आठ तलवारें हैं। बाक़ी अफ़्राद में से किसी ने लाठी उठा ली है, किसी ने डन्डे और किसी ने पत्थर उठा लिये हैं। यह लश्कर एक हज़ार हथियार बन्द सूरमाओं का मुक़ाबला करने के लिये जा रहा है, इसलिये एक एक आदमी की जान क़ीमती है, लेकिन मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो बात कह दी गयी है, और जो वादा कर लिया गया है, उस वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी नहीं होगी।

जिहाद का मक़्सद हक़ की सर बुलन्दी

यह जिहाद कोई मुल्क हासिल करने के लिये नहीं हो रहा है, कोई हुकूमत हासिल करने के लिये नहीं हो रहा है। बल्कि यह जिहाद हक़ की सर बुलन्दी के लिये हो रहा है। और हक़ को पामाल करके जिहाद किया जाये? गुनाह का जुर्म करके अल्लाह तआ़ला के दीन का काम किया जाये? यह नहीं हो कसता। आज हम लोगों की ये सारी कोशिशें बेकार जा रही हैं, और सारी कोशिशें बे असर हो रही हैं। इसकी वजह यह है कि हम यह चाहते हैं कि गुनाह करके इस्लाम की तब्लीग़ करें, गुनाह करके इस्लाम को नाफ़िज़ करें, हमारे दिल व दिमाग़ पर हर वक़्त हज़ारों तावीलें मुसल्लत रहती हैं। चुनांचे कहा जाता है कि इस वक़्त मसलिहत का यह तक़ाज़ा है, चलो शरीअ़त के इस हुक्म को नज़र अन्दाज़ कर दो, और यह कहा जाता है कि इस वक़्त मसलिहत इस काम के करने में है, चलो यह काम कर लो।

यह है वादे का पूरा करना

लेकिन वहां तो एक ही मक़्सूद था। यानी अल्लाह तआला की रिज़ा हासिल होना, न माल मक़्सूद है, न फ़तह मक़्सूद है, न बहादुर कहलाना मक़्सूद है, बल्कि मक़्सूद यह है कि अल्लाह तआला राज़ी हो जायें, और अल्लाह तआला की रिज़ा इसमें है कि जो वादा कर लिया गया है उसको निभाओ, चुनांचे हज़रत हुज़ैफ़ा और उनके वालिद हज़रत यमान रज़ियल्लाहु अन्हुमा दोनों को ग़ज़वा-ए-बदर जैसी फ़ज़ीलत से महरूम रखा गया, इसलिये कि ये दोनों जंग में शिर्कत न करने पर ज़बान देकर आये थे, यह है वादे का का पूरा करना।

हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु

अगर आज इसकी मिसाल तलाश करें तो इस दुनिया में ऐसी मिसालें कहां मिलेंगी? हां! मुहम्मद रसूलुल्लाह के ग़ुलामों में ऐसी मिसालें मिल जायेंगी। उन्हों ने ये मिसालें क़ायम कीं। हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु उन सहाबा-ए-किराम में से हैं जिनके बारे में लोगों ने मालूम नहीं क्या क्या ग़लत प्रोपैगन्डे किये हैं। अल्लाह तआला बचाये, आमीन। लोग उनकी शान में गुस्ताख़ियां करते हैं, उनका एक क़िस्सा सुन लीजिये।

फ़तह हासिल करने के लिये जंगी तदबीर

हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु चूंकि शाम में थे इसलिये रूम की हुकूमत से उनकी हर वक़्त जंग रहती थी, उनके साथ मुक़ाबला रहता था। और रूम उस वक़्त की सुपर पॉवर समझी जाती थी, और बड़ी अज़ीमुश्शान आलमी ताक़त थी। एक मर्तबा हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने उनके साथ जंग बन्दी का मुआहदा कर लिया, और एक तारीख़ मुतअय्यन कर ली कि इस तारीख़ तक हम एक दूसरे से जंग नहीं करेंगे, अभी जंग बन्दी के मुआहदे की मुद्दत ख़त्म नहीं हुई थी। उस वक़्त हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु के दिल में ख़्याल आया कि जंग बन्दी की मुद्दत तो दुरुस्त है लेकिन इस मुद्दत के अन्दर

अपनी फ़ौजें रूमियों की सर्हद (सीमा) पर लेजा कर डाल दूं ताकि जिस वक़्त जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो, उस वक़्त मैं फ़ौरन हमला कर दूं, इसलिये कि दुश्मन के ज़ेहन में यह होगा कि जब जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म होगी फिर कहीं जाकर लश्कर रवाना होगा, और यहां आने में वक़्त लगेगा। इसलिये मुआहदा ख़त्म होते ही फ़ौरन मुसलमानों का लश्कर हमला आवर नहीं होगा, इसलिये वे हमले के लिये तैयार नहीं होंगे। इसलिये अगर मैं अपना लश्कर सर्हद पर डाल दूंगा और मुद्दत ख़त्म होते ही फ़ौरन हमला कर दूंगा तो जल्दी फ़तह हासिल हो जायेगी।

यह मुआहदे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है

चुनांचे हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी फ़ौजें सर्हद पर डाल दीं, और फ़ौज का कुछ हिस्सा सर्हद के अन्दर उनके इलाक़े में डाल दिया, और हमले के लिये तैयार हो गये, और जैसे ही जंग बन्दी के मुआहदे की आख़री तारीख़ का सूरज ग़ुरूब हुआ फ़ौरन हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने लश्कर को आगे बढ़ने का हुक्म दिया, चुनांचे जब लश्कर ने आगे बढ़ना शुरू किया तो यह चाल बड़ी कामयाब साबित हुई, इसलिये कि वे लोग इस हमले के लिये तैयार नहीं थे। और हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु का लश्कर शहर के शहर, बस्तियां की बस्तियां फ़तह करता हुआ चला जा रहा था, अब फ़तह के नशे के अन्दर पूरा लश्कर आगे बढ़ता जा रहा था, कि अचानक देखा कि अब पीछे से एक घोड़े सवार दौड़ता चला आ रहा है, उसको देख कर हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु उसके इन्तिज़ार में रुक गये कि शायद यह अमीरुल मोमिनीन का कोई नया पैग़ाम लेकर आया हो, जब वह घोड़ा क़रीब आया तो उसने आवाज़ें देना शुरू कर दीं:

"الله اكبر، الله اكبر، قفوا عبادالله قفوا عباد الله"

अल्लाह के बन्दो! ठहर जाओ, अल्लाह के बन्दो! ठहर जाओ, जब

वह और क़रीब आया तो हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने देखा कि वह हज़रत अ़मर बिन अ़ब्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हु हैं, हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने पूछा कि क्या बात है? उन्हों ने फ़रमाया किः

"وفاء ولا غدر وفاء ولا غدر"

मोमिन का शेवा वफ़ादारी है, ग़द्दारी नहीं, अ़हद तोड़ना नहीं है। हज़रत मुआ़विया रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैंने तो कोई अ़हद नहीं तोड़ा है। मैंने तो उस वक़्त हमला किया है जब जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो गयी थी। हज़रत अ़मर बिन अ़ब्सा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अगरचे जंग बन्दी की मुद्दत ख़त्म हो गयी थी लेकिन आप ने अपनी फ़ौजें जंग बन्दी की मुद्दत के दौरान ही सर्हद पर डाल दीं और फ़ौज का कुछ हिस्सा सर्हद से अन्दर भी दाख़िल कर दिया था। और यह जंग बन्दी के मुआ़हदे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी थी, और मैंने अपने इन कानों से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह फ़रमाते हुये सुना है किः

"من كان بينه وبين قوم عهد فلا يحلنه ولا يشدنه الى ان يمضى اجل له او ينبذ اليهم على سواء" (ترمذی شریف)

यानी जब तुम्हारा किसी क़ौम के साथ मुआ़हदा हो, तो उस वक़्त तक अ़हद न खोले, और न बांधे, यहां तक कि उसकी मुद्दत गुज़र जाये। या उनके सामने पहले खुल्लम खुल्ला यह ऐलान कर दे कि हमने वह अ़हद ख़त्म कर दिया। इसलिये मुद्दत गुज़रने से पहले या अ़हद के ख़त्म करने का ऐलान किये बग़ैर उनके इलाक़े के पास लेजा कर फ़ौजों को डाल देना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद के मुताबिक़ आपके लिये जायज़ नहीं था।

सारा फ़तह किया हुआ इलाक़ा वापस कर दिया

अब आप अन्दाज़ा लगाइये कि एक फ़ातेह लश्कर है, जो दुश्मन का इलाक़ा फ़तह करता हुआ जा रहा है, और बहुत बड़ा इलाक़ा फ़तह कर चुका है, और फ़तह के नशे में चूर है, लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इरशाद कान में पड़ा कि अपने अहद की पाबन्दी मुसलमान के ज़िम्मे लाज़िम है, उसी वक़्त हज़रत मुआविया रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुक्म दिया कि जितना इलाक़ा फ़तह किया है वह सब वापस कर दो, चुनांचे पूरा इलाक़ा वापस कर दिया, और अपनी सर्हद में दोबारा वापस आ गये। पूरी दुनिया की तारीख़ में कोई क़ौम इसकी नज़ीर पेश नहीं कर सकती कि उसने सिर्फ़ अहद तोड़ने की बिना पर अपना फ़तह किया हुआ इलाक़ा इस तरह वापस कर दिया हो, लेकिन यहां पर चूंकि कोई ज़मीन का हिस्सा पेशे नज़र नहीं था, कोई सत्ता और सलतनत मक़सूद नहीं थी, बल्कि मक़सूद अल्लाह तआला को राज़ी करना था। इसलिये जब अल्लाह तआला का हुक्म मालूम हो गया कि वादा ख़िलाफ़ी दुरुस्त नहीं है, और चूंकि यहां वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी का थोड़ा सा शुबह पैदा हो रहा था इसलिये वापस लौट गये। यह है वादा, कि जब ज़बान से बात निकल गयी तो अब उसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी नहीं होगी।

हज़रत फ़ारूके आज़म और मुआहदा

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब बैतुल मक़दिस फ़तह किया तो उस वक़्त वहां पर जो ईसाई और यहूदी थे, उनसे यह मुआहदा हुआ कि हम तुम्हारी हिफ़ाज़त करेंगे, तुम्हारे जान व माल की हिफ़ाज़त करेंगे, और उसके मुआवज़े में तुम हमें जिज़्या अदा करोगे। "जिज़्या" एक टैक्स होता है जो ग़ैर मुस्लिमों से वुसूल किया जाता है, चुनांचे जब मुआहदा हो गया तो वे लोग हर साल जिज़्या अदा करते थे। एक मर्तबा ऐसा हुआ कि मुसलमानों की दूसरे दुश्मनों के साथ लड़ाई पेश आ गयी, जिसके नतीजे में वह फ़ौज जो बैतुल मक़दिस में मुताय्यन थी, उनकी ज़रूरत पेश आयी। किसी ने यह मश्विरा दिया कि अगर फ़ौज की कमी है तो बैतुल मक़दिस में फ़ौजें बहुत ज़्यादा हैं इसलिये वहां से उनको महाज़ पर भेज दिया जाये। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि यह मश्विरा और तज्वीज़ तो

बहुत अच्छी है, और फ़ौजें वहां से उठा कर महाज़ पर भेज दो, लेकिन इसके साथ एक काम और भी करो, वह यह कि बैतुल मक़दिस के जितने ईसाई और यहूदी हैं उन सब को एक जगह जमा करो और उनसे कहो कि हमने आपकी जान व माल की हिफ़ाज़त का ज़िम्मा लिया था, और यह मुआहदा किया था कि हम आपकी जान व माल की हिफ़ाज़त करेंगे, और इस काम के लिये हमने वहां फ़ौज डाली थी। लेकिन अब हमें दूसरी जगह फ़ौज की ज़रूरत पेश आ गयी है, इसलिये हम आपकी हिफ़ाज़त नहीं कर सकते, इसलिये इस साल आपने हमें जो जिज़्या बतौर टैक्स अदा किया है वह हम आपको वापस कर रहे हैं, और इसके बाद हम अपनी फ़ौजों को यहां से ले जायेंगे। और अब आप अपनी हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम खुद करें। ये मिसालें हैं, और मैं किसी तरदीद के ख़ौफ़ के बग़ैर कह सकता हूं कि दुनिया में कोई क़ौम ऐसी मिसाल पेश नहीं कर सकती कि जिसने अपने मुख़ालिफ़ मज़्हब वालों के साथ इस तरह का मामला किया हो।

वादा ख़िलाफ़ी की राइज सूरतें

बहर हाल! मुनाफ़िक़ की दूसरी निशानी जो इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाई है, वह यह कि वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी और वादे को तोड़ना एक मुनाफ़िक़ की निशानी है। इससे हर मुसलमान को बचना चाहिये, लेकिन जैसे मैंने झूठ के बारे में पिछले जुमा को अ़र्ज़ किया था कि झूठ की बहुत सी सूरतें ऐसी हैं जिनको हम और आपने बिल्कुल मां का दूध समझ लिया है, और उनको झूठ की फ़िहरिस्त से ख़ारिज कर दिया है, उनको झूठ समझते ही नहीं हैं। इसी तरह वादा ख़िलाफ़ी की भी बाज़ सूरतें वे हैं जिनको वादा ख़लाफ़ी की फ़िहरिस्त से ख़ारिज कर दिया है। चुनांचे अगर किसी से पूछा जाये कि वादा ख़िलाफ़ी अच्छी चीज़ है? तो जवाब में वह यही कहेगा कि यह तो बहुत बुरी चीज़ और गुनाह है, लेकिन अ़मली ज़िन्दगी में जब मौक़ा आता है तो उस वक़्त वह वादा ख़िलाफ़ी

कर लेता है। और उसको वादा ख़िलाफ़ी समझता ही नहीं कि यह वादा ख़िलाफ़ी है।

मुल्की क़ानून की पाबन्दी करना वाजिब है

जैसे एक बात अर्ज़ करता हूं जिसकी तरफ़ आम लोगों को तवज्जोह नहीं है, और इसको दीन का मामला नहीं समझते। मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि अल्लाह तआला उनके दरजात बुलन्द फ़रमाये, आमीन। वह फ़रमाया करते थे कि "वादा" सिर्फ़ ज़बानी नहीं होता बल्कि अमली भी होता है। जैसे एक शख़्स एक मुल्क में बतौर बाशिन्दे के रहता है तो वह शख़्स अमलन उस हुकूमत से वादा करता है कि मैं आपके मुल्क के क़वानीन की पाबन्दी करूंगा, इसलिये अब उस शख़्स पर इस वादे की पाबन्दी करना वाजिब है, जब तक उस मुल्क का क़ानून उसको किसी गुनाह करने पर मजबूर न करे, इसलिये कि अगर कोई क़ानून उसको गुनाह करने पर मजबूर कर रहा है तो फिर उस क़ानून पर अमल करना जायज़ नहीं, इसलिये कि उसके बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का साफ़ इरशाद है कि:

"لا طاعة لمخلوق فی معصية الخالق" (مصنف ابن ابی شیبه)

यानी ख़ालिक़ की ना फ़रमानी में किसी मख़्लूक़ की इताअत नहीं।

इसलिये ऐसे क़ानून की पाबन्दी न सिर्फ़ यह कि वाजिब नहीं बल्कि जायज़ भी नहीं, लेकिन अगर कोई क़ानून ऐसा है जो आपको गुनाह और ना फ़रमानी पर मजबूर नहीं कर रहा है, उस क़ानून की पाबन्दी इसलिये वाजिब है कि आपने अमलन इस बात का वादा किया है कि मैं इस मुल्क के क़ानून की पाबन्दी करूंगा।

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और फ़िरऔन का क़ानून

इसकी मिसाल में हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का क़िस्सा सुनाया करते थे कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम फ़िरऔन के मुल्क में रहते थे, और नबी बनने से

पहले एक क़िब्ती को मुक्का मार कर क़त्ल कर दिया था, जिसका वाक़िआ मशहूर है, और कुरआने करीम ने भी उस वाक़िए को ज़िक्र किया है और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम उस क़त्ल पर इस्तिग़फ़ार किया करते थे, और फ़रमाते थे किः

"لَهُمْ عَلَيَّ ذَنْبٌ" (سورة الشعرآء:١٤)

यानी मेरे ऊपर उनका एक गुनाह है, और मैंने उनका एक जुर्म किया है। हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम उसको जुर्म और गुनाह क़रार देते थे और उस पर इस्तिग़फ़ार फ़रमाया करते थे, अब सवाल पैदा होता है कि वह क़िब्ती जिसको मूसा अ़लैहिस्सलाम ने क़त्ल किया था, वह तो काफ़िर था और काफ़िर भी हर्बी था, इसलिये उस हर्बी काफ़िर को क़त्ल करने में क्या गुनाह हुआ? हज़रत वालिद माजिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह इसलिये गुनाह हुआ कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम उनके शहर में रह रहे हैं तो अ़मलन इस बात का वादा कर रखा है कि हम आपके मुल्क के क़वानीन की पाबन्दी करेंगे, और उनका क़ानून यह था कि किसी को क़त्ल करना जायज़ नहीं, इसलिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने जो क़त्ल किया वह उस क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी में किया, इसलिये हर हुकूमत का हर शहरी, चाहे हुकूमत मुसलमानों की हो या ग़ैर मुस्लिम हुकूमत हो, अ़मलन इस बात का वादा करता है कि वह उस मुल्क के क़ानून की पाबन्दी करेगा, जब तक वह क़ानून किसी गुनाह पर मजबूर न करे।

"वीज़ा" लेना एक अ़मली वादा है

इसी तरह जब आप वीज़ा लेकर दूसरे मुल्क जाते हैं। चाहे वह ग़ैर मुस्लिम मुल्क हो, जैसे अमरीका या यूरप वीज़ा लेकर चले गये, यह वीज़ा लेना अ़मलन एक वादा है कि हम जहां तक हो सकेगा उस मुल्क के क़वानीन की पाबन्दी करेंगे, जब तक वह क़ानून किसी गुनाह पर मजबूर न करे। हां अगर वह क़ानून गुनाह पर मजबूर करे तो फिर उस क़ानून की पाबन्दी जायज़ नहीं। इसलिये जो क़वानीन ऐसे हैं जो

इन्सान को किसी गुनाह पर मजबूर नहीं करते, या ना क़ाबिले बरदाश्त ज़ुल्म का सबब नहीं बनते, उन क़वानीन की पाबन्दी भी वादे की पाबन्दी में दाख़िल है।

ट्रेफ़िक के क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी गुनाह है

जैसे ट्रेफ़िक का क़ानून है कि दायीं तरफ़ चलो, या बायीं तरफ़ चलो, या यह क़ानून है कि जब सिगन्ल की लाल बत्ती जले तो रुक जाओ, और जब हरी बत्ती जले तो चल पड़ो। अब एक शहरी होने की हैसियत से आपने इस बात का वादा किया है कि इन क़वानीन की पाबन्दी करूंगा, इसलिये अगर कोई शख़्स इन क़वानीन की पाबन्दी न करे तो यह वादा ख़िलाफ़ी है और गुनाह है। लोग यह समझते हैं कि अगर ट्रेफ़िक के क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी कर ली तो इसमें क्या गुनाह की बात है? यह तो बड़ी अच्छी बात है कि आदमी अपने को बड़ा सियाना और होशियार जताने के लिये ख़िलाफ़ वर्ज़ी भी कर रहा है, और क़ानून की गिरफ़्त में भी नहीं आ रहा है।

दुनिया व आख़िरत के ज़िम्मेदार आप होंगे

याद रखिये, यह कई एतिबार से गुनाह है, एक तो इस हैसियत से गुनाह है कि यह वादे की ख़िलाफ़ वर्ज़ी है, दूसरे इस हैसियत से भी गुनाह है कि यह क़वानीन तो इसलिये बनाये गये हैं कि ताकि नज़्म व ज़ब्त पैदा हो, और उसके ज़रिये से एक दूसरे को नुक़सान और तक्लीफ़ पहुंचाने के रास्ते बन्द हों, इसलिये अगर आपने क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी की, और उससे किसी को नुक़सान पहुंच गया, तो उस नुक़सान की दुनिया व आख़िरत की ज़िम्मेदारी आप पर होगी।

यह अल्लाह तआ़ला का दीन है

ये सब बातें इसलिये बता रहा हूं कि लोग यह समझते हैं कि इन बातों का दीन से क्या ताल्लुक़ है? ये तो दुनियादारी की बातें है। इनकी पाबन्दी की क्या ज़रूरत है? ख़ूब समझ लीजिये, यह अल्लाह तबारक व तआ़ला का दीन है, जो हमारी ज़िन्दगी के हर शोबे में

दाख़िल है। और दीनदारी सिर्फ़ एक शोबे की हद तक महदूद (सीमित) नहीं है। ख़ुलासा यह है कि जो क़ानून किसी गुनाह पर मजबूर करे, उसकी तो किसी हाल में भी इताअत जायज़ नहीं, और जो क़ानून ना क़ाबिले बरदाश्त ज़ुल्म करे, उसकी भी पाबन्दी नहीं करनी है, लेकिन इसके अलावा जितने क़वानीन हैं उनकी पाबन्दी शरअ़न भी हमारे ज़िम्मे वाजिब है, अगर उनकी पाबन्दी नहीं करेंगे तो वादा ख़िलाफ़ी का गुनाह होगा।

ख़ुलासा

इसलिये बहुत सी चीज़ें ऐसी हैं जिनको हम वादा ख़िलाफ़ी समझते हैं। और बहुत सी चीज़ें ऐसी हैं जिनको हम वादा ख़िलाफ़ी नहीं समझते मगर वे वादा ख़िलाफ़ी और गुनाह के अन्दर दाख़िल हैं। उनसे प्रहेज़ करने की ज़रूरत है। दीन हमारी ज़िन्दगी के हर शोबे के अन्दर दाख़िल है, इन तमाम चीज़ों का लिहाज़ न करना दीन के ख़िलाफ़ है।

मुनाफ़िक़ की दो निशानियों का बयान हो गया, तीसरी निशानी है "अमानत में ख़ियानत" इसका मामला भी ऐसा है कि इसकी अहमियत और फ़ज़ीलत तो अपनी जगह है, मगर बेशुमार काम ऐसे हैं जो "ख़ियानत" के अन्दर दाख़िल होते हैं, लेकिन हम उनको ख़ियानत नहीं समझते, अब चूंकि वक़्त ख़त्म हो रहा है, अल्लाह तआ़ला ने ज़िन्दगी अ़ता फ़रमाई तो अगले जुमा को इसके बारे में अ़र्ज़ करूंगा। जो बातें हमने कहीं और सुनीं अल्लाह तआ़ला हम सब को इन पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

ख़ियानत और उसकी राइज सूरतें

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله تعالیٰ عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم : آية المنافق ثلاث، اذا حدث كذب، واذا وعد اخلف، واذا اوتمن خان، وفی رواية وان صلی وصام وزعم انه مسلم." (صحيح بخاری)

इस हदीस में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुनाफ़िक़ की तीन निशानियां बयान फ़रमायी हैं, और इशारा इस बात की तरफ़ फ़रमा दिया कि ये तीन काम मोमिन के काम नहीं हैं, और जिसमें ये तीन बातें पायी जायें वह सही मायने में मुसलमान और मोमिन कहलाने का हक़दार नहीं। इनमें से दो का बयान पिछले दो जुमों में अल्हम्दु लिल्लाह किसी क़दर तफ़सील के साथ हो गया था। अल्लाह तआला हमें उस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

अमानत की ताकीद

मुनाफ़िक़ की तीसरी निशानी जो बयान फ़रमाई, वह है "अमानत में ख़ियानत" यानी मुसलमान का काम नहीं है कि वह अमानत में ख़ियानत करे, बल्कि यह मुनाफ़िक़ का काम है। बहुत सी आयतों और हदीसों में अमानत पर ज़ोर दिया गया है, और अमानत के तक़ाज़ों को

पूरा करने की ताकीद फ़रमाई गयी है, चुनांचे क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला का इरशाद है:

"اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰى اَهْلِهَا" (سورۃ النساء:۸۰)

यानी अल्लाह तआला तुम्हें हुक्म देते हैं कि अमानतों को उनके अहल तक और उनके हक़दारों तक पहुंचाओ, और इसकी इतनी ताकीद फ़रमाई गयी है कि एक हदीस में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि:

"لاايمان لمن لا امانة له" (مسند احمد)

यानी जिसके अन्दर अमानत नहीं, उसके अन्दर ईमान भी नहीं। गोया कि ईमान का लाज़मी तक़ाज़ा है कि आदमी अमीन हो, अमानत में ख़ियानत न करता हो।

अमानत का तसव्वुर

लेकिन आजकी मज्लिस में जिस बात की तरफ़ तवज्जोह दिलानी है, वह यह है कि हम लोगों ने इन तमाम चीज़ों का मतलब और मफ़्हूम बहुत महदूद समझा हुआ है। हमारे ज़ेहनों में अमानत का सिर्फ़ इतना तसव्वुर है कि कोई शख़्स पैसे लेकर आये और यह कहे कि यह पैसे आप बतौरे अमानत अपने पास रख लीजिये। जब ज़रूरत होगी उस वक़्त मैं आपसे वापस ले लूंगा, तो यह अमानत है। और अगर कोई शख़्स अमानत में ख़ियानत करते हुये उन पैसों को खाकर ख़त्म कर दे, या जब वह शख़्स अपने पैसे मांगने आये तो उसको देने से इन्कार कर दे तो यह ख़ियानत हुयी। हमारे ज़ेहनों में अमानत और ख़ियानत का बस इतना ही तसव्वुर है, इससे आगे नहीं है। बेशक यह भी अमानत में ख़ियानत का हिस्सा है, लेकिन क़ुरआन व हदीस की इस्तिलाह में "अमानत" इस हद तक महदूद नहीं, बल्कि "अमानत" का मफ़्हूम बहुत वसी (फैला हुआ) है, और बहुत सारी चीज़ें अमानत में दाख़िल हैं, जिनके बारे में अक्सर व बेश्तर हमारे ज़ेहनों में यह ख़्याल भी नहीं आता कि यह भी अमानत है और इसके साथ "अमानत" जैसा

सुलूक करना चाहिये।

अमानत के मायने

अर्बी ज़बान में "आमनत" के मायने यह हैं कि किसी शख़्स पर किसी मामले में भरोसा करना, इसलिये हर वह चीज़ जो दूसरे को इस तरह सुपुर्द की गयी हो, कि सुपुर्द करने वाले ने उस पर भरोसा किया हो कि यह उसका हक़ अदा करेगा, यह है अमानत की हक़ीक़त। इसलिये कोई शख़्स कोई काम या कोई चीज़ या कोई माल जो दूसरे के सुपुर्द करे, और सुपुर्द करने वाला इस भरोसे पर सुपुर्द करे कि यह शख़्स इस सिलसिले में अपने फ़रीज़े को सही तौर पर बजा लायेगा। और उसमें कोताही नहीं करेगा, यह अमानत है। इसलिये "अमानत" की इस हक़ीक़त को सामने रखा जाये तो बेशुमार चीज़ें इसमें दाख़िल हो जाती हैं।

यौमे अलस्त में इक़रार

अल्लाह तआला ने "यौमे अलस्त" में इन्सानों से जो अहद लिया था कि मैं तुम्हारा परवर्दिगार हूं या नहीं? और तुम मेरी इताअत करोगे या नहीं? तमाम इन्सानों ने इक़रार किया कि हम आपकी इताअत करेंगे, इस अहद को कुरआने करीम ने सूरः अह्ज़ाब के आख़री रुकूअ़ में अमानत से ताबीर फ़रमाया है, फ़रमाया कि:

"اِنَّا عَرَضْنَا الْاَمَانَةَ عَلَى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَالْجِبَالِ فَاَبَيْنَ اَنْ يَّحْمِلْنَهَا وَاَشْفَقْنَ مِنْهَا وَحَمَلَهَا الْاِنْسَانُ اِنَّهٗ كَانَ ظَلُوْمًا جَهُوْلًا"

(سورة الاحزاب:۷۲)

यानी हमने ज़मीन पर अमानत पेश की और उससे पूछा कि तुम इस अमानत के बोझ को उठाओगी? तो उसने इस अमानत के उठाने से इन्कार कर दिया। फिर आसमानों पर पेश की कि तूम यह अमानत उठाओगे? उन्हों ने भी इन्कार कर दिया, और फिर पहाड़ों पर यह अमानत पेश की कि तुम इस अमानत के बोझ को उठाओगे? उन्हों ने भी इस अमानत को उठाने से इन्कार कर दिया। सब इस अमानत को

उठाने से डर गये। लेकिन जब यह अमानत इस हज़रते इन्सान पर पेश की गयी तो इसने बड़े बहादुर बन कर आगे बढ़ कर इक़रार कर लिया कि मैं इस अमानत को उठाऊंगा। चुनांचे अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि यह इन्सान बड़ा ज़ालिम और जाहिल था कि इतने बड़े बोझ को उठाने के लिये आगे बढ़ गया, और यह न सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि मैं इस अमानत के बोझ को उठाने से आ़जिज़ रह जाऊं, जिसकी वजह से मेरा अन्जाम ख़राब हो जाये।

यह ज़िन्दगी अमानत है

बहर हाल, इस बोझ को अल्लाह तआ़ला ने "अमानत" के लफ़्ज़ से ताबीर फ़रमाया। यह अमानत क्या चीज़ थी जो इन्सान पर पेश की जा रही थी? चुनांचे मुफ़स्सिरीन ने फ़रमाया कि यहां अमानत के मायने यह हैं कि इस इन्सान से यह कहा जा रहा था कि तुम्हें एक ज़िन्दगी दी जायेगी और उसमें तुम्हें अच्छे काम करने का भी इख़्तियार दिया जायेगा और बुरे काम करने का भी। और जब अच्छे काम करोगे तो हमारी ख़ुश्नूदी हासिल होगी, जन्नत की हमेशा रहने वाली नेमतें तुम्हें हासिल होंगी। और अगर बुरे काम करोगे तो उसके नतीजे में तुम पर हमारा ग़ज़ब होगा, और जहन्नम का हमेशा रहने वाला अ़ज़ाब तुम पर होगा, अब बताओ तुम्हें ऐसी ज़िन्दगी मन्ज़ूर है या नहीं? चुनांचे और सबने इन्कार कर दिया, लेकिन इन्सान इसके लिये तैयार हो गया, हाफ़िज़ शीराज़ी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि इसी को बयान फ़रमाते हैं कि:

आसमान बारे अमानत नतवानद कशीद
क़ुरा–ए–फ़ाल बनामे मन दीवाना ज़द

यानी आसमान से तो यह बोझ नहीं उठा, उसने तो इन्कार कर दिया कि यह मेरे बस की बात नहीं है, लेकिन यह हज़रते इन्सान, हड्डियों के ढांचे ने यह बोझ उठा लिया, और क़ुरा–ए–फ़ाल मेरे नाम पर पड़ गया। बहर हाल! क़ुरआने करीम ने इसको "अमानत" से ताबीर फ़रमाया है।

यह जिस्म एक अमानत है

यह पूरी ज़िन्दगी हमारे पास अमानत है और इस अमानत का तक़ाज़ा यह है कि इस ज़िन्दगी को अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम के मुताबिक़ गुज़ार दें। इस लिये सब से बड़ी अमानत जो हर इन्सान के पास है, जिस से कोई इन्सान भी अलग नहीं है, वह अमानत ख़ुद उसका "वजूद" और उसकी "ज़िन्दगी" और उसके आज़ा व बदन के हिस्से हैं, उसके औक़ात, उसकी ताक़तें हैं, ये सब अमानत हैं। क्या कोई शख़्स यह समझता है कि मैं अपने इस हाथ का मालिक हूं, यह आंख जो मुझे मिली हुयी है, मैं इसका मालिक हूं, ऐसा नहीं, बल्कि ये हमारे आज़ा हमारे पास अमानत हैं, हम इनके मालिक नहीं हैं कि जिस तरह चाहें इनको इस्तेमाल करें, बल्कि आज़ा की ये नेमतें अल्लाह तआला ने हमें इस्तेमाल के लिये अता फ़रमाई हैं। इसलिये इस अमानत का तक़ाज़ा यह है कि इन आज़ा को, अपने वजूद को, अपनी सलाहियतों को और अपनी ताक़तों को उसी काम में ख़र्च करें, जिस काम के लिये ये दी गयी हैं, इसके अलावा दूसरे कामों में ख़र्च करेंगे तो यह अमानत में ख़ियानत होगी।

आंख एक नेमत है

जैसे आंख अल्लाह तआला की एक नेमत है जो उसने हमें अता फ़रमाई है और यह ऐसी नेमत है कि सारी दुनिया का माल व दौलत ख़र्च करके इसको हासिल करना चाहे तो हासिल नहीं हो सकती, लेकिन इसकी क़दर इसलिये नहीं है कि पैदाइश के वक़्त से यह सरकारी मशीन लगी हुई है, और काम कर रही है। इसके हासिल करने में न तो कोई पैसा लगा है और न कोई मेहनत करनी पड़ी है; लेकिन जिस दिन ख़ुदा न करे इस आंख की रोशनी पर मामूली सा नुक़्स आ जाये, और इस बात का अन्देशा हो कि कहीं मेरी यह रोशनी न चली जाये, उस वक़्त इसकी क़दर व क़ीमत मालूम होती है, और

उस वक़्त आदमी सारी दौलत एक आंख की बीनाई (रोशनी) के लिये ख़र्च करने पर तैयार हो जाता है। और यह ऐसी सरकारी मशीन है कि न इसकी सर्विस की ज़रूरत है न इसकी ओवर हॉलिंग की ज़रूरत, न इसका माहाना ख़र्च, न टैक्स, न किराया, बल्कि मुफ़्त मिली हुई है।

आंख एक अमानत है

लेकिन यह मशीन अल्लाह तआला ने बतौर अमानत के दे रखी है, और यह फ़रमा दिया है कि इस मशीन को इस्तेमाल करो, इसके ज़रिये दुनिया को देखो, दुनिया का नज़ारा करो, दुनिया के मनाज़िर से लुत्फ़ उठाओ, सब कुछ करो लेकिन सिर्फ़ चन्द चीज़ों को देखने से मना कर दिया कि इस सरकारी मशीन को इन कामों में इस्तेमाल न करें, जैसे हुक्म दे दिया कि इसके ज़रिये ना महरम पर निगाह न डाली जाये, अब अगर इसके ज़रिये हमने ना महरम की तरफ़ निगाह डाली तो यह अल्लाह तआला की अमानत में ख़ियानत हुई, इसी लिये कुर्आने करीम ने ना महरम की तरफ़ निगाह करने को ख़ियानत से ताबीर फ़रमाया, चुनांचे फ़रमाया कि:

"يَعْلَمُ خَآئِنَةَ الْاَعْيُنِ" (سورة غافر:۹)

यानी आंखों की ख़ियानत को अल्लाह तआला जानते हैं कि तुमने इसको ऐसी जगह इस्तेमाल किया जहां इस्तेमाल करने से अल्लाह तआला ने मना फ़रमा दिया था। यह ऐसा है जैसा कि किसी शख़्स ने दूसरे के पास अपना माल बतौरे अमानत रखवाया, और अब वह चोरी छुपे आंख बचाकर उसका माल इस्तेमाल करना चाहता है, वही मामला वह अल्लाह तआला की दी हुई नेमत के साथ भी करता है, और बेवकूफ़ को यह पता नहीं है कि अल्लाह तआला से कोई अ़मल छुप नहीं सकता। इसलिये अल्लाह तआला ने आंखों की ख़ियानत को बहुत बड़ा गुनाह और जुर्म क़रार दिया, और नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस पर वओ़ीदें (डांट डपट) बयान फ़रमायीं।

और अगर आंख की इस अमानत और नेमत को सही जगह

इस्तेमाल करो तो अल्लाह तआला की रह्मत का नुज़ूल होता है, हदीस शरीफ़ में है कि अगर एक शख़्स बाहर से घर के अन्दर दाख़िल हुआ, और उसने अपनी बीवी को मुहब्बत की निगाह से देखा, और बीवी ने शौहर को मुहब्बत की निगाह से देखा तो उस वक़्त अल्लाह तआला दोनों को रह्मत की निगाह से देखते हैं। इसलिये कि उसने इस अमानत को सही जगह पर इस्तेमाल किया, अगरचे अपनी ज़ाती लज़्ज़त के लिये, अपने फ़ायदे के लिये किया मगर चूंकि अल्लाह तआला के हुक्म के मुताबिक़ किया इसलिये उन पर अल्लाह तआला की रह्मत नाज़िल हुयी।

"कान" एक अमानत है

अल्लाह तबारक व तआला ने कान सुनने के लिये अ़ता फ़रमाया है, और फिर हर चीज़ सुनने की इजाज़त दे दी, सिर्फ़ चन्द चीज़ों पर पाबन्दी लगा दी कि तुम गाना बजाना मत सुनना, मौसीक़ी मत सुनना, ग़ीबत मत सुनना, ग़लत झूठी बातें मत सुनना, इसलिये कान इन चीज़ों के सुनने में इस्तेमाल हो रहा है तो यह अमानत में ख़ियानत है।

ज़बान एक अमानत है

"ज़बान" अल्लाह तआला की एक ऐसी नेमत है जो पैदाइश के वक़्त से चल रही है, और मरते दम तक चलती रहती है, ज़बान की ज़रा सी हर्कत से न जाने क्या क्या काम इन्सान ले रहा है, यह ज़बान इतनी बड़ी नेमत है कि अगर एक मर्तबा ज़बान को हर्कत देकर यह कह दो:

"سبحان الله والحمد لله"

"सुब्हानल्लाहि वल हम्दु लिल्लाहि"

हदीस शरीफ़ में है कि इसके ज़रिये से अ़मल की तराज़ू का आधा पलड़ा भर जाता है, इसलिये इसके ज़रिये आख़िरत की तैयारी करनी चाहिये। लेकिन अगर इस ज़बान को झूठ बोलने में इस्तेमाल किया, ग़ीबत करने में इस्तेमाल किया, मुसलमान का दिल दुखाने में इस्तेमाल

किया, दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाने में इस्तेमाल किया तो यह अमानत में ख़ियानत है।

ख़ुदकुशी क्यों हराम है?

यह तो सिर्फ़ आज़ा (जिस्म के हिस्सों) की बात थी। हमारा यह पूरा वजूद, पूरा जिस्म अल्लाह तआला की अमानत है, बाज़ लोगों का यह ख़्याल है कि यह जिस्म हमारा अपना है, इसलिये इसके साथ जो चाहें करें। हालांकि ऐसा नहीं है, बल्कि यह जिस्म अल्लाह तआला की अमानत है। इसलिये शरीअत में ख़ुदकुशी करना हराम है। अगर यह जिस्म हमारा अपना होता तो ख़ुदकुशी क्यों हराम होती। वह इसलिये हराम है कि यह जान, यह जिस्म, यह वजूद, यह आज़ा हक़ीक़त में हमारी मिल्कियत नहीं हैं, बल्कि अल्लाह तबारक व तआला की मिल्कियत हैं।

जैसे यह किताब मेरी मिल्कियत है, अब अगर मैं किसी शख़्स से कहूं कि यह किताब तुम ले जाओ, मेरे लिये जायज़ है, लेकिन अगर कोई दूसरे शख़्स से कहे कि मुझे क़त्ल कर दो, मेरी जान ले लो, अब उसने क़त्ल करने की इजाज़त दे दी, स्टाम्प पेपर पर लिख कर दे दिया, दस्तख़त कर दिये, मुहर भी लगा दी, सब कुछ कर दिया लेकिन इसके बावजूद जिसको क़त्ल की इजाज़त दी गयी है, उसके लिये क़त्ल करना जायज़ नहीं। क्यों? इसलिये कि यह जान उसकी मिल्कियत नहीं है, अगर उसकी मिल्कियत होती, तब वह दूसरे को उसके लेने की इजाज़त दे सकता था, इसलिये जब मिल्कियत नहीं तो फिर दूसरे को इजाज़त देने का भी हक़ हासिल नहीं है।

गुनाह करना ख़ियानत है

अल्लाह तआला ने यह पूरा वजूद, पूरी जान और ये सलाहियतें और तवानाईयां ये सब हमें अमानत के तौर पर अता फ़रमायी हैं, इसलिये अगर ग़ौर से देखा जाये तो यह पूरी ज़िन्दगी अमानत है, इसलिये ज़िन्दगी का कोई काम और इन आज़ा से किया जाने वाला

कोई अ़मल, कोई क़ौल, कोई फ़ेल ऐसा न हो जो अल्लाह तआ़ला की दी हुयी इस अमानत में ख़ियानत का सबब बने। इसलिये अमानत का जो महदूद (सीमित) तसव्वुर हमारे ज़ेहनों में है कि कोई शख़्स आकर पैसे रखवायेगा, और हम सन्दूक़ची खोल कर उसमें वे पैसे रखेगें, और ताला लगा देंगे, अब अगर उन पैसों को निकाल कर ख़र्च कर लिया तो यह ख़ियानत होगी। अमानत का इतना महदूद तसव्वुर ग़लत है। बल्कि यह पूरी ज़िन्दगी एक अमानत है। और ज़िन्दगी का एक एक क़ौल व फ़ेल अमानत है।

इसलिये यह जो फ़रमाया कि अमानत में ख़ियानत करना निफ़ाक़ की अ़लामत (निशानी) है इसका मतलब यह है कि जितने भी गुनाह हैं, चाहे वह आंख का गुनाह हो, या कान का गुनाह हो, या ज़बान का गुनाह हो, या किसी और उज़्व का गुनाह हो, वे सारे अमानत में ख़ियानत के अन्दर दाख़िल हैं, और वे मोमिन के काम नहीं हैं, बल्कि मुनाफ़िक़ के काम हैं।

"आ़रियत" की चीज़ अमानत है

ये तो अमानत के बारे में आम बातें थीं, लेकिन अमानत के कुछ ख़ास ख़ास शोबे भी हैं, कभी कभी हम उनको अमानत नहीं समझते, और अमानत जैसी हिफ़ाज़त नहीं करते। जैसे "आ़रियत" की चीज़ है, "आ़रियत" उसको कहते हैं कि एक आदमी को एक चीज़ की ज़रूरत थी, वह चीज़ उसके पास नहीं थी। इसलिये उसने वह चीज़ इस्तेमाल करने के लिये दूसरे से मांग ली कि मुझे फ़लां चीज़ की ज़रूरत है, थोड़ी देर के लिये दे दो, अब यह "आ़रियत" की चीज़ "अमानत" है। जैसे मेरा एक किताब पढ़ने को दिल चाह रहा था, लेकिन वह किताब मेरे पास नहीं थी, इसलिये मैंने दूसरे शख़्स से पढ़ने के लिये वह किताब मांग ली कि मैं पढ़ कर वापस कर दूंगा, अब यह किताब मेरे पास "आ़रियत" है, शरीअ़त की इस्तिलाह में इसको आ़रियत कहा जाता है। और यह आ़रियत की चीज़ अमानत होती है, इसलिये उस

लेने वाले शख़्स के लिये जायज़ नहीं है कि वह उस चीज़ को मालिक की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करे। बल्कि उसे चाहिये कि उस आरियत की चीज़ को इस तरह इस्तेमाल न करे, जिस से मालिक को तक्लीफ़ हो, और दूसरे यह कि उसको वक़्त पर मालिक के पास लौटाने की फ़िक्र करे।

ये बर्तन अमानत हैं

हज़रत मौलाना शाह अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने बेशुमार मवाइज़ (तक़रीरों) में इस बात पर तंबीह फ़रमाई है कि लोग कस्रत से ऐसा करते हैं कि जब उनके घर किसी ने खाना भेज दिया, उस बेचारे भेजने वाले से ग़लती हो गयी कि उसने आपके घर खाना भेज दिया। अब सही तरीक़ा तो यह था कि वह खाना तुम दूसरे बर्तन में निकाल लो, और वह बर्तन उसको वापस कर दो, मगर होता यह है कि वह बेचारा खाना भेजने वाला बर्तन से भी मह्रूम हो गया, चुनांचे वे बर्तन घर में पड़े हुये हैं, वापस पुहंचाने की फ़िक्र नहीं, बल्कि कभी कभी यह होता है कि उन बर्तनों को ख़ुद अपने इस्तेमाल में लाने शुरू कर दिये, यह अमानत में ख़ियानत है, इसलिये कि वे बर्तन आपके पास बतौरे आ़रियत के आये थे, आपको उनका मालिक नहीं बनाया गया था। इसलिये उन बर्तनों का इस्तेमाल करना, और उनको वापस पहुंचाने की फ़िक्र न करना अमानत में ख़ियानत है।

यह किताब अमानत है

या जैसे आपने किसी से किताब पढ़ने के लिये ले ली, और किताब पढ़ कर उसको मालिक के पास वापस नहीं पहुंचाई यह अमानत में ख़ियानत है, यहां तक कि अब तो लोगों में यह कहावत भी मशहूर हो गयी है कि "किताब की चोरी जायज़ है" और जब किताब की चोरी जायज़ हो गयी तो अमानत में ख़ियानत बतरीक़े औला जायज़ होगी। अगर किसी ने कोई किताब पढ़ने के लिये दे दी तो अब लौटाने का कोई सवाल नहीं, हालांकि ये सब बातें अमानत में ख़ियानत के अन्दर

दाख़िल हैं, इसी तरह जितनी आरियत की चीज़ें हैं, जो आपके पास किसी भी तरीके से आई हों, उनको हिफ़ाज़त से रखना और उनको मालिक की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ इस्तेमाल न करना वाजिब और फ़र्ज़ है, उसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी करना जायज़ नहीं।

नौकरी के औक़ात अमानत हैं

इसी तरह एक शख़्स ने कहीं नौकरी कर ली, और नौकरी में आठ घन्टे ड्यूटी देने का मुआहदा हो गया, ये आठ घन्टे उसके हाथ बेच दिये, इसलिये ये आठ घन्टे के औक़ात आपके पास उस शख़्स के अमानत हैं जिसके यहां आपने नौकरी की है। इसलिये इन आठ घन्टों में एक मिन्ट भी आपने किसी ऐसे काम में ख़र्च कर दिया, जिसमें ख़र्च करने की मालिक की इजाज़त नहीं थी तो यह अमानत में ख़ियानत है, जैसे ड्यूटी के औक़ात में दोस्त मिलने के लिये आ गये अब उनके साथ होटल में बैठ कर बातें हो रही हैं, यह वक़्त उसमें ख़र्च हो रहा है, हालांकि यह वक़्त तुम्हारा बिका हुआ था, तुम्हारे पास अमानत था, तुमने इस वक़्त को बातों में और हंसी मज़ाक़ में गुज़ार दिया तो यह अमानत में ख़ियानत है।

अब बताइये, हम लोग कितने ग़ाफ़िल हैं कि जो औक़ात बिके हुये हैं, हम उनको दूसरे कामों में ख़र्च कर रहे हैं, यह अमानत में ख़ियानत हो रही है, और इसका नतीजा यह है कि महीने के आख़िर में जो तन्ख़ाह मिल रही है, वह पूरी तरह हलाल नहीं हुयी, इसलिये कि वक़्त पूरा नहीं दिया।

दारुल उलूम देवबन्द के उस्तादों का मामूल

दारुल उलूम देवबन्द के हज़राते असातिज़ा–ए–किराम को देखिये, हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआला ने उनके ज़रिये सहाबा–ए–किराम के दौर की यादें ताज़ा करायीं, उन हज़राते असातिज़ा–ए–किराम की तन्ख़ाह 10 रुपये माहाना या पन्द्रह रुपये माहाना होती थी। लेकिन चूंकि जब तन्ख़ाह मुक़र्रर हो गयी, और अपने औक़ात मदरसे के हाथ

बेच दिये, इसलिये उन हज़राते असातिज़ा का यह मामूल था कि अगर मदरसे के औक़ात के दौरान मेहमान या दोस्त अह्बाब मिलने के लिये आते तो जिस वक़्त वे मेहमान आते फ़ौरन घड़ी देख कर वक़्त नोट कर लेते, और फिर उनको जल्द से जल्द निब्टाने की फ़िक्र करते, और जिस वक़्त वे मेहमान चले जाते, उस वक़्त घड़ी देख कर वक़्त नोट कर लेते। पूरा महीना इस तरह वक़्त नोट करते रहते फिर जब महीना पूरा हो जाता तो वे असातिज़ा बाक़ायदा दरख़्वास्त देते कि इस महीने के दौरान इतना वक़्त मदरसे के काम के अ़लावा दूसरे कामों में ख़र्च किया है, इसलिये मेहरबानी फ़रमा कर मेरी तन्ख़्वाह में से इतने वक़्त के पैसे काट लिये जायें, वे हज़राते असातिज़ा इसलिये ऐसा करते थे कि अगर हमने उस वक़्त की तन्ख़्वाह ले ली तो वह तन्ख़्वाह हमारे लिये हराम हो गयी, इसलिये वापस कर देते। आज तन्ख़्वाह लेने के लिये तो दरख़्वास्तें दी जाती हैं तन्ख़्वाह कटवाने के लिये दरख़्वास्त देने का तसव्वुर भी मुश्किल है।

हज़रत शैख़ुल हिन्द रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की तन्ख़्वाह

शैख़ुल हिन्द हज़रत मौलाना मह्मूदुल हसन साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो दारुल उलूम देवबन्द के पहले तालिब इल्म हैं, जिनके ज़रिये दारुल उलूम देवबन्द की शुरूआत हुई, अल्लाह तआ़ला ने उन को इल्म में, तक़्वे में, मारिफ़त में बहुत ऊंचा मक़ाम बख़्शा था। जिस ज़माने में आप दारुल उलूम देवबन्द में शैख़ुल हदीस थे, उस वक़्त आपकी तन्ख़्वाह माहाना दस रुपये थी, फिर जब आपकी उमर ज़्यादा हो गयी और तजुर्बा भी ज़्यादा हो गया, तो उस वक़्त दारुल उलूम देवबन्द की मज्लिसे शूरा ने यह तै किया कि हज़रते वाला की तन्ख़्वाह बहुत कम है, जब्कि आपकी उमर ज़्यादा हो गयी है। ज़रूरतें भी ज़्यादा हैं, मशाग़िल भी ज़्यादा हैं, इसलिये तन्ख़्वाह बढ़ानी चाहिये। चुनांचे मज्लिसे शूरा ने यह तय किया कि अब आपकी तन्ख़्वाह दस रुपये के बजाये पन्द्रह रुपये कर दी जाये, जब तन्ख़्वाह तक़्सीम हुयी तो हज़रते

वाला ने देखा कि अब दस के बजाये पन्द्रह रुपये मिले हैं। हज़रते वाला ने पूछा कि ये पन्द्रह रुपये मुझे क्यों दिये गये। लोगों ने बताया कि मज्लिसे शूरा ने यह फ़ैसला किया है कि आपकी तन्ख़्वाह दस रुपये के बजाये पन्द्रह रुपये कर दी जाये, आपने वह तन्ख़्वाह लेने से इन्कार कर दिया, और दारुल उलूम देवबन्द के मोहतमिम साहिब के नाम एक दरख़्वास्त लिखी कि हज़रत! आपने मरी तन्ख़्वाह दस रुपये के बजाये पन्द्रह रुपये कर दी है, हालांकि अब मैं बूढ़ा हो चुका हूं, पहले तो मैं चुस्ती के साथ दो तीन घन्टे सबक़ पढ़ा लेता था, और अब तो मैं कम पढ़ाता हूं, वक़्त कम देता हूं। इसलिये मेरी तन्ख़्वाह में इज़ाफ़े का कोई जवाज़ नहीं, इसलिये जो इज़ाफ़ा आप हज़रात ने किया है यह वापस लिया जाये, और मेरी तन्ख़्वाह उसी तरह दस रुपये कर दी जाये।

लोगों ने आकर हज़रते वाला से मिन्नत व समाजत शुरू कर दी कि हज़रत! आप तो अपने तक़्वे और परहेज़गारी की वजह से इज़ाफ़ा वापस कर रहे हैं, लेकिन दूसरे लोगों के लिये यह मुश्किल हो जायेगी कि आपकी वजह से उनकी तरक़्क़ियां रुक जायेंगी। इसलिये आप इसको मन्ज़ूर कर लें। मगर उन्हों ने अपने लिये उसको गवारा न किया। क्यों? इसलिये कि हर वक़्त यह फ़िक्र लगी हुयी थी कि यह दुनिया तो चन्द रोज़ की है, खुदा जाने आज ख़त्म हो जाये या कल ख़त्म हो जाये, लेकिन यह पैसा जो मेरे पास आ रहा है, कहीं यह पैसा अल्लाह तआला के हुज़ूर हाज़िर होकर वहां शर्मिन्दगी का सबब न बन जाये।

दारुल उलूम देवबन्द आम यूनिवर्सिटी की तरह नहीं था कि उस्ताद ने सबक़ पढ़ा दिया और तालिब इल्म ने सबक़ पढ़ लिया। बल्कि वह इन अदाओं से दारुल उलूम देवबन्द बना है, अल्लाह तआला के सामने जवाब दही की फ़िक्र से बना है, इस परहेज़गारी और तक़्वे से बना है। इसलिये यह औक़ात जो हमने बेच दिये हैं, ये अमानत हैं, इसमें ख़ियानत न होनी चाहिये।

आज हुकूक़ के मुतालबे का दौर है

आज सारा ज़ोर हुकूक़ के हासिल करने पर है, हुकूक़ हासिल करने के लिये जुलूस और जल्से हो रहे हैं, नारे लगाये जा रहे हैं। और इस बात पर एहतिजाज हो रहा है कि हमें हमारें हक़ दो। हर शख़्स यह मुतालबा कर रहा है कि मुझे मेरा हक़ दो, लेकिन किसी को यह फ़िक्र नहीं कि दूसरों के हुकूक़ जो मुझ पर आयद हो रहे हैं वे मैं अदा कर रहा हूं या नहीं? आज यह मुतालबा किया जा रहा है कि मुझे इतनी छुट्टियां मिलनी चाहियें, मुझे इतना अलाऊंस मिलना चाहिये। लेकिन जो फ़राइज़ मुझे सौंपे गये हैं वे मैं अदा कर रहा हूं या नहीं? इसकी कोई फ़िक्र नहीं।

हर शख़्स अपने फ़राइज़ की निगरानी करे

हालांकि सच्ची बात यह है कि जब तक हमारी यह ज़ेहनियत बर क़रार रहेगी कि मैं दूसरे से हुकूक़ का मुतालबा करता रहूं, और मुझ से कोई हुकूक़ का मुतालबा न करे, मैं अपने फ़राइज़ से ग़ाफ़िल रहूं, और दूसरों से हुकूक़ का मुतालबा करता रहूं। याद रखो! उस वक़्त तक दुनिया में कोई हक़ अदा नहीं होगा। हक़ अदा करने का सिर्फ़ एक रास्ता है, जो अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें बताया है। वह यह है कि हर शख़्स अपने फ़राइज़ की निगरानी करे। मेरे ज़िम्मे जो फ़रीज़ा है, मैं उसको अदा कर रहा हूं या नहीं? जब इस बात का एहसास दिल में होगा तो फिर सब के हुकूक़ अदा हो जायेंगे। अगर शौहर के दिल में यह एहसास हो कि मेरे ज़िम्मे बीवी के जो फ़राइज़ हैं मैं उनको अदा कर दूं, बस बीवी का हक़ अदा हो गया, बीवी के दिल में यह एहसास हो कि मेरे ज़िम्मे शौहर के जो फ़राइज़ हैं, मैं उनको अदा कर दूं, बस शौहर का हक़ अदा हो गया। मज़दूर के दिल में यह एहसास हो कि मालिक के मेरे ज़िम्मे जो फ़राइज़ हैं मैं उनको अदा कर दूं, मालिक का हक़ अदा हो गया। और मालिक के दिल में यह एहसास हो कि मज़दूर के मेरे ज़िम्मे जो हुकूक़

हैं, वे मैं अदा कर दूं, मज़दूर का हक़ अदा हो गया। जब तक दिलों में यह एहसास पैदा नहीं होगा, उस वक़्त तक हुकूक़ के मुतालबे के सिर्फ़ नारे ही लगते रहेंगे और हुकूक़ की हिफ़ाज़त की अन्जुमनें ही क़ायम होती रहेंगी, और जल्से जुलूस निकलते रहेंगे। लेकिन उस वक़्त तक किसी का हक़ अदा न होगा जब तक कि अल्लाह तआ़ला के सामने जवाब दही का एहसास न हो कि अल्लाह तआ़ला के सामने मुझे उसके हुकूक़ का जवाब देना है। बस दुनिया में अम्न व सुकून का यही रास्ता है और कोई रास्ता नहीं है।

यह भी नाप तौल में कमी है

इसलिये यह औक़ात हमारे पास अमानत हैं, क़ुरआने करीम ने फ़रमाया किः

"وَيْلٌ لِّلْمُطَفِّفِيْنَ، الَّذِيْنَ اِذَا اكْتَالُوْا عَلَى النَّاسِ يَسْتَوْفُوْنَ، وَاِذَا كَالُوْهُمْ اَوْوَّزَنُوْهُمْ يُخْسِرُوْنَ" (سورة المطففين:٣)

फ़रमाया कि उन लोगों के लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है जो नाप तौल में कमी करते हैं, जब दूसरों से वुसूल करने का वक़्त आता है तो पूरा पूरा वुसूल करते हैं। ताकि ज़रा भी कमी न हो जाये, लेकिन जब दूसरों को देने का वक़्त आता है तो उसमें कम देते हैं और डन्डी मारते हैं। ऐसे लोगों के बारे में फ़रमाया कि उनके लिये दर्दनाक अ़ज़ाब है। अब लोग यह समझते हैं कि नाप तौल में कमी उस वक़्त होती है जब आदमी कोई सौदा बेचे, और उसमें डन्डी मारी जाये, हालांकि उलमा—ए—किराम ने फ़रमाया किः

"التطفيف فى كل شئ"

यानी नाप तौल में कमी हर चीज़ में है। इसलिये अगर कोई शख़्स आठ घन्टे का मुलाज़िम है और वह पूरे आठ घन्टे की ड्यूटी नहीं दे रहा है, वह भी नाप तौल में कमी कर रहा है। और इस अ़ज़ाब का हक़दार हो रहा है, इसका लिहाज़ करना चाहिये।

"मन्सब" और "ओहदा" ज़िम्मेदारी का फन्दा

आज हम पर यह बला जो मुसल्लत है कि अगर किसी को सरकारी दफ़्तर में कोई काम पड़ जाये तो उस पर क़ियामत टूट पड़ती है, उसका काम आसानी से नहीं होता, बार बार दफ़्तर के चक्कर लगाने पड़ते हैं, कभी अफ़सर साहिब सीट पर मौजूद नहीं हैं, कभी कहा जाता है कि आज काम नहीं हो सकता कल को आना, जब दूसरे दिन पहुंचे तो कहा कि परसों आना, चक्कर पर चक्कर लगवाये जा रहे हैं, इसकी वजह यह है कि अपने फ़र्ज़ का एहसास और अमानत का एहसास ख़त्म हो गया है, अगर किसी के पास कोई मन्सब है तो वह कोई फ़ायदे की चीज़ नहीं है, वह कोई फूलों की सेज नहीं है, बल्कि वह ज़िम्मेदारी का एक फन्दा है, हुकूमत, इक़्तिदार, मन्सब, ओहदा ये सब ज़िम्मेदारी के फन्दे हैं, यह ऐसी ज़िम्मेदारी है कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि अगर दरिया–ए–फ़ुरात के किनारे कोई कुत्ता भी भूखा प्यासा मर जाये तो मुझे यह डर लगता है कि क़ियामत के रोज़ मुझ से यह सवाल न हो जाये कि ऐ उमर! तेरे ख़िलाफ़त के ज़माने में फ़लां कुत्ता भूखा प्यासा मर गया था।

क्या ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा बना दूं?

रिवायत में आता है कि जब हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु पर क़ातिलाना हमला हुआ और आप शदीद ज़ख़्मी हो गये तो कुछ सहाबा–ए–किराम आपकी ख़िदमत में आये और अर्ज़ किया कि हज़रत आप दुनिया से तशरीफ़ लेजा रहे हैं, आप अपने बाद किसी को ख़लीफ़ा और जानशीन नामज़द फ़रमा दें, ताकि आपके बाद वह हुकूमत की बाग डोर संभाले, और बाज़ हज़रात ने यह तज्वीज़ पेश की कि आप अपने साहिबज़ादे हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को नामज़द फ़रमा दें ताकि आपकी वफ़ात के बाद वह ख़लीफ़ा बन जायें, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने पहले तो जवाब में फ़रमाया कि नहीं, तुम मुझ से ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा बनवाना चाहते हो, जिसे

अपनी बीवी को तलाक़ देनी भी नहीं आती। (तारीख़ुल खुलफ़ा लिस्सुयूती)

वाक़िआ यह हुआ था कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में एक मर्तबा हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपनी बीवी को हालते हैज़ यानी माहवारी के दिनों में तलाक़ दे दी थी, और मस्अला यह है कि जब औरत माहवारी की हालत में हो, उस वक़्त औरत को तलाक़ देना शरअन ना जायज़ है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु को यह मस्अला मालूम नहीं था, जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसकी इत्तिला हुयी तो आपने फ़रमाया कि तुमने यह ग़लत किया, इसलिये अब रुजू कर लो, और फिर से अगर तलाक़ देनी हो तो पाकी की हालत में तलाक़ देना, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने इस वाक़िए की तरफ़ इशारा फ़रमाया कि तुम ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा बनाना चाहते हो जिसे अपनी बीवी को तलाक़ देनी भी नहीं आती। (तारीख़ुल ख़ुलफ़ा लिस्सुयूती व तारीख़े तिबरी)

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु और एहसासे ज़िम्मेदारी

उसके बाद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने उन हज़रात को दूसरा जवाब यह दिया कि बात असल में यह है कि ख़िलाफ़त के बोझ का फन्दा ख़त्ताब की औलाद में इसी एक शख़्स के गले में पड़ गया तो यह काफ़ी है। मुराद अपनी ज़ात थी कि बारह साल तक यह फन्दा मेरे गले में पड़ा रहा वही काफ़ी है, अब इस ख़ानदान के किसी और फ़र्द के गले में यह फन्दा मैं नहीं डालना चाहता। इस वास्ते कि कुछ पता नहीं कि जब अल्लाह तआला के सामने मुझे इस ज़िम्मेदारी का हिसाब देना होगा, उस वक़्त मेरा क्या हाल होगा। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु वह शख़्स हैं जो ख़ुद नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बानी यह ख़ुश ख़बरी सुन चुके हैं कि "उमर फ़िल जन्नति" यानी उमर जन्नत में जायेगा। इस बशारत के बाद इस बात का कोई एहतिमाल बाक़ी नहीं रहता कि जन्नत में न जायें लेकिन इसके बावजूद अल्लाह तआला के सामने हिसाब व किताब का

डर और अमानत का इतना एहसास है। (तारीख़े तिबरी)

एक मौक़े पर आपने फ़रमाया कि क़ियामत के दिन अगर मैं इस अमानत के हिसाब के नतीजे में बराबर सराबर भी छूट जाऊं कि मेरे ऊपर न कोई गुनाह हो न सवाब हो, और मुझे "आराफ़" में भेज दिया जाये (जो जन्नत और जहन्नम के दरमियान एक इलाक़ा है जिसमें उन लोगों को रखा जायेगा जिनके गुनाह और सवाब बराबर होंगे) तो मेरे लिये यह भी काफ़ी है, और मैं छुटकारा पा जाऊंगा। हक़ीक़त यह है कि इस अमानत का एहसास जो अल्लाह तबारक व तआ़ला ने अ़ता फ़रमायी है, अगर इस एहसास का थोड़ा सा ज़र्रा अल्लाह तआ़ला हमारे दिलों में पैदा फ़रमा दे तो हमारे सारे मस्अले हल हो जायें।

पाकिस्तान का मस्अला नम्बर एक "ख़ियानत" है

एक ज़माने में यह बहस चली थी कि पाकिस्तान का मस्अला नम्बर एक क्या है? यानी सब से बड़ी मुश्किल क्या है जिसको हल करने के लिये अव्वलियत दी जाये। हक़ीक़त में मस्अला नम्बर एक "ख़ियानत" है आज अमानत का तसव्वुर हमारे ज़ेहनों में मौजूद नहीं है। अपने फ़राइज़ अदा करने का एहसास दिल से उतर गया। अल्लाह तआ़ला के सामने जवाब दही का एहसास बाक़ी नहीं रहा, ज़िन्दगी तेज़ी से चल रही है जिसमें पैसे की दौड़ लगी हुयी है। खाने की दौड़ लगी हुयी है, इक़्तिदार की दौड़ है। इस दौड़ में एक दूसरे से बाज़ी ले जाने में लगे हुये हैं और अल्लाह तआ़ला के सामने पेश होने की कोई फ़िक्र नहीं, आज सब से बड़ा मस्अला, और सारी बीमारियों की जड़ यही है। अल्लाह तआ़ला हमारे दिलों के अन्दर यह एहसास पैदा फ़रमा दे तो मसाइल दुरुस्त हो जायें।

दफ़्तर का सामान अमानत है

जिस दफ़्तर में आप काम कर रहे हैं, उस दफ़्तर का जितना सामान है, वह सब आपके पास अमानत है। इसलिये कि वह सामान आपको इसलिये दिया गया है कि उसको दफ़्तरी कामों में इस्तेमाल

करें, इसलिये आप उसको ज़ाती कामों में इस्तेमाल न करें। इसलिये कि यह भी अमानत में ख़ियानत है। लोग यह समझते हैं कि अगर दफ़्तर की मामूली चीज़ अपने ज़ाती काम में इस्तेमाल कर ली तो इसमें क्या हर्ज है? याद रखो ख़ियानत छोटी चीज़ की हो या बड़ी चीज़ की हो, दोनों हराम हैं और गुनाहे कबीरा हैं। दोनों में अल्लाह तआ़ला की ना फ़रमानी है। इसलिये इन दोनों से बचना ज़रूरी है।

सरकारी चीज़ें अमानत हैं

जैसा कि मैंने अ़र्ज़ किया कि "अमानत" के सही मायने यह हैं कि किसी शख़्स ने आप पर भरोसा करके अपना कोई काम आपके सुपुर्द किया, और आपने वह काम उसके भरोसे के मुताबिक़ अन्जाम न दिया तो यह ख़ियानत होगी। ये सड़कें जिन पर आप चलते हैं, ये बसें जिन में आप सफ़र करते हैं, ये ट्रेनें जिनमें आप सफ़र करते हैं, ये सब अमानत हैं। यानी इनको जायज़ तरीक़े से इस्तेमाल किया जाये। और अगर उनको इस जायज़ तरीक़े से हट कर इस्तेमाल किया जा रहा है, तो वह ख़ियानत के अन्दर दाख़िल है। जैसे उसको इस्तेमाल करते वक़्त गन्दा और ख़राब कर दिया। आज कल तो लोगों ने सड़कों को अपनी ज़ाती मिल्कियत समझ रखा है। किसी ने खोद कर नाली निकाल ली और पानी जाने का रास्ता बना दिया। किसी ने सड़क घेर कर शामियाना लगा दिया। हालांकि फ़ुक़हा–ए–किराम ने यहां तक मस्अला लिखा है कि अगर एक शख़्स ने अपने घर का परनाला बाहर सड़क की तरफ़ निकाल दिया, तो उस शख़्स ने एक ऐसी फ़िज़ा इस्तेमाल की जो उसकी मिल्कियत में नहीं थी, इसलिये उस शख़्स के लिये सड़क की तरफ़ परनाला निकालना जायज़ नहीं। हालांकि वह परनाला कोई जगह नहीं घेर रहा है बल्कि फ़िज़ा के एक हिस्से में वह परनाला निकाला हुआ है। इस पर फ़ुक़हा–ए–किराम ने तफ़्सीली बहस की है कि कहां परनाला निकालना जायज़ है, कितना निकालना जायज़ है, कितना निकालना हराम है। इसलिये कि वह जगह अमानत है, अपनी मिल्क का हिस्सा नहीं है।

हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का परनाला

हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा हैं उनके पर्नाले का क़िस्सा मश्हूर है, उनका घर मस्जिदे नबवी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बिल्कुल साथ मिला हुआ था, उनके घर का एक परनाला मस्जिदे नबवी के सेहन में गिरता था, एक मर्तबा हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु की नज़र उस परनाले पर पड़ी तो देखा कि वह परनाला मस्जिद में निकला हुआ है। लोगों से पूछा कि यह परनाला किसका है, जो मस्जिद के सेहन की तरफ़ लगा हुआ है? लोगों ने बताया कि यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के चचा हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु का परनाला है। आपने हुक्म फ़रमाया कि इसको तोड़ दो। मस्जिद की तरफ़ किसी को परनाला निकालना जायज़ नहीं। जब हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु को मालूम हुआ तो मुलाक़ात के लिये हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास तशरीफ़ लाये और फ़रमाया कि उमर! यह तुमने क्या किया? उन्हों ने फ़रमाया कि यह परनाला मस्जिदे नबवी में निकला हुआ था इसलिये गिरा दिया, हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि यह परनाला मैंने नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इजाज़त से लगाया था, हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जब यह सुना कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इजाज़त से लगाया था तो फ़ौरन फ़रमाया कि आप मेरे साथ चलें। चुनांचे मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ लाकर खुद झुक कर रुकूअ़ की हालत में खड़े हो गये और हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि ऐ अब्बास! खुदा के लिये मेरी कमर पर सवार होकर इस परनाले को दोबारा लगाओ, इसलिये कि ख़त्ताब के बेटे (यानी हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु) की यह मजाल कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इजाज़त दिये हुये परनाले को तोड़ दे, हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि मैं लगवा लूंगा, आप रहने दें, लेकिन

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि नहीं, जब मैंने तोड़ा है इसलिये अब मैं ही इसकी सज़ा भुगतूंगा। बहर हाल! शरीअ़त का असल मस्अला तो यही था कि हाकिम की इजाज़त के बग़ैर वह परनाला लगाना जायज़ नहीं था, लेकिन चूंकि हज़रत अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके लगाने की इजाज़त दे दी थी, इसलिये उसको लगाना उनके लिये जायज़ हो गया। (तबक़ात इब्ने सअ़्द)

आज यह हाल है कि जिस शख़्स का जितनी ज़मीन पर क़ब्ज़ा करने का दिल चाहा क़ब्ज़ा कर लिया और इसकी कोई फ़िक्र नहीं कि यह हम गुनाह कर रहे हैं। नमाज़ें भी हो रही हैं और यह ख़ियानत भी हो रही है। ये सब काम अमानत में ख़ियानत के अन्दर दाख़िल हैं, इस से परहेज़ करने की ज़रूरत है।

मज्लिस की गुफ़्तगू अमानत है

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया किः

"المجالس بالامانة" (جامع الاصول)

यानी मज्लिसों में जो बात की गयी हो वह भी सुनने वालों के पास अमानत है। जैसे दो तीन आदमियों ने आपस में मिल कर बातें कीं, बे तकल्लुफ़ी में आपस में एतिमाद की फ़िज़ा में राज़ की बातें कर लीं, अब उन बातों को उनकी इजाज़त के बग़ैर दूसरों तक पहुंचाना भी ख़ियानत के अन्दर दाख़िल है, और ना जायज़ है। जैसे बअ़्ज़ लोगों की आ़दत होती है कि इधर की बात उधर लगा दी, और उधर की बात इधर लगा दी। यह सारा फ़ितना फ़साद इसी तरह फैलता है। लेकिन अगर मज्लिस में कोई ऐसी बात कही गयी हो जिस से दूसरों को नुक़्सान पहुंचने का ख़तरा है, जैसे दो तीन आदमियों ने मिल कर यह साज़िश की कि फ़लां वक़्त पर फ़लां शख़्स के घर पर हमला करेंगे। अब ज़ाहिर है कि यह बात ऐसी नहीं है जिसको छुपाया जाये, बल्कि

उस शख़्स को बता दिया जाये कि तुम्हारे ख़िलाफ़ यह साज़िश हुयी है। लेकिन जहां इस क़िस्म की बात न हुयी हो वहां किसी के राज़ की बात दूसरों तक पहुंचाना ना जायज़ है।

राज़ की बातें अमानत हैं

कभी कभी ऐसा होता है कि वह राज़ की बात मज्लिस में एक शख़्स ने सुनी, उसने जाकर दूसरे को यह ताकीद करके सुना दी कि यह राज़ की बात बता रहा हूं तुम्हें तो बता दी, लेकिन किसी और से मत कहना। अब वह समझ रहा है कि यह ताकीद करके मैंने राज़ का हिफ़ाज़त कर ली, कि आगे यह बात किसी और को मत बताना। अब सुनने वाला आगे तीसरे शख़्स को वह राज़ की बात इस ताकीद के साथ बता देता है कि, यह राज़ की बात है, तुम किसी और से मत कहना, यह सिलसिला आगे इसी तरह चलता रहता है और यह समझा जाता है कि हमने अमानत का ख़्याल कर लिया। हालांकि जब वह बात राज़ थी और दूसरों से कहने को मना किया गया था तो फिर इस ताकीद के साथ कहना भी अमानत के ख़िलाफ़ है, यह ख़ियानत है और जायज़ नहीं।

ये वे चीज़ें हैं जिन्हों ने हमारे मुआशरे (समाज) में फ़साद बर्पा कर रखा है। आप ग़ौर करके देखेंगे तो यही नज़र आयेगा कि फ़साद इसी तरह बरपा होते हैं कि फ़लां शख़्स तो आपके बारे में यह कह रहा था, अब उसके दिल में उसके ख़िलाफ़ ग़ुस्सा और बुग्ज़ और दुश्मनी पैदा हो गयी, इसलिये इस लगाई बुझाई से नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मना फ़रमाया।

टेलीफ़ोन पर दूसरों की बातें सुनना

दो आदमी आपसे अलग होकर आपस में काना-फूसी कर रहे हैं। और आप छुप कर उनकी बातों को सुनने की फ़िक्र में लगे हुये हैं कि मैं उनकी बातें सुन लूं कि क्या बातें हो रही हैं, यह अमानत में ख़ियानत है।

या टेलीफ़ोन करते वक़्त किसी की लाइन आपके फ़ोन से मिल गयी अब आपने उनकी बातों को सुनना शुरू कर दिया। यह सब अमानत में ख़ियानत है, जासूसी में दाख़िल है, और ना जायज़ है। हालांकि आज इस पर बड़ा फ़ख़्र किया जाता है कि मुझे फ़लां का राज़ मालूम हो गया, इसको बड़ा हुनर और फ़न समझा जाता है। लेकिन नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं, यह ख़ियानत के अन्दर दाख़िल है और ना जायज़ है।

ख़ुलासा

ग़र्ज़ यह है कि अमानत में ख़ियानत के मिस्दाक़ इतने हैं कि शायद ज़िन्दगी का कोई गोशा ऐसा नहीं है जिसमें हमें अमानत का हुक्म न हो, और ख़ियानत से हमें रोका न गया हो। ये सारी बातें जो मैंने ज़िक्र की हैं, ये सब अमानत के ख़िलाफ़ हैं और निफ़ाक़ के अन्दर दाख़िल हैं। इसलिये यह हदीस हर वक़्त ज़ेहन में रहनी चाहिये कि तीन चीज़ें मुनाफ़िक़ की निशानी हैं। बात करे तो झूठ बोले, वादा करे तो उसकी ख़िलाफ़ वर्ज़ी करे और अगर उसके पास कोई अमानत आये तो उसमें ख़ियानत करे। अल्लाह तआ़ला हमारी और आपकी इससे हिफ़ाज़त फ़रमाये, यह सब दीन का हिस्सा है, हम लोगों ने दीन को बहुत महदूद कर रखा है और अपनी रोज़ मर्रा की ज़िन्दगी में इन बातों को भुला रखा है। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमारे दिलों में फ़िक्र पैदा फ़रमा दे, और इसकी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बताये हुये इस तरीक़े पर हम अ़मल करें, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

समाज का सुधार कैसे हो?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّااللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْماً كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

يٰٓاَيُّهَاالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ لَايَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ اِذَاهْتَدَيْتُمْ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُوْنَ۔ (سورة مائدة:١٠٥)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم، وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد للّٰه رب العٰلمين.

अजीब व ग़रीब आयत

यह एक अजीब व ग़रीब आयत है, जो हमारी एक बहुत बड़ी बीमारी की तश्ख़ीस कर रही है, और अगर यह कहा जाये तो मुबालग़ा न होगा कि यह आयत हमारी दुखती हुयी रग पकड़ रही है, अल्लाह जल्ल शानुहू से ज़्यादा कौन इन्सान की नफ़सियात और उसके मिज़ाज और उसकी बीमारियों को पहचान सकता है। और दूसरे यह कि इस आयत में हमारे एक बहुत बड़े सावाल का जवाब भी दिया गया है, जो आज कल कस्रत से हमारे दिलों में पैदा हो रहा है।

समाज के सुधारने की कोशिशें क्यों बे असर हैं?

पहले वह सवाल अर्ज़ कर देता हूं। उसके बाद आयत का मफ़्हूम अच्छी तरह समझ में आ सकेगा। कभी कभी हमारे और आपके दिलों में यह सवाल पैदा होता है कि आज हम दुनिया में देख रहे हैं कि इस्लाहे हाल, और समाज सुधार की न जाने कितनी कोशिशें मुख़्तलिफ़ जहतों और मुख़्तलिफ़ गोशों से हो रही हैं। कितनी अन्जुमनें, कितनी जमाअतें,

कितनी पार्टियां, कितने अफ़राद, कितने जल्से, कितने जुलूस, कितने इज्तिमा होते हैं। और सब का मक़सद बज़ाहिर यह है कि समाज में फैली हुयी बुराइयों का दर्वाज़ा बन्द किया जाये, समाज को सीधे रास्ते पर लाया जाये और इन्सान को इन्सान बनाने की फ़िक्र की जाये। हर एक के अग़राज़ व मक़ासिद में इस्लाहे हाल, समाज को सुधारने, फ़लाह व बह्बूद जैसी बड़ी बड़ी बातें दर्ज होती हैं और बड़े बड़े दावे होते हैं। जो अन्जुमनें और जमाअ़तें इस काम पर लगी हुयी हैं और जो ऐसे अफ़राद इस काम में मस्रूफ़ हैं अगर उनको शुमार किया जाये तो शायद हज़ारों तक उनकी तादाद पहुंचेगी। और हज़ारों जमाअ़तें, हज़ारतों अफ़राद इस कम पर लगे हुये हैं।

लेकिन दूसरी तरफ़ अगर समाज की उमूमी हालत को बाज़ारों में निकल कर देखें, दफ़्तरों में जाकर देखें, जीती जागती ज़िन्दगी को ज़रा क़रीब से देखने का मौक़ा मिले तो मह्सूस होता है कि वे सारी कोशिशें एक तरफ़ और ख़राबी का सैलाब एक तरफ़, समाज पर इस्लाह का कोई नुमायां असर नज़र नहीं आता, बल्कि ऐसा लगता है कि ज़िन्दगी का पहिया इसी तरह रास्ते पर घूम रहा है, अगर तरक़्क़ी हो रही है तो बुराई में हो रही है अच्छाई में नहीं हो रही है। तो ज़ेहन में यह सवाल पैदा होता है कि ये सारी कोशिशें समाज को बदलने में क्यों नाकाम नज़र आती हैं? इक्का दुक्का मिसालें अपनी जगह हैं, लेकिन कुल मिला कर अगर पूरे समाज पर नज़र डाल कर देखा जाये तो कोई बड़ा फ़र्क़ नज़र नहीं आता। इसकी क्या वजह है?

बीमारी की तश्ख़ीस

इस सवाल का जवाब भी अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में अ़ता फ़रमाया है। और हमारी एक बीमारी की तश्ख़ीस भी फ़रमा दी है। और यह वह आयत है जो अक्सर व ज़्यादातर हमारी निगाहों से ओझल रहती है, इसके मायने भी मालूम नहीं हैं। मफ़्हूम भी पेशे नज़र नहीं रहता।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا عَلَيْكُمْ أَنفُسَكُمْ لَا يَضُرُّكُم مَّن ضَلَّ إِذَا اهْتَدَيْتُمْ إِلَى اللَّهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُم بِمَا كُنتُمْ تَعْمَلُونَ. (سورة مائدة:١٠٥)

ऐ ईमान वालो! तुम अपने आपकी ख़बर लो, अगर तुम सीधे रास्ते पर आ गये (तुमने हिदायत हासिल कर ली, सही रास्ता इख़्तियार कर लिया) तो जो लोग गुमराह हैं उनकी गुमराही तुम्हें कोई नुक़्सान नहीं पहुंचाएगी। तुम सब को अल्लाह की तरफ़ लौटना है, वहां पर अल्लाह तआ़ला तुम्हें बतायेंगे कि तुम दुनिया के अन्दर क्या करते रहे हो।

अपने हाल से ग़ाफ़िल, और दूसरों की फ़िक्र

इस आयत में हमारी एक बहुत बुनियादी बीमारी यह बता दी कि ये इस्लाह की कोशिशें जो नाकाम नज़र आती हैं। इसकी एक बड़ी वजह यह है कि हर शख़्स जब इस्लाह का झन्डा लेकर खड़ा होता है तो उसकी ख़्वाहिश यह होती है कि इस्लाह का आग़ाज़ दूसरा शख़्स अपने आप से करे, यह ख़ुद दूसरों को बुला रहा है दूसरों को दावत दे रहा है। दूसरों को इस्लाह का पैग़ाम दे रहा है लेकिन अपने आप से और अपने हालात में तब्दीली लाने से ग़ाफ़िल होता है। आज हम सब अपने गरेबान में मुंह डाल कर देख लें कि मुख़्तलिफ़ महफ़िलों और मज्लिसों में हमारा तर्ज़े अ़मल यह होता है कि हम समाज की बुराइयों का तज़्किरा मज़े ले लेकर करते हैं "सब लोग तो यों कर रहे हैं" "लोगों का तो यह हाल है" "समाज तो इस दर्जे ख़राब हो गाया है" "फ़लां को मैंने देखा वह यों कर रहा था" सब से आसान काम इस बिगड़े हुये समाज में यह है कि दूसरों पर इन्सान एतिराज़ कर दे, तन्क़ीद कर दे, दूसरों के ऐब बयान कर दे, कि लोग तो यों कर रहे हैं, और समाज के अन्दर यह हो रहा है। शायद ही हमारी कोई महफ़िल और कोई मज्लिस इस तज़्किरे से ख़ाली होती हो, लेकिन कभी अपने गरेबान में मुंह डाल कर यह देखने की तौफ़ीक़ नहीं होती कि ख़ुद मैं कितना बिगड़ गया हूं, ख़ुद मेरे हालात कितने ख़राब हैं। ख़ुद मेरा तर्ज़े अ़मल कितना ग़लत है, इसकी कितनी इस्लाह की

ज़रूरत है, बस दूसरों पर तन्क़ीद का सिलसिला जारी रहता है, दूसरों के ऐब तलाश करना जारी रहता है। इसका नतीजा यह होता है कि सारी गुफ़्तगू बात का मज़ा लेने के लिये, मज्लिस जमाने के लिये, मज़ा लेने के लिये होकर रह जाती है। इसके नतीजे में इस्लाह (सुधार) की तरफ़ कोई क़दम नहीं बढ़ता।

सब से ज़्यादा बर्बाद शख़्स

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया। क्या अजीब इरशाद है हम लोगों को याद रखना चाहिये, फ़रमाया कि:

"من قال هلك الناس فهواهلكهم" (مسلم شريف)

यानी जो शख़्स यह कहे कि सारी दुनिया तबाह व बर्बाद हो गयी (यानी दूसरों पर एतिराज़ कर रहा है कि वे बिगड़ गये, उनके अन्दर बे दीनी आ गयी, उनके अन्दर बेराह रवी आ गयी, वे बद उन्वानियां करने लगे, तो सब से ज़्यादा बर्बाद ख़ुद वह शख़्स है।

इसलिये कि दूसरों पर एतिराज़ की ग़र्ज़ से यह कह रहा है कि वे बर्बाद हो गये, अगर उसको वाक़ई बर्बादी की फ़िक्र होती तो पहले अपने गरेबान में मुंह डालता, अपनी इस्लाह की फ़िक्र करता।

बीमार शख़्स को दूसरे की बीमारी की फ़िक्र कहां?

जिस शख़्स के अपने पेट में दर्द हो रहा हो, मरोड़ उठ रहे हों। चैन न आ रहा हो, वह दूसरों की छींकों की क्या परवाह करेगा कि दूसरे को छींकें आ रही हैं, नज़ला हो रहा है। ख़ुदा न करे, अगर मेरे पेट में शदीद दर्द है, तो मुझे अपनी फ़िक्र होगी, अपनी जान की फ़िक्र होगी, अपने दर्द को दूर करने की फ़िक्र होगी, अपनी तक्लीफ़ मिटाने की फ़िक्र होगी, दूसरे की बीमारी और दूसरे की मामूली तक्लीफ़ की तरफ़ ध्यान भी नहीं जायेगा। बल्कि ऐसा भी देखा गया है कि अगर अपनी तक्लीफ़ मामूली है, और दूसरे की तक्लीफ़ बहुत ज़्यादा है, इसके बावजूद अपनी तक्लीफ़ का ख़्याल इतना छाया हुआ होता है कि

दूसरे की बढ़ी हुयी तक्लीफ़ भी नज़र नहीं आती।

"लेकिन उसके पेट में तो दर्द नहीं"

मेरी एक अज़ीज़ ख़ातून थी, उनके पेट में तक्लीफ़ थी, और वह तक्लीफ़ ऐसी तश्वीशनाक नहीं थी। उनको डाक्टर के पास दिखाने के लिये किसी अस्पताल में ले गया, तो लिफ़्ट (Lift) में जाते हुये देखा कि एक ख़ातून रवां कुर्सी (Wheel Chair) पर सवार आयीं। उनके हाथ और पांव सब टूटे हुये थे, और उन पर पलास्टर चढ़ा हुआ था, और सीना जला हुआ था, और उसकी बुरी हालत थी। मैंने अपनी अज़ीज़ ख़ातून को तसल्ली देते हुये कहा कि देखिये यह औरत कितनी सख़्त परेशानी और कितनी सख़्त तक्लीफ़ में है, उसको देखने से आदमी को अपनी तक्लीफ़ की कमी का एहसास होता है, और अल्लाह तआला का शुक्र ज़बान पर जारी होता है, तो जवाब में वह ख़ातून कहती हैं कि वाक़ई उसके हाथ पांव टूट गये हैं, मगर कम से कम उसके पेट में दर्द तो नहीं हो रहा है। तो उनके ज़ेहन में सब से बड़ी तक्लीफ़ यह थी कि मेरे पेट में दर्द हो रहा है। उसकी जली हुयी खाल, और टूटे हाथ पांव देख कर भी उनको अपनी तक्लीफ़ का ख़्याल नहीं जा रहा था। इसलिये कि अपनी तक्लीफ़ और बीमारी का एहसास है। लेकिन जिस शख़्स को अपनी तक्लीफ़ और बीमारी का एहसास नहीं होता और दूसरों की मामूली मामूली तक्लीफ़ों को देखता फिरता है तो हमारी एक बहुत बड़ी बीमारी यह है कि हम अपनी इस्लाह की फ़िक्र से ग़ाफ़िल हैं और दूसरों पर एतिराज़ और तन्क़ीद करने के लिये हम लोग हर वक़्त तैयार हैं।

बीमारी का इलाज

अल्लाह जल्ल जलालुहू इस आयत के अन्दर फ़रमाते हैं कि ऐ ईमान वालो! पहले अपने आपकी फ़िक्र करो, और यह जो तुम कर रहे हो कि फ़लां शख़्स गुमराह हो गया, फ़लां शख़्स तबाह व बर्बाद हो गया। याद रखो कि अगर तुम सीधे रास्ते पर आ गये तो उसकी

गुमराही तुमको कोई नुक़्सान नहीं पहुंचायेगी। हर इन्सान के साथ उसका अपना अ़मल जायेगा, इसलिये अपनी फ़िक्र करो, तुम सब अल्लाह के पास लौट कर जाओगे। वहां वह तुम्हें बतायेगा कि तुम क्या अ़मल करते रहे थे, तुम्हारा अ़मल ज़्यादा बेह्तर था, या दूसरे का अ़मल ज़्यादा बेह्तर था। क्या मालूम कि जिस पर एतिराज़ कर रहे हो, जिसके ऐब तलाश कर रहे हो, उसकी कोई अदा, उसका कोई फ़ेल अल्लाह तबारक व तआ़ला के यहां मक़बूल हो, कि वह तुम से आगे निकल जाये। बहर हाल! यह सिर्फ़ बात बनाने के लिये और मज्लिस जमाने के लिये हम लोग जो बातें करते हैं वह इस्लाह का रास्ता नहीं।

अपनी जांच पड़ताल की मज्लिस

हां! अगर किसी जगह महफ़िल ही इसी काम के लिये मुन्अ़क़िद (आयोजित) हो कि उसमें इस बात का तज़्किरा हो कि हम लोगों में क्या क्या ख़राबियां पाई जाती हैं, और लोग इस नियत से उस महफ़िल में शरीक हों कि उन बातों को सुनेंगे, समझेंगे और फिर उसके मुताबिक़ अ़मल करने की कोशिश करेंगे, तो फिर ऐसी महफ़िल मुन्अ़क़िद करना दुरुस्त है।

इन्सान का सब से पहला काम

इन्सान का सब से पहला काम यह है कि अपने दिन रात का जायज़ा ले और फिर यह देखे कि मैं कितना काम अल्लाह तआ़ला की मर्ज़ी के मुताबिक़ और उसके बताये हुये तरीक़े के मुताबिक़ कर रहा हूं और कितना काम उसके ख़िलाफ़ कर रहा हूं, अगर उसके ख़िलाफ़ कर रहा हूं तो उसकी इस्लाह का क्या रास्ता है? अल्लाह तआ़ला यह फ़िक्र हमारे और आपके दिलों में पैदा फ़रमा दे तो हमारे समाज की इस्लाह भी हो जायेगी।

मुआ़शरा (समाज) क्या है?

मुआ़शरा किस चीज़ का नाम है? इन्हीं अफ़राद का मज्मूआ़ मुआ़शरा (समाज) बन जाता है, अगर हर शख़्स को अपनी इस्लाह की

फ़िक्र पैदा हो जाये तो सारा मुआशरा खुद बखुद सुधर जाये। लेकिन अगर हर शख़्स दूसरे की फ़िक्र करता रहे, और अपने को छोड़ता रहे तो सारा मुआशरा ख़राब ही रहेगा।

हज़राते सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम का तरीक़ा—ए—अमल

हज़राते सहाबा—ए—किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम के हालात को देखेंगे तो यह नज़र आयेगा कि हर शख़्स इस फ़िक्र में था कि किसी तरह मैं दुरुस्त हो जाऊं, किसी तरह मैं अपनी बीमारियों को दूर कर लूं, चुनांचे हज़रत हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु जो मशहूर सहाबी हैं, वह आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में हाज़िर होते थे, और ज़ाहिर है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में जाकर और आपकी बातें सुन कर दिलों पर क्या असर होता होगा, कैसी रिक़्क़त तारी होती होगी, कैसा जज़्बा पैदा होता होगा, एक दिन परेशान चीख़ते हुये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुये और आकर अर्ज़ कियाः या रसूलल्लाह! "नाफ़—क़ हन्ज़ला" हन्ज़ला तो मुनाफ़िक़ हो गया, यानी अपने बारे में कह रहे हैं कि मैं मुनाफ़िक़ हो गया। आपने उनसे पूछा कि कैसे मुनाफ़िक़ हो गये? कहा या रसूलल्लाह! जब तक आपकी मज्लिस में बैठता हूं आपकी बात सुनता हूं तो दिल पर बड़ा असर होता है, हालात बेह्तर करने की तवज्जोह होती है, लेकिन जब बाहर निकलता हूं और दुनिया के कामों के अन्दर लगता हूं तो वह जज़्बा जो आपकी मज्लिस में बैठ कर पैदा हुआ था, वह ख़त्म हो जाता है, यह तो मुनाफ़िक़ का काम है कि ज़ाहिरी हालात कुछ हों और अन्दर कुछ हों, इसलिये मुझे अन्देशा है कि कहीं मैं मुनाफ़िक़ तो नहीं हो गया।

सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तसल्ली दी कि हन्ज़ला! तुम मुनाफ़िक़ नहीं हुये, बल्कि "साअतन फ़साअतन" यह घड़ी घड़ी की बात होती है, हर वक़्त दिल की कैफ़ियत एक जैसी नहीं रहती, किसी वक़्त जज़्बा ज़्यादा होता है किसी वक़्त कम होता है, इस

से यह समझना कि मैं मुनाफ़िक़ हो गया कोई सही बात नहीं है।

(मुस्लिम शरीफ़)

हज़रत हन्ज़ला के दिल में अपने बारे में तो यह ख़्याल पैदा हुआ कि मैं मुनाफ़िक़ हो गया लेकिन आपने किसी दूसरे को मुनाफ़िक़ नहीं कहा, ख़ुद एहतिसाबी से अपने आपको मुनाफ़िक़ तसव्वुर करके बे क़रार हो गये कि अपनी फ़िक्र है, यह फ़िक्र है कि कहीं मेरे अन्दर तो निफ़ाक़ नहीं आ गया है?।

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि० की ख़ुसूसियत

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने बहुत से राज़ बतला रखे थे। आप ही को राज़दारी से मुनाफ़िक़ीन की पूरी फ़िहरिस्त भी बता रखी थी कि मदीना शरीफ़ में फ़लां फ़लां शख़्स मुनाफ़िक़ है, और इस दर्जा यक़ीन से बता रखी थी कि जब मदीना तैयबा में किसी का इन्तिक़ाल हो जाता तो हज़रात सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम यह देखते कि उस नमाज़े जनाज़ा में हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु शामिल हैं या नहीं? अगर हुज़ैफ़ा बिन यमान शामिल हैं तो यह इस बात की निशानी थी कि वह शख़्स मोमिन था। और अगर हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु उसके जनाज़े में शामिल नहीं तो सहाबा-ए-किराम यह अन्दाज़ा करते थे कि शायद यह शख़्स मुनाफ़िक़ है, अगर मोमिन होता तो हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु ज़रूर शामिल होते।

दूसरे ख़लीफ़ा को अपने निफ़ाक़ का अन्देशा

हदीस की किताबों में आता है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु जबकि ख़लीफ़ा बन चुके हैं। और आधी से ज़्यादा दुनिया पर हुकूमत है और जिनके बारे में यह मशहूर है कि जब देखो ग़लत काम करने लोगों की इस्लाह के लिये दुर्रा लिये फिर रहे हैं, इन्तिज़ाम का रौब और दबदबा है। लेकिन इसी आलम में हज़रत

हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु से ख़ुशामद करते हुये कहते हैं कि ऐ हुज़ैफ़ा मुझे यह बता दो कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तुम्हें मुनाफ़िक़ीन की जो फ़िहरिस्त बता दी है, उसमें उमर बिन ख़त्ताब का नाम तो नहीं है? हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु के दिल में यह ख़्याल पैदा हो रहा है कि कहीं मेरा नाम तो उस फ़िहरिस्त में शामिल नहीं? कहीं मैं मुनाफ़िक़ लोगों में शामिल तो नहीं? (अलबिदायः वन्निहायः)

दिल से जो बात निकलती है असर रखती है

सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम का यह हाल था कि हर एक को यह फ़िक्र लगी हुयी थी कि मेरा कोई फ़ेल, मेरा कोई अमल, मेरा कोई क़ौल, मेरी कोई अदा अल्लाह तबारक व तआला और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म के ख़िलाफ़ तो नहीं है, और जब यह फ़िक्र लगी हुयी है तो अब जब वे किसी दूसरे से कोई इस्लाह की बात कहते हैं तो वह बात दिल पर असर डालने वाली होती है, उससे ज़िन्दगियां बदलती हैं, उससे इन्क़िलाब आते हैं, और इन्क़िलाब बरपा करके दुनिया को दिखा भी दिया, अल्लामा इब्ने जौज़ी रहमतुल्लाहि अलैहि जो बड़े मशहूर वाइज़ थे। उनके बारे में लिखा है कि उनके एक एक वाज़ में नौ नौ सौ आदमियों ने उनके हाथ पर गुनाहों से तौबा की है। बस एक वाज़ कह दिया, और सब का दिल खींच लिया। और यह नहीं था कि उनकी तक़रीर बहुत जोशीली होती थी, या बड़ी शानदार और लच्छेदार होती थी, बल्कि बात असल में यह थी कि दिल से उमडता हुआ जज़्बा जब ज़बान से बाहर निकलता है तो वह दूसरे के दिल पर असर डालता है।

हमारा हाल

हमारी यह हालत है कि मैं आपको एक बात की नसीहत कर रहा हूं और ख़ुद मेरा अमल उस पर नहीं है। इसलिये पहले तो उस बात का असर न होगा, और अगर असर हो भी गया तो सुनने वाला जब

यह देखेगा कि यह ख़ुद तो इस काम को नहीं कर रहे हैं और हमें नसीहत कर रहे हैं। अगर यह कोई अच्छा काम होता तो पहले यह ख़ुद अमल करते। इस तरह वह बात हवा में उड़ जाती है, और उसका कोई असर नहीं होता।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की नमाज़

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सीरत ने जो इन्क़िलाब बरपा किया, और सिर्फ़ तेईस साल की मुद्दत में पूरे अ़रब की काया पलट दी, बल्कि पूरी दुनिया की काया पलट दी, यह इन्क़िलाब इसलिये आया कि आपने जिस बात का उम्मत को करने का हुक्म दिया, पहले ख़ुद उस बात पर उससे ज़्यादा अ़मल किया, जैसे हमें और आपको हुक्म दिया कि पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ा करो। लेकिन ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आठ वक़्त की नमाज़ पढ़ा करते थे। यानी पांचों नमाज़ों के अ़लावा इश्राक़, चाश्त और तहज्जुद भी पढ़ा करते थे, बल्कि आपकी यह हालत थी कि:

"اذا حزبه امر صلى" (مشكوة شريف)

यानी जब आपको किसी काम की परेशानी पेश आती तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़ौरन नमाज़ के लिये खड़े हो जाते और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू करके दुआ़ करते, और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद है कि:

"جعلت قرة عيني في الصلاة" (نسائي شريف)

मेरी आंखों की ठंडक नमाज़ में है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का रोज़ा

इसी तरह दूसरों को पूरे साल में एक महीने यानी रमज़ानुल मुबारक में रोज़ा रखने का हुक्म दिया लेकिन आपका ख़ुद मामूल यह था कि पूरे साल में कोई महीना ऐसा नहीं गुज़रता था, जिसमें कम से कम तीन रोज़े आप न रखते हों, और कभी कभी तीन से ज़्यादा भी रखते थे। और दूसरों को तो यह हुक्म दिया जा रहा है कि जब

इफ़्तार का वक़्त आ जाये तो फ़ौरन इफ़्तार कर लो, और दो रोज़ों को एक साथ जमा करने को ना जायज़ क़रार दिया।

"मिला कर रोज़े रखने" की मनाही

चुनांचे बाज़ सहाबा-ए-किराम को आपने देखा कि वे इस तरह दो रोज़े मिला कर रख रहे हैं तो आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको मना फ़रमा दिया कि तुम्हारे लिये इस तरह मिला कर रोज़े रखना जायज़ नहीं है, बल्कि हराम है। लेकिन आप सल्ल-ल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ुद "सौमे विसाल" (लगातार बिना इफ़्तार किये रोज़े से रोज़े को मिला कर) रखते, और यह फ़रमाते कि तुम अपने ऊपर मुझ को कियास न करो, इसलिये कि मेरा परवर्दिगार मुझे खिलाता भी है और पिलाता भी है। यानी तुम्हारे अन्दर इस रोज़े की ताक़त नहीं है, मेरे अन्दर ताक़त है, इसलिये मैं रखता हूं। गोया कि दूसरों के लिये आसानी और सहूलत का रास्ता बता दिया कि इफ़्तार के वक़्त ख़ूब खाओ, पियो और रात भर खाने की इजाज़त है।

(तिर्मिज़ी शरीफ़)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और ज़कात

हमें और आपको तो यह हुक्म दिया कि अपने माल का चालीसवां हिस्सा अल्लाह की राह में ख़र्च कर दो, ज़कात अदा हो जायेगी। लेकिन आपका यह हाल था कि जितना माल आ रहा है, सब सदक़ा हो रहा है। एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नमाज़ पढ़ाने के लिये मुसल्ले पर तशरीफ़ लाये, और तक्बीर हो गयी, और नमाज़ शुरू होने वाली है, अचानक आप मुसल्ले से हट गये और फ़ौरन घर के अन्दर तशरीफ़ ले यगे, और थोड़ी देर बाद वापस तशरीफ़ ले आये, और नमाज़ पढ़ा दी। सहाबा-ए-किराम को इस पर ताज्जुब हुआ चुनांचे नमाज़ के बाद सहाबा ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सवाल किया कि या रसूलल्लाह! आज आपने ऐसा अ़मल किया जो इससे पहले कभी नहीं किया था, इसकी क्या वजह थी?

सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जवाब दिया कि मैं इसलिये घर वापस गया था कि जब मैं मुसल्ले पर खड़ा हुआ, उस वक़्त मुझे याद आया कि मेरे घर में सात दीनार (अशरफ़ियां) पड़े हैं। और मुझे इस बात से शर्म आयी कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) अल्लाह तआला के सामने इस हालत में पेश हो कि उसके घर में ज़रूरत से ज़्यादा सात दीनार रखे हों, चुनांचे मैंने उनको ठिकाने लगा दिया, और फ़िर उसके बाद आकर नमाज़ पढ़ाई।

अल्लाह के महबूब ने ख़न्दक़ भी खोदी

ग़ज़वा-ए-अहज़ाब के मौक़े पर ख़न्दक़ खोदी जा रही है, सहाबा ख़न्दक़ खोदने में लगे हुये हैं। लेकिन यह नहीं था कि दूसरे लोग तो ख़न्दक़ खोदें और ख़ुद अमीर होने की वजह से आराम से बिस्तर पर सो जायें, बल्कि वहां यह हाल था कि दूसरों को जितना हिस्सा खोदने के लिये मिला था, उतना हिस्सा सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने लिये भी मुक़र्रर फ़रमाया, एक सहाबी बयान करते हैं कि उस हालत में जब ख़न्दक़ खोदी जा रही थी, मशक़्क़त का वक़्त था, और खाने पीने का सही तरीक़े पर इन्तिज़ाम नहीं था, और मैं भूख प्यास से बेताब हो रहा था, तो भूख की शिद्दत की वजह से मैंने अपने पेट पर एक पत्थर बांध लिया था।

पेट पर पत्थर बांधना

पेट पर पत्थर बांधने का मुहावरा हमने और आपने सुना है, लेकिन देखा नहीं, और अल्लाह तआला न दिखाये, आमीन। लेकिन जिस पर यह हालत गुज़री हो वह जानता है। लोग यह समझते हैं कि पेट पर पत्थर बांधने से क्या फ़ायदा होता है? और पत्थर बांधने से किस तरह भूख मिटती है? असल बात यह है कि जब भूख की शिद्दत होती है तो उसकी वजह से इन्सान को इतनी कमज़ोरी लाहिक़ हो जाती है कि वह कुछ काम नहीं कर सकता, और पत्थर बांधने से पेट पर ज़रा भारी पन हो जाता है उसकी वजह से आदमी में खड़ा होने की ताक़त आ

जाती है। वर्ना वह कमज़ोरी की वजह से खड़ा भी नहीं हो सकता।

ताजदारे मदीना के पेट पर दो पत्थर थे

बहर हाल! तो एक सहाबी बयान करते हैं कि भूख की शिद्दत की वजह से मैंने अपने पेट पर पत्थर बांध लिया था, और उसी हालत में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, और अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मैंने भूख की शिद्दत की वजह से अपने पेट पर पत्थर बांधा हुआ है, तो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने पेट पर से क़मीज़ उठा दी, और मैंने देखा कि आपके पेट पर दो पत्थर बंधे हुये हैं।

यह है वह चीज़ कि जिस बात की तालीम दी जा रही है, जिस बात की तब्लीग़ की जा रही है, जिस बात का हुक्म दिया जा रहा है, पहले ख़ुद उस पर उससे ज़्यादा अमल करके दिखा दिया।

हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा का मशक़्क़त उठाना

हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा जन्नत की औरतों की सरदार। एक मर्तबा नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होती हैं, और अपने हाथ मुबारक दिखा कर अर्ज़ करती हैं कि मेरे हाथों में चक्की पीस पीस कर गट्टे पड़े गये हैं, और पानी की मशक ढो ढो कर सीने पर नील आ गये हैं, या रसूलल्लाह! ख़ैबर की फ़तह के बाद सारे मुसलमानों के दरमियान ग़ुलाम और बांदियां तक़्सीम हुयी हैं, जो उनके घरों का काम करती हैं। इसलिये कोई ख़िदमतगार बांदी मुझे भी अता फ़रमा दीजिये।

अगर फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अन्हा को कोई बांदी ख़िदमत के लिये मिल जाती तो उसकी वजह से आसमान न टूटता, लेकिन जवाब में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि:

"फ़ातिमा! जब तक सारे मुसलमानों का इन्तिज़ाम नहीं हो जाता, उस वक़्त तक मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) और उनके घर वालों के लिये कोई ग़ुलाम और बांदी नहीं आयेगी, मैं तुम्हें

इस मशक्कत के बदले गुलाम और बांदी से बेह्तर नुस्ख़ा बताता हूं। और फिर फ़रमाया कि हर नमाज़ के बाद "सुब्हानल्लाह"३३ बार "अल्हम्दु लिल्लाह"३३ बार और "अल्लाहु अक्बर" ३४ बार पढ़ा करो।

(मुस्लिम शरीफ़)

इस वजह से इसको "तस्बीहे फ़ातिमा" कहा जाता है, कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु अ़न्हा को इसकी तल्क़ीन फ़रमाई थी। इसलिये दूसरों के साथ तो मामला यह है कि गुलाम तक़्सीम हो रहे हैं, बांदियां तक़्सीम हो रही हैं और पैसे भी तक़्सीम हो रहे हैं, और ख़ुद अपने घर की यह हालत है।

इसलिये जब यह सूरत होती है कि ख़ुद कहने वाला दूसरों से ज़्यादा अ़मल करता है तो उस बात में तासीर होती है, और वह बात फिर दिल पर असर डालती है, वह इन्सानों की दुनिया बदल देती है, उनकी ज़िन्दगियों में इन्क़िलाब लाती है, और इन्क़िलाब लायी। चुनांचे हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बातों ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को कहां से कहां तक पहुंचा दिया।

"तीस" शाबान को नफ़्ली रोज़ा रखना

तीस शाबान का जो दिन होता है, उसमें हुक्म यह है कि उस दिन रोज़ा न रखा जाये, बाज़ लोग इस ख़्याल से रोज़ा रख लेते हैं कि शायद आज रमज़ान का दिन हो। इसलिये हो सकता है कि रमज़ान का चांद हो चुका हो, लेकिन हमें नज़र न आया हो। इस लिये एह्तियात के तौर पर लोग शाबान की 30 तारीख़ का रोज़ा रख लेते हैं लेकिन हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एह्तियाते रमज़ान के तौर पर तीस शाबान को रोज़ा रखने से मना फ़रमाया है। लेकिन यह रोज़ा न रखने का हुक्म उस शख़्स के लिये है जो सिर्फ़ एह्तियाते रमज़ान की ग़र्ज़ से रोज़ा रख रहा हो। लेकिन जो शख़्स आम नफ़्ली रोज़े रखता चला आ रहा है, और वह अगर 30 शाबान को भी रोज़ा रख ले, और एह्तियाते रमज़ान की नियत और ख़्याल दिल में न हो तो उसके लिये जायज़ है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

इमाम अबू यूसुफ़ रह्मतुल्लाहि अलैहि 30 शाबान के दिन खुद रोज़े से होते थे और पूरे शहर में मुनादी करते हुये फिरते थे कि आज के दिन कोई शख़्स रोज़ा न रखे, इसलिये कि आम लोगों के बारे में यह ख़तरा था कि अगर वे इस दिन रोज़ा रखेंगे तो एहतियाते रमज़ान का ख़्याल दिल में आ जायेगा और रोज़ा रखना गुनाह होगा, इसलिये सख़्ती से मना फ़रमा दिया।

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की एहतियात

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि जिनके हम और आप नाम लेवा हैं। अल्लाह तआला उनके नक़्शे क़दम पर चलने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन। आप लोगों के लिये फ़त्वे के अन्दर आसानी पैदा करने की हर वक़्त फ़िक्र रहती थी, ताकि लोगों को मुश्किलात न हों, जितना हो सके आसानी पैदा की जाये। आज कल बाज़ारों में फलों की जो ख़रीद व बेच होती है आप हज़रात जानते होंगे कि आज कल यह होता है कि अभी पेड़ पर फूल भी नहीं आता कि पूरी फ़सल बेच दी जाती है, और इस तरह फल के आये बग़ैर उसको बेचना शरीअत में जायज़ नहीं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इससे मना फ़रमाते थे कि जब तक फल ज़ाहिर न हो जाये उस वक़्त तक बेचना जायज़ नहीं। इस शरई हुक्म की वजह से बाज़ उलमा ने यह फ़त्वा दिया है कि बाज़ारों में जो फल बिकते हैं, उनकी ख़रीद व बेच चूंकि इसी तरीक़े पर होती है, इसलिये उन फलों का ख़रीद कर खाना जायज़ नहीं। लेकिन हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि उन फलों को खाने की गुन्जाइश है। लेकिन हमेशा एहतियात की और सारी उमर बाज़ार से फल लेकर नहीं खाया, और दूसरों को खाने की इजाज़त दे दी। ये अल्लाह के बन्दे हैं, जिस चीज़ की दूसरों को तल्क़ीन करते हैं, उससे ज़्यादा खुद उस पर अमल करते हैं, तब उनकी बात में असर पैदा होता है।

समाज के सुधार का रास्ता

इसलिये हमारे अन्दर ख़राबी यह है कि इस्लाह (सुधार) का जो प्रोग्राम शुरू होगा, जो जमाअत क़ायम होगी, जो अन्जुमन खड़ी होगी, जो आदमी खड़ा होगा, उसके दिमाग़ में यह बात होगी कि ये सब लोग ख़राब हैं, उनकी इस्लाह करनी है। और अपनी ख़राबी की तरफ़ ध्यान और फ़िक्र नहीं। इसलिये इस आयत में अल्लाह तआला यह फ़रमा रहे हैं कि:

"يَآاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ لَا يَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ اِذَا اهْتَدَيْتُمْ"

(سورة المائدة:١٠٥)

ऐ ईमान वालो! अपनी ख़बर लो, अगर तुम रास्ते पर आ जाओ तो गुमराह होने वाले और ग़लत रास्ते पर जाने वाले तुम्हें कोई नुक़्सान नहीं पहुंचायेंगे। इसलिये मज्लिस जमाने के तौर पर, और सिर्फ़ तज़्किरे के तौर पर दूसरों की बुराइयां बयान करने से कोई फ़ायदा नहीं, अपनी फ़िक्र करो, और अपनी जितनी इस्लाह कर सकते हो, वह कर लो। वाक़िआ यह है कि समाज के सुधारने का रास्ता भी यही है। इसलिये कि समाज किस का नाम है? मेरा, आपका और अफ़राद के मजमूए का नाम समाज है। अब अगर हर शख़्स अपनी इस्लाह की फ़िक्र कर ले कि मैं ठीक हो जाऊं, तो रफ़्ता रफ़्ता सारा समाज ठीक हो जायेगा। लेकिन अगर मामला यह रहा कि मैं तुम्हारे ऊपर तन्क़ीद करूं और तुम मेरे ऊपर तन्क़ीद करो, मैं तुम्हारी बुराई बयान करूं, और तुम मेरी बुराई बयान करो, फिर तो इस तरह समाज की हालत कभी दुरुस्त नहीं हो सकती बल्कि अपनी फ़िक्र करो। तुम देख रहे हो कि दुनिया झूठ बोल रही है, लेकिन तुम न बोलो। दूसरे लोग रिश्वत ले रहे हैं, तुम रिश्वत न लो। दूसरे लोग सूद खा रहे हैं, तुम सूद न खाओ। दूसरे लोग धोखा दे रहे हैं, तुम धोखा न दो। दूसरे लोग हराम खा रहे हैं, तुम न खाओ। लेकिन इसके तो कोई मायने नहीं हैं कि मज्लिस के अन्दर तो कह दिया कि लोग झूठ बोल रहे हैं, और फिर ख़ुद भी सुबह

से शाम तक झूठ बोल रहे हैं, यह तरीक़ा दुरुस्त नहीं, अल्लाह तआला अपनी रहमत से इस फ़िक्र को हमारे दिलों में पैदा फ़रमा दे कि हर शख़्स को अपनी इस्लाह की फ़िक्र हो जाये।

अपना फ़र्ज़ भी अदा करो

लेकिन यहां यह समझ लेना ज़रूरी है कि अपनी इस्लाह की फ़िक्र में यह बात भी ज़रूरी है कि जिस जगह नेकी की बात पहुंचाना ज़रूरी है वहां नेकी की बात पहुंचाये और अपना फ़र्ज़ अदा करे, इसके बग़ैर वह हिदायत याफ़्ता नहीं कहला सकता, न इसके बग़ैर अपनी इस्लाह का फ़रीज़ा मुकम्मल होता है, यही बात सैयदना अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक हदीस में वाज़ेह फ़रमा दी है, हदीस यह है:

"عن ابی بکر الصدیق رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال: یا ایھا الناس انکم تقرء ون ھذہ الآیۃ "یا ایھا الذین آمنوا علیکم انفسکم لا یضرکم من ضل اذا اھتدیتم"(سورۃ المآئدۃ:١٠٥) وانی سمعت رسول اللہ صلی اللہ علیہ و سلم یقول: ان الناس اذا رأواالظالم فلم یأخذوا علیٰ یدیہ اوشك ان یعمھم اللہ بعقاب منہ.

आयत से ग़लत फ़हमी

यह हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है, जिसमें आपने क़ुरआने करीम की इस आयत की सही तश्रीह न समझने पर लोगों को तंबीह फ़रमाई और इस आयत की तश्रीह में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की एक हदीस इरशाद फ़रमाई जिस से इस आयत के सही मफ़्हूम पर रोशनी पड़ती है।

हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने इस तरफ़ इशारा फ़रमाया कि बाज़ लोग इस आयत का यह मतलब समझते हैं कि जब अल्लाह तआला ने यह फ़रमा दिया कि अपनी ख़बर लो, अपनी इस्लाह की फ़िक्र करो, बस हमारे ज़िम्मे तो अपनी इस्लाह की फ़िक्र वाजिब है। अगर किसी दूसरे को ग़लत काम करते हुये देख रहे हैं तो उसको टोकना, उसकी इस्लाह की फ़िक्र करना हमारे ज़िम्मे वाजिब नहीं।

हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमा रहे हैं कि इस आयत का यह मतलब लेना ग़लत फ़हमी है। इसलिये कि अगर लोग यह देखें कि एक ज़ालिम किसी दूसरे पर ज़ुल्म कर रहा है, लेकिन वे लोग उस ज़ालिम का हाथ पकड़ कर उसको ज़ुल्म से न रोकें तो इन हालात में क़रीब है कि अल्लाह तआ़ला ऐसे तमाम अफ़राद पर अपना अ़ज़ाब नाज़िल फ़रमा दें।

हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु यह फ़रमा रहे हैं कि यह हदीस इस बात पर दलालत कर रही है कि तुम्हारे सामने ज़ालिम ज़ुल्म कर रहा है, और मज़्लूम पिट रहा है, और ज़ालिम को ज़ुल्म से रोकने की ताक़त तुम्हारे अन्दर मौजूद है, लेकिन इसके बावजूद तुमने यह सोचा कि अगर यह ज़ुल्म कर रहा है, या ग़लत काम कर रहा है तो यह उसका अपना ज़ाती अ़मल है, मैं तो ज़ुल्म नहीं कर रहा हूं। इसलिये मुझे उसके इस फ़ेल में दख़ल अन्दाज़ी नहीं करनी चाहिये और मुझे उनसे अलग रहना चाहिये, और वह अपने इस तर्ज़े अ़मल पर इस आयत से इस्तिदलाल करे कि अल्लाह तआ़ला ने तो यह फ़रमा दिया कि अपनी इस्लाह की फ़िक्र करो। अगर दूसरा शख़्स ग़लत काम कर रहा है तो उसका ग़लत काम करना तुम्हें नुक़्सान नहीं पहुंचायेगा। हज़रत अबू बकर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमा रहे हैं कि यह हदीस इस बात की दलालत कर रही है कि इस आयत से यह मतलब निकालना बिल्कुल ग़लत है, इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने यह भी हुक्म दिया है कि अगर ज़ालिम को ज़ूल्म से रोकने की कुदरत और ताक़त तुम्हारे अन्दर हो तो तुम ज़रूर उसको ज़ुल्म से रोक दो।

आयत की सही तशरीह व तफ़्सीर

अब सवाल यह पैदा होता है कि फिर इस आयत का क्या मतलब है? आयत का मतलब यह है कि इसमें यह जो फ़रमाया कि "किसी की ग़लत–कारी तुम्हें नुक़्सान नहीं पहुंचायेगी, बशर्ते कि तुम अपनी इस्लाह की फ़िक्र कर लो" इसमें असल बात यह है कि एक शख़्स अपनी

हिम्मत व कोशिश के मुताबिक और ताक़त के मुताबिक अमर बिल मारूफ़ (अच्छे काम का हुक्म करने) का फ़रीज़ा अदा कर चुका है, लेकिन इसके बावजूद दूसरा शख़्स उसकी बात नहीं मानता, तो तुम्हारे ऊपर उसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं है, अब उसकी ग़लत-कारी तुम्हें नुक़सान नहीं पहुंचायेगी, अब तुम अपनी फ़िक्र करो, और अपने हालात को दुरुस्त रखो, इन्शा अल्लाह अल्लाह तआला के यहां तुम्हारी पकड़ नहीं होगी।

औलाद की इस्लाह कब तक

जैसे औलाद है। औलाद के बारे में यह हुक्म है कि अगर मां बाप यह देख रहे हैं कि औलाद ग़लत रास्ते पर जा रही है तो उनका फ़र्ज़ है कि वे उसको रोकें, और उसको ग़लत काम करने से बचायें, जैसा कि कुरआने करीम ने फ़रमाया कि तुम अपने आपको भी आग से बचाओ और अपने घर वालों को भी आग से बचाओ। मां बाप के ज़िम्मे यह फ़र्ज़ है, लेकिन एक शख़्स ने अपनी सारी ताक़त और कोशिशें ख़र्च कर दीं, लेकिन औलाद ने बात न मानी, तो इस सूरत में इन्शा अल्लाह वह शख़्स अल्लाह तआला के यहां माज़ूर होगा, हज़रत नूह अलै० का बेटा भी आख़िर वक़्त तक इस्लाम नहीं लाया और हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने उसको समझाया, उसको तब्लीग़ की, दावत दी, और उनसे ज़्यादा कौन तब्लीग़ का हक़ अदा करेगा। लेकिन इसके बावजूद आख़िर वक़्त तक वह इस्लाम न लाया। अब पूछ हज़रत नूह अलैहिस्सलाम से नहीं होगी।

एक शख़्स का दोस्त ग़लत रास्ते पर जा रहा है, ग़लत कामों में मुब्तला है। और यह शख़्स अपनी हिम्मत व कोशिश के मुताबिक़ अपने दोस्त को प्यार व मुहब्बत से हर तरह उसको समझाता रहा, और समझा समझा कर थक गया, लेकिन वह दोस्त ग़लत कामों से बाज़ नहीं आया, तो अब उसकी ज़िम्मेदारी उस पर आयद नहीं होगी।

तुम अपने आप को मत भूलो

आगे अ़ल्लामा नववी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने एक आयत नक़ल की है कि:

" اَتَأْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَ تَنْسَوْنَ اَنْفُسَكُمْ وَاَنْتُمْ تَتْلُوْنَ الْكِتَابَ اَفَلَا تَعْقِلُوْنَ" (سورة البقرة: ٤٤)

इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने यहूदियों से ख़िताब करते हुए फ़रमाया कि तुम दूसरों को नेकी की नसीहत करते हो, और अपने आप को भूल जाते हो, हालांकि तुम किताब की तिलावत करते हो, यानी तुम तौरात के आ़लिम हो, जिसकी वजह से लोग तुम्हारी तरफ़ रुजू करते हैं। यह हुक्म अगरचे यहूदियों के लिये था, लेकिन मुसलमानों के लिये बतरीक़े औला होगा कि जो शख़्स दूसरों को नसीहत कर रहा है उसको चाहिये कि वह उस नसीहत को पहले अपने ऊपर लागू करे।

यह मस्अला तो मैं आपको पहले बता चुका हूं कि तब्लीग़ के बारे में यह हुक्म नहीं कि जो शख़्स बुराई में मुब्तला है वह तब्लीग़ न करे, और दूसरों को नसीहत न करे, बल्कि हुक्म यह है कि नसीहत करे, लेकिन नसीहत करने के बाद यह सोचे कि मैं जब दूसरों को नसीहत कर रहा हूं तो ख़ुद भी उस पर अ़मल करूं, और अपने आपको न भूले, और यह न समझे कि यह नसीहत दूसरों के लिये है, बल्कि यह सोचे कि यह नसीहत मेरे लिये भी है। और मुझे भी इस पर अ़मल करना है।

मुक़र्रिरीन और वाअ़िज़ीन के लिये ख़तरनाक बात

इस आयत के बाद अ़ल्लामा नववी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने एक हदीस नक़ल की है जिसमें यह बड़ी ख़तरनाक बात इरशाद फ़रमाई गयी है, अल्लाह तआ़ला इसका मिस्दाक़ बनने से हम सब को बचाये, आमीन। फ़रमाया कि:

" عن اسامة بن زيد بن حارثة رضى الله عنهماقال: سمعت رسول الله صلى الله عليه وسلم يقول: يؤتى بالرجل يوم القيامة فيلقى فى النار فتندلق اقتاب بطنه فيدوركما يدورالحمار فى الرحال فيجتمع اليه اهل النار فيقولون

يا فلان مالك؟ الم تكن تأمر بالمعروف وتنهى عن المنكر؟ فيقول: بلى كنت آمر بالمعروف ولاآتيه وانهى عن المنكر وآتيه. (البداية جلد:١)

हज़रत उसामा बिन ज़ैद बिन हारसा रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत है, फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना आपने फ़रमाया कि क़ियामत के दन एक शख़्स को लाया जायेगा और आग में डाल दिया जायेगा, आग में गिरते ही गर्मी की शिद्दत की वजह से उसकी आंतें पेट से बाहर निकल जायेंगी, और वह शख़्स अपनी आंतों के गिर्द इस तरह घूमेगा जिस तरह गधा चक्की के गिर्द घूमता है, उस ज़माने में एक बड़ी चक्की हुआ करती थी, उस चक्की में गधे को बांध देते थे, वह उस चक्की को घुमाता था, जब जहन्नम वाले उसका यह मन्ज़र देखेंगे तो वे आकर उसके पास जमा हो जायेंगे, और उससे पूछेंगे कि यह क्या क़िस्सा है? ऐसी सज़ा तुम्हें क्यों दी जा रही है? क्या तुम वह शख़्स नहीं हो कि तुम लोगों को नसीहत किया करते थे, और बुराई से रोका करते थे? तुम आलिम फ़ाज़िल थे और दाअी–ए–हक़ थे, और लोगों के लिये इस्लाह करने वाले का दर्जा रखते थे। आज तुम्हारा यह अन्जाम कैसे हुआ? उस वक़्त वह शख़्स जवाब में कहेगा कि हां! मैं असल में लोगों को तो नसीहत करता था लेकिन ख़ुद नेकी नहीं करता था, और लोगों को बुराई से रोकता था, और मैं ख़ुद उस बुराई का काम किया करता था। इस वजह से आज मेरा यह अन्जाम हो रहा है। अल्लाह तआला बचाये, अल्लाह तआला हिफ़ाज़त फ़रमाये, अमीन। इस हदीस को जब पढ़ता हूं तो डर लगता है, वे लोग जिनको नेकी की बात कहने और दीन की बात सुनाने का काम करना होता है उनके लिये यह बड़ा नाज़ुक और ख़तरनाक मर्हला है, ऐसा न हो कि वे इसका मिस्दाक़ बन जायें। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इसका मिस्दाक़ बनने से बचाये, आमीन।

चिराग़ से चिराग़ जलता है

बहर हाल! अगर आदमी को अपनी फ़िक्र न हो, और दूसरे की इस्लाह की फ़िक्र लेकर आदमी चल खड़ा हो, और दूसरों के ऐब तलाश करता रहे तो इस तरह समाज की इस्लाह होने के बजाये और ज़्यादा फ़साद का रास्ता खुलता है, और ज़्यादा बिगाड़ पैदा होता है, जैसा कि हमारे सामने है। अगर अल्लाह तआला हमारे दिलों में यह फ़िक्र पैदा फ़रमा दे कि हम में से हर शख़्स अपने ऐबों का जायज़ा ले कि मैं क्या क्या काम ग़लत कर रहा हूं और फिर उसकी इस्लाह की फ़िक्र में लग जाये। चाहे दस साल की ज़िन्दगी बाक़ी हो, या पन्द्रह साल और बीस साल की ज़िन्दगी बाक़ी हो, आख़िर में हर एक को अपनी क़ब्र में पहुंचना है और अपने सारे आमाल का अल्लाह तआला के हुज़ूर जवाब दह होना है, इसको मद्देनज़र रखते हुये अपनी ज़िन्दगी का जायज़ा ले, अपने हालात को देखे, और उसमें जहां जहां ख़राबियां नज़र आयें उसकी इस्लाह की तरफ़ क़दम बढ़ाये, फिर चाहे कोई अन्जुमन और जमाअत न बनाये लेकिन एक आदमी कम से कम अपने आपकी इस्लाह कर ले, और वह ख़ुद सीधे रास्ते पर लग जाये तो क़ुरआने करीम के इस हुक्म पर अमल हो जायेगा, एक से दो, दो से तीन, चिराग़ से चिराग़ जलता है और शमा से शमा रोशन होती है, और इस तरह दीन का यह तरीक़ा दूसरों तक भी पहुंचता है। अल्लाह तबारक व तआला हमारे दिलों में यह फ़िक्र पैदा फ़रमायें। और अपनी इस्लाह करने की हिम्मत व तौफ़ीक़ अता फ़रमायें, और अपने रास्ते पर चलने की तौफ़ीक़ अता फ़रमायें, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

बड़ों की इताअ़त

और अदब के तक़ाज़े

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی العباس سهل بن سعد الساعدی رضی الله عنه ان رسول الله صلی الله علیه وسلم بلغه، ان بنی عمروبن عوف کان بینهم شر فخرج رسول الله صلی الله علیه وسلم یصلح بینهم فی اناس معه فجلس رسول الله صلی الله علیه وسلم و حانت الصلاة. (بخاری شریف)

"बाबुल इस्लाहि बैनन्नास" यह बाब लोगों के दर्मियान सुलह कराने के बयान में चल रहा है और इस बाब की तीन हदीसें पीछे गुज़र चुकी हैं। और यह इस बाब की आख़री हदीस है जो ज़रा लम्बी है, इसलिये इसका तर्जुमा और तश्रीह अ़र्ज़ किये देता हूं।

लोगों के दर्मियान सुलह कराना

हज़रत सहल बिन सअ़द साअ़दी रज़ियल्लाहु अ़न्हु रिवायत करते हैं कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह इत्तिला मिली कि क़बीला बनी अ़मर इब्ने औ़फ़ के दर्मियान आपस में झगड़ा खड़ा होगया है, चुनांचे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उनके दर्मियान मुसालहत कराने के लिये तश्रीफ़ ले गये। और बाज़ सहाबा–ए–किराम को भी आपने साथ ले लिया, ताकि उस मुसालहत में वे मदद दें, मुसालहत कराने के दौरान बात लम्बी हो गयी। और इतनी देर हो गयी कि नमाज़ का वक़्त आ गया, यानी वह वक़्त आ गया

जिसमें नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मस्जिदे नबवी में नमाज़ पढ़ाया करते थे, लेकिन चूंकि आप अभी तक फ़ारिग़ नहीं हुये थे इसलिये आप मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ न ला सके।

यहां इस हदीस को लाने का मन्शा यही है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने लोगों के दर्मियान झगड़े को ख़त्म कराने और मुसालहत कराने को इतनी अहमियत दी और उसमें इतने मस्रूफ़ हुये कि नमाज़ का मुक़र्ररा वक़्त आ गया, और आप मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ न ला सके।

रावी फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मुअज़्ज़िन हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जब यह देखा कि नमाज़ का वक़्त हो गया है, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ नहीं लाये, तो वह हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के पास गये, और उनसे जाकर अ़र्ज़ किया कि जनाब अबू बक्र! आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देर हो गयी है, और नमाज़ का वक़्त आ गया है, हो सकता है कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को और कुछ देर हो जाये, और लोग नमाज़ के इन्तिज़ार में हैं, क्या यह हो सकता है कि आप इमामत करा दें? हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमायाः अगर तुम चाहो तो ऐसा कर सकते हैं, हम नमाज़ पढ़ लेते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देर हो गयी होगी। उसके बाद हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने तक्बीर कही, और हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु इमामत के लिये आगे बढ़ गये, हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने नमाज़ शुरू करने के लिये "अल्लाहु अक्बर" कहा और लोगों ने तक्बीर कही, जब नमाज़ शुरू कर दी तो नमाज़ के दौरान हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये, और सफ़ में एक जगह पर मुक़्तदी की हैसियत से खड़े हो गये, जब लोगों ने देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ ले आये हैं, और सिद्दीक़े अक्बर को आपके आने के बारे में पता नहीं है, इसलिये वह आगे इमामत कर

रहे हैं, तो लोगों को ख़्याल हुआ कि अब सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को इल्म हो जाना चाहिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ला चुके हैं, ताकि वह पीछे हट जायें, और आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम आगे होकर नमाज़ पढ़ायें। और चूंकि उस वक़्त लोगों को मस्अला मालूम नहीं था, इसलिये हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को इत्तिला देने के लिये नमाज़ के अन्दर तालियां बजाना शुरू कर दीं, और उनको मुतनब्बह करना शुरू किया, लेकिन हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु का यह हाल था कि जब नमाज़ शुरू कर देते तो उनको दुनिया जहान की कुछ ख़बर नहीं रहती थी, और वह किसी और तरफ़ मुतवज्जह नहीं होते थे कि दायें और बायें क्या हो रहा है। इसलिये शुरू में जब एक दो आदमियों ने ताली बजायी तो हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को पता भी नहीं चला, वह अपनी नमाज़ में मस्रूफ़ रहे, लेकिन जब सहाबा-ए-किराम ने यह देखा कि हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु कुछ तवज्जोह नहीं फ़रमा रहे हैं तो उस वक़्त लोगों ने ज़्यादा ज़ोर से ताली बजानी शुरू कर दी, और जब कई सहाबा ने ताली बजायी और आवाज़ बुलन्द होने लगी तो उस वक़्त हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को कुछ ख़्याल हुआ, और कन अंखियों से दायें और बायें देखना शुरू किया तो अचानक देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सफ़ में तशरीफ़ रखते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सफ़ में देख कर हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने पीछे हटना चाहा, तो आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको हाथ के इशारे से मना फ़रमाया कि तुम अपनी जगह पर रहो, पीछे हटने की ज़रूरत नहीं, नमाज़ पूरी कर लो।

लेकिन हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देख लिया तो फिर उनके बस में न रहा कि वह अपने मुसल्ले पर खड़े रहते, इसलिये उल्टे पांव पीछे की तरफ़ हटना शुरू कर दिया, यहां तक कि सफ़ में आकर खड़े हो

गये, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम आगे मुसल्ले पर तशरीफ़ ले गये और फिर बाक़ी नमाज़ आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पढ़ाई।

इमाम को मुतनब्बह करने का तरीक़ा

जब नमाज़ ख़त्म हो गयी तो उसके बाद आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लोगों की तरफ़ मुतवज्जह हुये और ख़िताब फ़रमाया कि: यह क्या तरीक़ा है कि अगर नमाज़ के अन्दर कोई वाक़िआ पेश आ जाये तो तुम तालियां बजाना शुरू कर देते हो, यह तरीक़ा नमाज़ के शायाने शान और मुनासिब नहीं, और तालियां बजाना तो औरतों के लिये आया है, यानी मान लो अगर औरतों की जमाअत हो रही हो, वैसे औरतों की जमाअत अच्छी और पसन्दीदा नहीं है। या औरतें नमाज़ में शामिल हों, और वे इमाम को किसी बात की तरफ़ मुतवज्जह करना चाहें तो उनके लिये यह हुक्म है कि वे हाथ पर हाथ मार कर तालियां बजायें, उनके लिये नमाज़ के अन्दर ज़बान से "सुब्हानल्लाह" या "अल्हम्दु लिल्लाह" कहना अच्छा नहीं है। क्योंकि इस तरह औरत की आवाज़ मर्दों के कानों में जायेगी और औरत की आवाज़ का भी शरीअत में पर्दा है, इसलिये उनके लिये हुक्म यह है कि अगर नमाज़ के अन्दर कोई वाक़िआ पेश आये तो हाथ पर हाथ मार कर इमाम को मुतवज्जह करें लेकिन अगर मर्दों की जमाअत में कोई वाक़िआ पेश आ जाये जिस की वजह से इमाम को किसी बात की तरफ़ मुतवज्जह करना मन्ज़ूर हो, तो उसमें मर्दों के लिये तरीक़ा यह है कि वे सुब्हानल्लाह कहें, जैसे इमाम को बैठना चाहिये था, और मुक़्तदियों ने देखा कि खड़ा हो रहा है तो मुक़्तदी को चाहिये कि वह "सुब्हानल्लाह" कहें या "अल्हम्दु लिल्लाह" कहें, या इमाम को खड़ा होना चाहिये था लेकिन वह बैठ गया तो उस वक़्त भी सुब्हानल्लाह कह दें, या कभी कभी ऐसा होता है कि आवाज़ से क़िराअत करने वाली नमाज़ है, (जैसे इशा की नमाज़) और इमाम ने बिना आवाज़ के क़िराअत शुरू कर दी, तो उस वक़्त भी

उसको अल्हम्दु लिल्लाह वग़ैरह से मुतनब्बह कर दे। तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर नमाज़ में कोई भी ऐसा अ़मल पेश आ जाये, जिसकी वजह से उसको तंबीह करना मक़्सूद हो तो मुक़्तदी "सुब्हानल्लाह" कह दें। तालियां नहीं बजानी चाहियें।

अबू क़हाफ़ा के बेटे की यह मजाल नहीं थी

उसके बाद आप हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु की तरफ़ मुतवज्जह हुये और उनसे फ़रमाया कि ऐ अबू बकर! मैंने तो आपको इशारा कर दिया था कि आप अपनी नमाज़ जारी रखें, और पीछे न हटें, उसके बाद क्या वजह हुई कि आप पीछे हट गये, और इमामत करने से आपने तरद्दुद किया। उस वक़्त हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने क्या अ़जीब जवाब दिया, फ़रमाया कि:

"ما كان لابن ابى قحافة ان يصلى بالناس بين يدى رسول الله صلى الله عليه وسلم"

या रसूलल्लाह! अबू क़हाफ़ा के बेटे की यह मजाल नहीं थी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मौजूदगी में लोगों की इमामत करे। अबू क़हाफ़ा उनके वालिद का नाम है, यानी यह मेरी मजाल नहीं थी कि आपकी मौजूदगी में मुसल्ले पर खड़ा होकर इमामत करता रहूं, जब तक आप तश्रीफ़ नहीं लाये थे तो बात दूसरी थी, जब आपको देख लिया तो मेरे अन्दर यह ताब नहीं थी कि मैं इमामत जारी रखूं, इस वास्ते मैं पीछे हट गया। आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस पर कोई एतिराज़ नहीं फ़र्माया, बल्कि ख़ामोशी इख़्तियार फ़रमाई।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मक़ाम

इससे हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु का मक़ाम मालूम होता है कि अल्लाह तआ़ला ने उनके दिल में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की अज़्मत इस दर्जा जमा रखी थी कि फ़रमाते हैं

कि यह बात मेरी बरदाश्त से बाहर थी कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पीछे खड़े हों और मैं आगे खड़ा रहूं। अगरचे यह वाक़िआ हुज़ूरे पाक की ग़ैर मौजूदगी में पेश आया और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मौजूदगी में खड़े नहीं हुये थे लेकिन जब पता लग गया कि हुज़ूर पीछे हैं तो फिर आगे खड़ा रहना बरदाश्त से बाहर था इसलिये पीछे हट गये।

हुक्म अदब से ऊपर है

यहां एक मस्अला और अदब अ़र्ज़ कर दूं, जो मस्नून अदब है, आपने वह मशहूर मकूला सुना होगा कि: "الامر فوق الادب"

यानी ताज़ीम का तकाज़ा यह है कि जब कोई बड़ा किसी बात का हुक्म दे, चाहे उस बात पर अ़मल करना अदब के ख़िलाफ़ मालूम हो रहा हो, और अदब का तकाज़ा यह हो कि वह अ़मल न किया जाये, लेकिन जब बड़े ने हुक्म दे दिया तो छोटे का काम यह है कि उस हुक्म की तामील करे, यह बड़ी नाज़ुक बात है और कभी कभी इस पर अ़मल भी मुश्किल होता है, लेकिन दीन पर अ़मल करने वाले तमाम बुज़ुर्गों का हमेशा यही मामूल रहा है कि जब किसी बड़े ने किसी काम का हुक्म दिया तो अदब के बजाये हुक्म की तामील को मुक़द्दम रखा।

बड़े के हुक्म पर अ़मल करे

जैसे फ़र्ज़ करो कि एक बड़ा बुज़ुर्ग शख़्स है और वह किसी इम्तियाज़ी जगह जैसे तख़्त वग़ैरह पर बैठा है, अब एक शख़्स उसके पास आया जो उससे छोटा है, उन बुज़ुर्ग ने कहा कि: भाई! तुम यहां मेरे पास आ जाओ। तो उस वक़्त उसकी बात मान लेनी चाहिये, अगर्चे अदब का तक़ाज़ा यह है कि पास न बैठे, दूर होकर बैठे, उसके पास तख़्त पर जाकर बैठ जाना अदब के ख़िलाफ़ है। लेकिन जब बड़े ने हुक्म देकर कह दिया कि यहां आ जाओ तो उस वक़्त ताज़ीम का तक़ाज़ा यही है कि उसके हुक्म पर अ़मल करे, चाहे दिल में यह बात बुरी लग रही हो कि मैं बड़े के बिल्कुल क़रीब जाकर बैठ जाऊं।

इसलिये कि अदब के मुक़ाबले में हुक्म की तामील ज़्यादा मुक़द्दम है।

दीन का ख़ुलासा "इत्तिबा" है

मैं बार बार अर्ज़ कर चुका हूं कि सारे दीन का ख़ुलासा है इत्तिबा, बड़े के हुक्म को मानना, उसके आगे सर झुका देना, अल्लाह के हुक्म की इत्तिबा, अल्लाह के रसुल के हुक्म की इत्तिबा और अल्लाह के रसूल के वारिसीन की इत्तिबा, बस वह जो कह रहे हैं उस पर अ़मल करो, चाहे ज़ाहिर में वह बात तुम्हें अदब के ख़िलाफ़ मालूम हो।

हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की मज्लिस में मेरी हाज़िरी

हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की मज्लिस इतवार के दिन हुआ करती थी, इसलिये कि उस ज़माने में इतवार की सरकारी छुट्टी हुआ करती थी, यह आख़री मज्लिस का वाक़िआ है, इसके बाद हज़रत वालिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की कोई मज्लिस नहीं हुयी, बल्कि अगली मज्लिस का दिन आने से पहले ही हज़रत वालिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का इन्तिक़ाल हो गया, चूंकि वालिद साहिब बीमार और बिस्तर पर थे, इसलिये आपके कमरे में ही लोग जमा हो जाया करते थे, वालिद साहिब चारपाई पर होते, लोग सामने नीचे और सूफ़ों पर बैठ जाया करते थे। उस दिन लोग बहुत ज़्यादा आये और कमरा पूरा भर गया, यहां तक कि कुछ लोग खड़े भी हो गये, और मुझे हाज़री में ताख़ीर हुई। मैं ज़रा देर से पहुंचा, हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने जब मुझे देखा तो फ़रमायाः तुम यहां मेरे पास आ जाओ, मैं ज़रा झिझकने लगा कि लोगों को फलांगता हुआ और चीरता हुआ जाऊंगा और हज़रत वालिद साहिब के पास जाकर बैठूंगा। अगरचे यह बात ज़ेहन में मौजूद थी कि जब बड़ा कोई बात कहे तो मान लेनी चाहिये, लेकिन मैं ज़रा हिचकिचा रहा था, हज़रत वालिद साहिब ने जब मेरी हिचकिचाहट देखी तो दोबारा फ़रमायाः तुम यहां आ जाओ तो तुम्हें एक क़िस्सा सनाऊं। ख़ैर मैं किसी तरह वहां पहुंच गया और

हज़रत वालिद साहिब के पास बैठ गया।

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की मज्लिस में वालिद साहिब की हाज़री

वालिद साहिब फ़रमाने लगे कि एक मर्तबा हज़रत मौलान अशरफ़ अली थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की मज्लिस हो रही थी। और वहां इसी तरह का क़िस्सा पेश आया कि जगह तंग हो गयी और भर गयी और मैं ज़रा देर से पहुंचा तो हज़रते वाला ने फ़रमाया, कि तुम यहां मेरे पास आ जाओ, मैं कुछ झिझकने लगा कि हज़रत रह्मतुल्लाहि अलैहि के बिल्कुल पास जाकर बैठ जाऊं, तो हज़रते वाला ने दोबारा फ़रमाया कि तुम यहां आ जाओ, फिर मैं तुम्हें एक क़िस्सा सुनाऊंगा। हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि फिर मैं किसी तरह पहुंच गया और हज़रते वाला के पास जाकर बैठ गया, तो हज़रते वाला ने एक क़िस्सा सुनाया।

आलमगीर और दारा शिकोह के दर्मियान हुकूमत सौंपने का फ़ैसला

क़िस्सा यह सुनाया कि मुग़ल बादशाह आलमगीर रह्मतुल्लाहि अलैहि के वालिद के इन्तिक़ाल के बाद बाप की जानशीनी का मस्अला खड़ा हो गया और ये दो भाई थे। एक आलमगीर और दूसरे दारा शिकोह, आपस में खींचा तानी बहुत थी। आलमगीर अपने बाप के जानशीन और बादशाह बनना चाहते थे और उनके भाई दारा शिकोह भी तख़्त के तालिब थे, उनके ज़माने में एक बुज़ुर्ग थे। दोनों ने इरादा किया कि उन बुज़ुर्ग से जाकर अपने हक़ में दुआ कराई जाये। पहले दारा शिकोह उन बुज़ुर्ग के पास ज़ियारत और दुआ के लिये पहुंचे, उस वक़्त वह बुज़ुर्ग तख़्त पर बैठे हुये थे, उन बुज़ुर्ग ने दारा शिकोह से कहा कि यहां मेरे पास आ जाओ और तख़्त पर बैठ जाओ, दारा शिकोह ने कहा कि नहीं हज़रत, मेरी मजाल नहीं कि मैं आपके पास

तख़्त पर बैठ जाऊं, मैं तो यहां नीचे ही ठीक से हूं, उन बुज़ुर्ग ने फिर कहा कि मैं तुम्हें बुला रहा हूं यहां आ जाओ लेकिन वह नहीं माने और उनके पास न गये, और वहीं बैठ रहे। उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि अच्छा तुम्हारी मर्ज़ी, फिर उन बुज़ुर्ग ने उनको जो नसीहत फ़रमानी थी वह फ़रमा दी और वह वापस चले गये।

उनके जाने के थोड़ी देर बाद आलमगीर रह्मतुल्लाहि अलैहि आ गये। वह जब सामने नीचे बैठने लगे तो उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि तुम यहां आ जाओ वह फ़ौरन जल्दी से उठे और उन बुज़ुर्ग के पास जाकर तख़्त पर बैठ गये, फिर उन्हों ने उनको जो नसीहत फ़रमानी थी वह फ़रमा दी, जब आलमगीर रह्मतुल्लाहि अलैहि वापस चले गये तो उन बुज़ुर्ग ने अपनी मज्लिस के लोगों से फ़रमाया कि इन दोनों भाईयों ने तो ख़ुद ही अपना फ़ैसला कर लिया। दारा शिकोह को हमने तख़्त पेश किया, उसने इन्कार कर दिया, और आलमगीर को पेश किया तो उन्हों ने ले लिया, इस वास्ते दोनों का फ़ैसला हो गया। अब तख़्ते शाही आलमगीर को मिलेगा चुनांचे उनको ही मिल गया।

यह वाक़िआ हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने हज़रत वालिद साहिब को सुनाया। (मवाइज़े हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि)

बहाना बनाना ठीक नहीं

यह तो एक तारीख़ी वाक़िआ है। बहर हाल! अदब यह है कि जब बड़ा कह रहा है कि यह काम कर लो, तो उसमें ज़्यादा बहाने व हुज्जत करना ठीक बात नहीं, उस वक़्त ताज़ीम का तक़ाज़ा यह है कि जाकर बैठ जाये, इसलिये कि बड़े के हुक्म की तामील अदब पर मुक़द्दम है।

बुज़ुर्गों के जूते उठाना

कभी कभी यह होता है कि लोग किसी बुज़ुर्ग के जूते उठाना चाहते हैं, अब अगर वह बुज़ुर्ग ज़्यादा इस्रार के साथ यह कहें कि यह मुझे पसन्द नहीं, तो इस सूरत में भी ताज़ीम का तक़ाज़ा यह है कि

छोड़ दे और जूते न उठाये। कभी कभी लोग इसमें छीना झपटी शुरू कर देते हैं और लड़ने पर तैयार हो जाते हैं, यह ताज़ीम के ख़िलाफ़ है। इसलिये यह मकूला मशहूर है कि: "अल अम्रु फ़ौक़ल अदब" हुक्म की तामील अदब के तक़ाज़े पर मुक़द्दम है, बड़ा जो कहे उसको मान लो, हां! एक दो मर्तबा बुज़ुर्ग से यह कह देने में कोई हर्ज नहीं कि हज़रत! मुझे इस ख़िदमत का मौक़ा दीजिये, लेकिन जब बड़े ने हुक्म ही दे दिया तो उस सूरत में हुक्म की तामील ही वाजिब है। वही करना चाहिये, आम हालात का दस्तूर यही है कि जिस काम का हुक्म दिया जाये उसके मुताबिक़ अमल किया जाये, सहाबा–ए–किराम का मामूल भी यही है।

सहाबा–ए–किराम के दो वाक़िआत

लेकिन इस वाक़िए में जो आपने देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्ल–ल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि तुम अपनी जगह पर खड़े रहो लेकिन सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु पीछे हट गये और अदब के तक़ाज़े पर अमल किया और हुक्म नहीं माना तो इस क़िस्म के वाक़िआत सहाबा के पूरे ज़माने में सिर्फ़ दो मिलते हैं कि जिनमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हुक्म दिया, लेकिन सहाबा ने अदब के तक़ाज़े को हुक्म की तामील पर मुक़द्दम रखा, एक तो यही वाक़िआ है और एक वाक़िआ हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु का है।

ख़ुदा की क़सम! नहीं मिटाऊंगा

सुलह हुदैबिया के मौक़े पर जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मक्का के काफ़िरों के दर्मियान सुलह नामा लिखा जा रहा था तो हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु को आपने बुलाया कि तुम लिखो। उन्हों ने फ़रमाया कि ठीक है। जब मुआहदे की शरतें लिखनी शुरू कीं तो हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने सुलह नामे पर लिखा "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" तो जो शख़्स काफ़िरों की तरफ़ से सुलह

की शर्तें तय करने के लिये आया था उसने कहा कि नहीं हम तो "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" नहीं लिखने देंगे और चूंकि यह सुलह नामा दोनों की तरफ़ से होगा, इसलिये इसमें ऐसी बात होनी चाहिये जिस पर दोनों मुत्तफ़िक़ हों। हम "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" से अपने काम की शुरूआत नहीं करते, हम तो "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" लिखते हैं। ज़माना-ए-जाहिलिय्यत में भी लोग "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" के बजाये "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" यानी "ऐ अल्लाह! आपके नाम से हम शुरू करते हैं" लिखते थे। इसलिये उसने कहा कि इसको मिटा दें और "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" लिखें। तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया कि हमारे लिये इसमें क्या फ़र्क़ पड़ता है, "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" भी अल्लाह तआ़ला का नाम है, चलो वह मिटा दो और यह लिख दो, हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" लिख दिया। उसके बाद हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने यह लिखना शुरू किया कि "यह मुआ़हदा है जो मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और मक्के के सरदारों के दर्मियान तय पाया "काफ़िरों की तरफ़ से जो नुमाईन्दा था, उसने फिर एतिराज़ किया कि आपने यह लफ़्ज़ "मुहम्मद" के साथ "रसूलुल्लाह" कैसे लिख दिया? अगर हम आपको "रसूलुल्लाह" मान लें तो फिर झगड़ा ही कैसा, सारा झगड़ा तो इस बात पर है कि हम आपको रसूल तस्लीम नहीं करते, इसलिये यह मुआ़हदा जिस पर आपने "मुहम्मद" के साथ "रसूलुल्लाह" भी लिखा है हम इस पर दस्तख़त नहीं करेंगे। आप सिर्फ़ यह लिखें कि "यह मुआ़हदा जो मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह और क़ुरैश के सर्दारों के दर्मियान तय पाया" तो फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु से फ़रमाया "चलो कोई बात नहीं तुम तो मुझे अल्लाह का रसूल मानते हो इसलिये "मुहम्मद" के साथ "रसूलुल्लाह" का लफ़्ज़ मिटा दो और "मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह" लिख दो। हज़रत अ़ली ने पहली बात तो मान ली थी और "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" के

बजाये "बिस्मि-क अल्लाहुम्म" लिख दिया था, लेकिन जब हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह फ़र्माया कि "मुहम्मद रसूलुल्लाह" काट कर "मुहम्मद बिन अ़ब्दुल्लाह" लिख दो, तो हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़ौरन बेसाख़्ता फ़रमाया कि "ख़ुदा की क़सम मैं लफ़्ज़ "रसूलुल्लाह" को नहीं मिटाऊंगा"। हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने मिटाने से इन्कार कर दिया। आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने भी उनके जज़्बात को महसूस फ़रमाया और फ़र्माया अच्छा तुम न मिटाओ मुझे दो मैं अपने हाथ से मिटाऊंगा। चुनांचे वह अ़हद नामा आपने उनसे लेकर अपने मुबारक हाथ से रसूलुल्लाह का लफ़्ज़ मिटा दिया। (मुस्लिम शरीफ़)

अगर हुक्म की तामील इख़्तियार से बाहर हो जाये

यहां भी यही वाक़िआ़ हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु को जो हुक्म दिया था उन्हों ने उसकी तामील से इन्कार फ़रमाया और बज़ाहिर यों लगता है कि अदब को हुक्म पर मुक़द्दम कर लिया, हालांकि हुक्म अदब पर मुक़द्दम है, इसकी हक़ीक़त समझ लीजिये कि असल क़ायदा तो वही है कि बड़ा जो कह रहा है उसको माने और उसकी तामील करे, लेकिन कभी कभी इन्सान किसी हालत से इतना मग़लूब हो जाता है कि उसके लिये हुक्म की तामील करना इख़्तियार से बाहर हो जाता है। गोया कि उस के अन्दर इसकी इस्तिताअ़त और ताक़त ही नहीं होती। उस वक़्त अगर वह उस काम से पीछे हट जाये तो उस पर यह नहीं कहा जायेगा कि उसने ना फ़रमानी की, बल्कि उस पर यह हुक्म सादिक़ आयेगा कि:

"لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا إِلَّا وُسْعَهَا"

यानी अल्लाह तआ़ला किसी को उसकी ताक़त से ज़्यादा का मुकल्लफ़ नहीं करते। तो पहले वाक़िए में हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने तो ख़ुद ही फ़रमा दिया कि यह बात मेरे बस से

बाहर थी कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ में मौजूद हों और अबू क़हाफ़ा का बेटा इमामत करता रहे, और दूसरे वाक़िए में हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत में इतने मग़लूबुल हाल थे कि यह बात उनके बस से बाहर थी कि वह "मुहम्मद" के नाम से "रसूलुल्लाह" का लफ़्ज़ मिटा दें, इस वास्ते उन्हों ने मिटाने से इन्कार कर दिया।

यार जिस हाल में रखे वही हाल अच्छा है

लेकिन असल हुक्म वही है कि महबूब जो बात कहे उसको मानो, अपनी न चलाओ, वह जिस तरह कह दे उसी के मुताबिक़ अमल करो।

न ही हिजर अच्छा न ही विसाल अच्छा है
यार जिस हाल में रखे वही हाल अच्छा है
इश्क़ तस्लीम व रिज़ा के मा सिवा कुछ भी नहीं
वह वफ़ा से ख़ुश न हों तो फिर वफ़ा कुछ भी नहीं

अगर उनकी ख़ुशी इसमें है कि मैं ऐसा काम करूं जो बज़ाहिर अदब के ख़िलाफ़ लग रहा है तो फिर वही काम बेह्तर है जिसके अन्दर उनकी ख़ुशी और उनकी रिज़ा है।

ख़ुलासा

बहर हाल! इमाम नववी रह्मतुल्लाहि अलैहि जो यहां यह हदीस लाये हैं, वह इस बात की तरफ़ इशारा करने के लिये लाये हैं कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को लोगों के झगड़े निब्टाने की और उनके दर्मियान आपस में सुलह कराने की इतनी अहमियत थी कि नमाज़ का जो वक़्त मुक़र्रर था उससे आपको कुछ देर हो गयी, लेकिन आप उसके अन्दर मश्ग़ूल रहे। अल्लाह तआला हम सब को आपस के झगड़ों से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

तिजारत दीन भी दुनिया भी

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّااللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْماً كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

يَا اَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُو اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصَّادِقِيْنَ. (سورة التوبة:۱۱۹)

وقال رسول الله صلى الله عليه وسلم: التاجر الصدوق الامين مع النبيين والصديقين والشهداء. (ترمذی شریف)

وقال رسول الله صلى الله عليه وسلم: التجار يحشرون يوم القيامة فجارًا الامن اتقى وبر وصدق۔

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين۔

मुसलमान की ज़िन्दगी का बुनियादी पत्थर

बुज़ुर्गाने मुहतरम व बिरादराने अज़ीज़! पहले भी एक मर्तबा भाई अमानुल्लाह साहिब की दावत पर मेरी यहां हाज़िरी हो चुकी है, और यह उनकी और दोस्तों की मुहब्बत की बात है कि दोबारा एक ऐसा इज्तिमा उन्हों ने मुन्अकिद (आयोजित) फ़रमाया. मेरे ज़ेहन में यह था कि पिछली मर्तबा जिस तरह कुछ सवालात किये गये थे, जिनका मेरी नाकिस मालूमात की हद तक जो जवाब बन पड़ा, वह दिया था। ख़्याल यह था कि आज भी इसी किस्म की मज्लिस होगी; कोई तक़रीर या बयान पेशे नज़र नहीं था लेकिन भाई साहिब फ़रमा रहे हैं कि शुरू में दीन की और ईमान व यक़ीन की बातें हो जायें, तो दीन की बात बयान करने से तो कभी इन्कार नहीं हो सकता, इसलिये कि दीन एक

मुसलमान की ज़िन्दगी का बुनियादी पत्थर है, अल्लाह तआला हमें इसी पत्थर को मज़बूती से थामने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

ताजिरों का हश्र अंबिया के साथ

इस मजमे में जो दोस्त व अह्बाब मौजूद हैं उनमें से अक्सर का ताल्लुक़ चूंकि तिजारत से है इसलिये इस वक़्त हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दो हदीसें मेरे ज़ेहन में आयीं। और फिर क़ुरआने करीम की एक आयत मैंने तिलावत की, जिस से इन दोनों हदीसों के मज़्मून की वज़ाहत (ख़ुलासा) होती है। और ये दोनों हदीसें बज़ाहिर मायने में एक दूसरी की मुख़ालिफ़ मालूम होती हैं। लेकिन हक़ीक़त में मुख़ालिफ़ नहीं हैं। एक हदीस में नबी–ए–करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इरशाद है कि:

"التاجر الصدوق الامين مع النبيين والصديقين والشهداء"

जो ताजिर तिजारत के अन्दर सच्चाई और अमानत को इख़्तियार करे तो वह क़ियामत के दिन नबियों, सिद्दीक़ीन और शहीदों के साथ होगा। यह तिजारत जिसको हम और आप दुनिया का एक कम समझते हैं, और दिल में यह ख़्याल रहता है कि यह तिजारत हम अपने पेट के ख़ातिर कर रहे हैं। और इसका बज़ाहिर दीन से कोई ताल्लुक़ नहीं है, लेकिन नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इरशाद फ़रमा रहे हैं कि अगर ताजिर में दो बातें पाई जायें, एक यह कि वह सदूक़ हो, और अमीन हो, सदूक़ के लफ़्ज़ी मायने हैं "सच्चा" और अमीन के मायने हैं "अमानत दार" अगर ये दो सिफ़तें उसमें पाई जायें तो क़ियामत के दिन वह नबियों के साथ उठाया जायेगा। एक सच्चाई, और एक अमानत।

ताजिरों का हश्र गुनाहगारों के साथ

और दूसरी हदीस जो देखने में उसके मुख़ालिफ़ है वह यह है कि:

"التجار يحشرون فى يوم القيامة فجارًا الا من اتقى وبر وصدق"

"ताजिर लोग" क़ियामत के दिन फ़ुज्जार बना कर उठाये जायेंगे,

"फुज्जार" फ़ाजिर की जमा है, यानी फ़ासिक़ व फ़ाजिर और गुनाहगार, जो अल्लाह तआला की ना फ़रमानियों का जुर्म करने वाला है, सिवाये उस शख़्स के जो तक़्वा इख़्तियार करे, और नेकी इख़्तियार करे, और सच्चाई इख़्तियार करे।

ताजिरों की दो क़िस्में

ये दोनों हदीसें अन्जाम के लिहाज़ से बज़ाहिर मुतज़ाद (एक दूसरे की मुख़ालिफ़) नज़र आती हैं कि पहली हदीस में फ़रमाया कि नबियों के साथ होंगे, सिद्दीक़ीन और शहीदों के साथ होंगे। और दूसरी हदीस में फ़रमाया कि फुस्साक़ और फुज्जार के साथ होंगे, लेकिन अल्फ़ाज़ के तर्जुमे ही से आपने समझ लिया होगा कि हक़ीक़त में दोनों हदीसों में कोई तज़ाद (टकराव) नहीं है। बल्कि ताजिरों की दो क़िस्में बयान की गयी हैं, एक क़िस्म वह है जो अंबिया और सिद्दीक़ीन के साथ होगी, और एक क़िस्म वह है जो फ़ाजिरों और फ़ासिक़ों के साथ होगी।

और दोनों क़िस्मों में फ़र्क़ बयान करने के लिये जो शर्ते बयान फ़रमायीं वे ये हैं कि सच्चाई हो, अमानत हो, तक़्वा हो, नेकी हो तो फिर वह ताजिर पहली क़िस्म में दाख़िल है और उसको अंबिया के साथ उठाया जायेगा। और अगर ये शर्तें उसके अन्दर न हों, बल्कि सिर्फ़ पैसा हासिल करना मक़सूद हो। जिस तरह भी मुम्किन हो, चाहे दूसरे की जेब पर डाका डाल कर हो, धोखे से हो तो फिर वह ताजिर दूसरी क़िस्म में दाख़िल है कि उसको फ़ासिक़ों और फ़ाजिरों के साथ उठाया जायेगा।

तिजारत जन्नत का सबब या जहन्नम का सबब

अगर इन दोनों हदीसों को हम मिलाकर देखेंगे तो बात वाज़ेह हो जाती है कि जो तिजारत हम कर रहे हैं, अगर हम चाहें तो इस तिजारत को जन्नत तक पहुंचने का रास्ता बना लें, नबियों अलैहिमुस्सलाम के साथ हश्र होने का ज़रिया बना लें, और अगर चाहें तो इसी तिजारत को जहन्नम का रास्ता बना लें और फ़ासिक़ों फ़ाजिरों

के साथ हश्र होने का ज़रिया बना लें। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इस दूसरे अन्जाम से हमें महफ़ूज़ रखे, आमीन।

हर काम में दो ज़ाविये

और यह बात सिर्फ़ तिजारत के साथ ख़ास नहीं है, बल्कि दुनिया के जितने काम हैं चाहे वह नौकरी हो, चाहे वह तिजारत हो, चाहे वह खेती बाड़ी हो, या कोई और दुनिया का काम हो। इन सब में यही बात है कि अगर उसको इन्सान एक ज़ाविये से और एक तरीक़े से देखे तो वह दुनिया है, और अगर दूसरे ज़ाविये से देखे तो वही दीन भी है।

देखने का ढंग बदल दें

यह दीन हक़ीक़त में सिर्फ़ ज़ाविया-ए-निगाह (नुक़्ता-ए-नज़र) की तब्दीली का नाम है। अगर आप वही काम दूसरे ज़ाविये से करें, दूसरी नियत से करें, दूसरे इरादे से करें, दूसरे नुक़्ता-ए-नज़र से करें। तो वही चीज़ जो बज़ाहिर ठेट दुनियावी नज़र आ रही थी, दीन बन जाती है।

खाना खाना इबादत है

अगर इन्सान खाना खा रहा है, तो बज़ाहिर इन्सान अपनी भूख दूर करने के लिये खना खा रहा है। लेकिन अगर खाना खाते वक़्त यह नियत हो कि मेरे नफ़्स का मुझ पर हक़ है, मेरी ज़ात का, मेरे वजूद का मुझ पर हक़ है, और उस हक़ की अदायगी के लिये मैं यह खाना खा रहा हूं और इसलिये खाना खा रहा हूं कि अल्लाह तबारक व तआला की एक नेमत है और इस नेमत का हक़ यह है कि मैं इसकी तरफ़ शौक़ और तवज्जोह का इज़्हार करूं और अल्लाह का शुक्र अदा करके इसको इस्तेमाल करूं। तो वही खाना जो बज़ाहिर लज़्ज़त हासिल करने का ज़रिया था और बज़ाहिर भूख दूर करने का ज़रिया था, पूरा खाना दीन और इबादत बन जायेगा।

हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम और सोने की तितलियां

लोग यह समझते हैं कि दीन यह है कि दुनिया छोड़ कर किसी

कोने में बैठ जाओ और अल्लाह अल्लाह करो, बस यही दीन है। हज़रत अय्यूब अ़लैहिस्सलाम का नाम आपने सुना होगा, कौन मुसलमान है जो उनके नाम से वाक़िफ़ नहीं है। बड़े ज़ब्रदस्त पैग़म्बर और बड़ी आज़माइश से गुज़रे हैं। उनका एक वाक़िआ सही बुख़ारी में मर्वी है कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक मर्तबा वह ग़ुस्ल कर रहे थे और ग़ुस्ल के दौरान आसमान से उन पर सोने की तितलियों की बारिश शुरू हो गयी, तो हज़रत अय्यूब अ़लैहिस्सलाम ग़ुस्ल छोड़ छाड़ कर उन तितलियों को पकड़ने और जमा करने में लग गये। उस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने हज़रत अय्यूब से पूछा कि ऐ अय्यूब! क्या हमने तुमको पहले ही बेशुमार नेमतें नहीं दे रखी हैं? तुम्हारी ज़रूरतों का सारा इन्तिज़ाम कर रखा है, सारी कफ़ालत कर रखी है। फिर भी तुम्हें हिर्स है और तितलियों को जमा करने की तरफ़ भाग रहे हो? तो हज़रत अय्यूब अ़लैहिस्सलाम ने क्या अ़जीब जवाब दिया कि: ऐ परवरदिगार

" لا غنی بی عن برکتك "

जब आप मेरे ऊपर कोई नेमत नाज़िल फ़रमायें तो यह बात अदब के ख़िलाफ़ है कि मैं उससे बेनियाज़ी का इज़्हार करूं, जब आप ख़ुद अपने फ़ज़्ल से यह नेमत अ़ता फ़रमा रहे हैं तो अब अगर मैं बैठा रहूं, और यह कहूं कि मुझे यह सोना चांदी नहीं चाहिये, मैं तो इस पर ठोकर मारता हूं तो यह बे अदबी की बात है। जब आप दे रहे हैं तो मेरा यह फ़र्ज़ है कि मैं इश्तियाक़ (लगन और शौक़) के साथ उसको लूं, उसकी क़दर पहचानूं और उसका शुक्रिया अदा करूं। इसलिये मैं आगे बढ़ कर इनको जमा कर रहा हूं। यह एक पैग़म्बर की आज़माइश थी वर्ना अगर कोई आ़म क़िस्म का ख़ुश्क दीनदार होता तो वह यह कहता कि मुझे इसकी ज़रूरत नहीं, मैं तो इस दुनिया को ठोकर मारता हूं। लेकिन वह चूंकि हक़ीक़त से वाक़िफ़ थे, और जानते थे कि यही चीज़ अगर इस नुक़्ता-ए-नज़र से हासिल की जाये कि मेरे परवर्दिगार की दी हुयी है, और उसकी नेमत है। मैं इसकी क़दर

पहचानूं, इसका शुक्र अदा करूं, तो फिर यह दुनिया नहीं है, बल्कि यह दीन है। (बुख़ारी शरीफ़)

निगाह नेमत देने वाले की तरफ़ हो

हम लोग पांच भाई थे, और सब रोज़गार पर अपने अपने काम में लगे हुये थे। कभी कभी ईद वग़ैरह के मौक़े पर जब हम इकट्ठे होते तो हज़रत वालिद साहिब हमें कभी कभी ईदी दिया करते थे, वह कभी 20 रुपये, कभी 25 रुपये और कभी 30 रुपये होती। मुझे याद है कि जब वालिद साहिब 25 रुपये देते तो हम कहते कि नहीं, हम 30 रुपये लेंगे, जब वह 30 रुपये देते तो हम कहते कि नहीं हम 35 रुपये लेंगे, और तक़रीबन यह सूरत हर घर में होती है कि औलाद चाहे जवान हो गयी हो। रोज़गार पर लगी हुई हो, कमा रही हो लेकिन अगर बाप दे रहा है तो उस से मचल मचल कर मांगते हैं कि और दे दें, और वह बाप की तरफ़ से जो 30 रुपये दिये गये, उसकी कोई हैसियत नहीं थी, इसलिये कि हम में से हर भाई हज़ारों रुपये कमाने वाला था। लेकिन फिर भी उस तीस रुपये का शौक़, रग़बत, इश्तियाक़ और उसको हासिल करने के लिये बार बार मचलना यह सब क्यों था? बात असल में यह थी कि निगाह उस रुपये पर नहीं थी कि वह 30 रुपये मिल रहे हैं। बल्कि निगाह उस देने वाले हाथ की तरफ़ थी। कि वे 30 रुपये किस देने वाले हाथ से मिल रहे हैं। यह एक बाप की तरफ़ से मिल रहे हैं। और एक मुहब्बत का इज़्हार है, यह एक शफ़्क़त का इज़्हार है, यह एक नेमत का इज़्हार है। इसलिये अदब यह है कि उसको इश्तियाक़ के साथ लिया जाये, उसकी क़दर पहचानी जाये, चुनांचे उसको ख़र्च नहीं करते थे बल्कि उठा कर लिफ़ाफ़े में बन्द करके रख देते थे कि ये मेरे बाप के दिये हुये हैं। अगर वही तीस रुपये दूसरे आदमी की तरफ़ से मिलें, और इन्सान उसमें लालच और रग़बत का इज़्हार करे और उससे कहे कि मुझे 30 रुपये के बजाये 35 रुपये दो, तो यह शराफ़त और मुरव्वत के ख़िलाफ़ है।

इसका नाम तक़्वा है

दीन हक़ीक़त में नुक़्ता–ए–निगाह की तब्दीली का नाम है। और यही नुक़्ता–ए–निगाह जब बदल जाता है तो कुरआन की इस्तिलाह में इसी का नाम तक़्वा है, यानी दुनिया के अन्दर जो कुछ कर रहा हूं, चाहे खा रहा हूं चाहे सो रहा हूं चाहे कमा रहा हूं, अल्लाह के लिये कर रहा हूं, अल्लाह के हुक्मों के मुताबिक़ कर रहा हूं। अल्लाह तआला की मर्ज़ी के पेशे नज़र कर रहा हूं, यही चीज़ अगर हासिल हो जाये तो इसको तक़्वा कहते हैं। यह तक़्वा अगर पैदा हो जाये, और इस तक़्वे के साथ तिजारत करें, तो यह तिजारत दुनिया नहीं, बल्कि दीन है। और यह जन्नत तक पहुंचाने वाली है और नबियों के साथ हश्र कराने वाली है।

सोहबत से तक़्वा हासिल होता है

आम तौर पर दिल में एक सवाल पैदा होता है कि तक़्वा किस तरह हासिल हो? यह नुक़्ता–ए–निगाह किस तरह बदला जाये? तो इसके जवाब के लिये मैंने शुरू में यह आयत तिलावत की थी कि:

"يَا أَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصَّادِقِيْنَ"

ऐ ईमान वालो! तक़्वा इख़्तियार करो और कुरआने करीम का उसूल यह है कि जब वह किसी काम के करने का हुक्म देता है तो उस पर अ़मल करने का रास्ता भी बताता है, और ऐसा रास्ता बताता है जो हमारे और आपके लिये आसान होता है, और अल्लाह तआला की रह्मत है कि वह सिर्फ़ किसी काम का हुक्म नहीं देते बल्कि साथ में हमारी ज़रूरियात, हमारी हाजतें और हमारी कमज़ोरियों का एह्सास फ़रमा कर हमारे लिये आसान रास्ता भी बताते हैं। तो तक़्वा हासिल करने का आसान रास्ता बता दिया कि "कूनू मअ़स्सादिक़ी–न" सच्चे लोगों की सोहबत इख़्तियार करो, यह सोहबत जब तुम्हें हासिल होगी तो इसका बिल आख़िर नतीजा यह होगा कि तुम्हारे अन्दर ख़ुद तक़्वा पैदा हो जायेगा। वैसे किताब में तक़्वे की शर्तें पढ़ कर तक़्वा इख़्तियार

करने की कोशिश करोगे तो यह रास्ता बहुत मुश्किल नज़र आयेगा, लेकिन कुरआन ने इसके हासिल करने का आसान तरीक़ा यह बतला दिया कि जिस शख़्स को अल्लाह तआ़ला ने तक़्वे की दौलत अ़ता फ़रमाई हो, दूसरे लफ़्ज़ों में जिसको सच्चाई की दौलत हासिल हो, उसकी सोहबत इख़्तियार कर लो, क्योंकि सोहबत का लाज़मी नतीजा यह होता है कि जिस शख़्स की सोहबत इख़्तियार की जाती है उसका रंग रफ़्ता रफ़्ता इन्सान पर चढ़ जाता है।

हिदायत के लिये सिर्फ़ किताब काफ़ी नहीं होती

और दीन को हासिल करने और दीन को समझने का भी यही रास्ता है, नबी-ए-करीम सरवरे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इसी लिये तशरीफ़ लाये। वर्ना सीधी बात तो यह थी कि सिर्फ़ कुरआने करीम नाज़िल कर दिया जाता, और मुश्रिकीने मक्का का मुतालबा भी यही था कि हमारे ऊपर कुरआने करीम क्यों नाज़िल नहीं होता? अल्लाह तआ़ला के लिये कोई मुश्किल नहीं था कि वह किताब इस तरह नाज़िल कर देते कि जब लोग सुबह को जागते तो हर शख़्स बहुत अच्छा और ख़ूबसूरत बाइन्डिंग शुदा कुरआन करीम अपने सिरहाने रखा हुआ मौजूद पाता, और आसमान से आवाज़ आ जाती कि यह किताब तुम्हारे लिये भेज दी गयी है, इस पर अ़मल करो, तो यह काम अल्लाह तआ़ला के लिये कोई मुश्किल नहीं था, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने कोई किताब रसूल के बग़ैर नहीं भेजी, हर किताब के साथ एक रसूल भेजा है, रसूल तो किताब के बग़ैर आये हैं लेकिन किताब बग़ैर रसूल के नहीं आई, क्यों? इसलिये कि इन्सान की हिदायत और रहनुमाई के लिये और उसको किसी ख़ास रंग पर ढालने के लिये सिर्फ़ किताब काफ़ी नहीं होती।

सिर्फ़ किताबें पढ़ कर डाक्टर बनने का नतीजा

अगर कोई शख़्स चाहे कि मैं मैडिकल साइंस की किताबें पढ़ कर डाक्टर बन जाऊं, और फिर उसने वह किताब पढ़ ली, और उसको

समझ भी लिया, और उसके बाद उसने डाक्टरी और इलाज शुरू कर दिया तो सिवाये क़ब्रिस्तान आबाद करने के वह कोई ख़िदमत अन्जाम नहीं दे सकता। जब तक वह किसी डाक्टर की सोहबत इख़्तियार न करे, और उसके साथ कुछ मुद्दत तक रह कर काम न करे, उस वक़्त तक वह डाक्टर नहीं बन सकता, और मैं तो आगे बढ़ कर कहता हूं कि बाज़ार में खाना पकाने की किताबें मौजूद हैं, जिनमें खाना पकाने की तरकीबें लिखी हुयी हैं, पुलाव इस तरह बनता है, ब्रियानी इस तरह बनती है, क़ोरमा ऐसे बनता है, अब अगर एक शख़्स सिर्फ़ वे किताबें अपने सामने रख कर ब्रियानी बनाना चाहेगा तो ख़ुदा जाने वह क्या मलग़ूबा तैयार करेगा। जब तक कि किसी माहिर के साथ रह कर उसकी ट्रेनिंग हासिल न की हो और उसको समझा न हो, उस वक़्त तक वह ब्रियानी तैयार नहीं कर सकता।

मुत्तक़ी की सोहबत इख़्तियार करो

यही मामला दीन का है कि सिर्फ़ किताब किसी इन्सान को दीनी रंग में ढालने के लिये काफ़ी नहीं होती जब तक कि कोई मुअ़ल्लिम और मुरब्बी उसके साथ न हो। इस वास्ते अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम को भेजा गया और अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम के बाद सहाबा-ए-किराम को यह मर्तबा हासिल हुआ। सहाबा के क्या मायने हैं? सहाबा वे लोग हैं जिन्हों ने नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत उठाई। उन्हों ने जो कुछ हासिल किया वह नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत से हासिल किया, फिर इसी तरह ताबिअ़ीन ने सहाबा की सोहबत से और तब्अ़े ताबिअ़ीन ने ताबिअ़ीन की सोहबत से हासिल किया, तो जो कुछ दीन हम तक पहुंचा है वह सोहबत के ज़रिये पहुंचा है, इसलिये अल्लाह तआ़ला ने भी तक़्वा हासिल करने का रास्ता यह बता दिया कि अगर तक़्वा हासिल करना चाहते हो तो इसका आसान रास्ता यह है कि किसी मुत्तक़ी की सोहबत इख़्तियार करो और उस सोहबत के नतीजे में अल्लाह तआ़ला तुम्हारे

अन्दर भी तक़्वा पैदा फ़रमा देंगे। अल्लाह तआ़ला हमें इसकी हकीकत समझ कर इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

निकाह के ख़ुतबे की अहमियत

الحمدللّٰہ وکفیٰ وسلام علیٰ عبادہ الذین اصطفیٰ،اما بعد۔

अभी इन्शा अल्लाह पुर मुसर्रत तक़रीब की शुरूआत होने वाली है, जिसमें तक़रीब के दुल्हा दुल्हन इन्शा अल्लाह निकाहे मस्नून के रिश्ते में बंधने वाले हैं, अल्लाह तबारक व तआला उनके लिये इस रिश्ते को मुबारक फ़रमाये, आमीन।

शादी की तक़रीबात

मुझ से फ़रमाइश की गयी है कि निकाह पढ़ाने से पहले कुछ गुज़ारिशात आप हज़रात की ख़िदमत में पेश करूं, अगरचे शादी विवाह की तक़रीबात आज कल के माहौल के लिहाज़ से किसी वाज़ व नसीहत की मज्लिस के लिये मौज़ूं नहीं, लेकिन तक़रीब को मुन्अक़िद (आयोजित) करने वाले हज़रात की फ़रमाइश है कि अक्सर हाज़िरीन भी इस मौक़े पर कोई दीन की बात सुनना चाहते हैं। इसलिये हुक्म की ख़ातिर चन्द कलिमात आप हज़रात की ख़िदमत में अर्ज़ करता हूं।

निकाह के ख़ुतबे की तीन आयतें

अभी इन्शा अल्लाह निकाह के ख़ुतबे का आग़ाज़ होगा, और यह ख़ुतबा नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत है, निकाह भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत है, आपने इरशाद फ़रमाया कि:

"النکاح من سنتی" (ابن ماجہ شریف)

"निकाह मेरी सुन्नत है"

शरअ़ी एतिबार से तो निकाह दो गवाहें की मौजूदगी में ईजाब व क़ुबूल से मुन्अक़िद हो जाता है, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसके लिये जो मस्नून तरीक़ा मुक़र्रर फ़रमाया, वह यह है कि ईजाब व क़ुबूल से पहले एक ख़ुतबा दिया जाये, उस ख़ुतबे में अल्लाह तआला की तारीफ़ होती है, हुज़ूर नबी-ए-करीम

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दुरूद भेजा जाता है, और आम तौर पर क़ुरआने करीम की तीन आयतें तल्क़ीन फ़रमायीं, कि निकाह के ख़ुतबे में इन आयतों की तिलावत की जाये, सब से पहले सूरः निसा की पहली आयत तिलावत की जाती है:

"يَاأَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَآءً، وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ، إِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا" (سورة نسآء:١)

इस आयत का तर्जुमा यह है कि:

ऐ लोगो! अपने परवर्दिगार से डरो, और तक़्वा इख़्तियार करो, जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया, (यानी हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम से) और उसी जान से उसकी बीवी को पैदा किया (यानी हज़रत हव्वा अ़लैहस्सलाम को) और उन दोनों (आदम और हव्वा) के ज़रिये दुनिया में बहुत से मर्द और औरत फैला दिये (कि सारी दुनिया की आबादी उन्हीं दो पाक मियां बीवी की औलाद हैं) और उससे डरो जिसके नाम का वास्ता देकर तुम एक दूसरे से (अपने हुक़ूक़ का) मुतालबा करते हो (जब किसी को दूसरे से अपना हक़ मांगना होता है तो वह अक्सर अल्लाह का वास्ता देकर मांगता है कि ख़ुदा के वास्ते मेरा यह हक़ दे दो) और रिश्तेदारियों (के हुक़ूक़) से भी डरो (यानी इसका ख़्याल रखो कि रिश्तेदारियों के हुक़ूक़ पामाल न होने पायें) और अल्लाह तआ़ला तुम्हारे तमाम आमाल व अफ़आ़ल पर निगरां हैं (वह देख रहा है कि तुम क्या कह रहे हो, और क्या कर रहे हो)

यह पहली आयत है जो निकाह के ख़ुतबे में तिलावत की जाती है, दूसरी आयत सूरः आले इमरान की है, वह यह है:

"يَآأَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقَاتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ"

(سورة آل عمران: ١٠٢)

इसका तर्जुमा यह है कि:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो (जैसा कि उससे) डरने का हक़

है, और तुम न मरो (मौत न आये) मगर इस हालत में कि तुम अल्लाह के फ़रमांबर्दार हो।

तीसरी आयत जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने निकाह के ख़ुतबे में तालीम फ़रमाई, वह यह है कि:

"يَاأَيُّهَاالَّذِيْنَ اٰمَنُوااتَّقُوااللّٰهَ وَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا. يُصْلِحْ لَكُمْ أَعْمَالَكُمْ وَيَغْفِرْلَكُمْ ذُنُوْبَكُمْ وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهُ فَقَدْ فَازَ فَوْزًا عَظِيْمًا"

(سورة الاحزاب:٧-٧١)

इसका तर्जुमा यह है कि:

ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो, और (सीधी) सच्ची बात कहो (अगर अल्लाह से डरोगे, और सीधी सच्ची बात कहने की आ़दत डालोगे) तो अल्लाह तुम्हारे तमाम आमाल को क़ुबूल फ़रमा लेंगे, और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ फ़रमा देंगे, जो शख़्स अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इताअ़त करेगा तो वह बड़ी कामयाबी हासिल करेगा।

तीनों आयतों में मुश्तरक चीज़

ये तीन आयतें हैं जो हुज़ूर नबी-ए-करीम सरवरे दो आ़लम, मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने निकाह के ख़ुतबे के मौक़े पर पढ़ने की तालीम दी, इन तीनों में जो चीज़ मुश्तरक नज़र आती है और जिस का हुक्म तीनों आयतों में मौजूद है, वह है "तक़्वा इख़्तियार करना" तीनों आयतों का आग़ाज़ इस हुक्म से हो रहा है कि ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो, और तक़्वा इख़्तियार करो, यह निकाह में बंधने के मौक़े पर जो तक़्वे का हुक्म दिया जा रहा है। और ख़ास तौर पर तक़्वा इख़्तियार करने की ताकीद की जा रही है, और इसको बार बार दोहराया जा रहा है। इसकी क्या वजह है? यों तो इन्सान की दुनिया और आख़िरत दोनों को संवारने के लिये तक़्वा एक लाज़मी शर्त है, जिसके बग़ैर इन्सान दुनिया और आख़िरत में ख़ैर व कामयाबी हासिल नहीं कर सकता।

तक़्वे के बग़ैर हुक़ूक़ अदा नहीं हो सकते

लेकिन ख़ास तौर से निकाह का रिश्ता एक ऐसी चीज़ है कि इसके हुक़ूक़ और इसकी बर्कतें उस वक़्त तक हासिल नहीं की जा सकतीं जब तक दोनों फ़रीक़ों के दिल में अल्लाह का ख़ौफ़ न हो, अल्लाह के सामने जवाब दही का एहसास न हो, और इस बात का ख़्याल न हो कि एक दिन हमें अल्लाह जल्ल शानुहू के हुज़ूर हाज़िर होकर अपने एक एक क़ौल व फ़ेल का जवाब देना है, उस वक़्त तक सही मायने में एक शख़्स दूसरे शख़्स का हक़ अदा नहीं कर सकता, न शौहर बीवी का हक़ अदा कर सकता, न बीवी शौहर का हक़ अदा कर सकती है, न एक रिश्तेदार दूसरे रिश्तेदार का हक़ अदा कर सकता है, न दोस्त दोस्त का हक़ अदा कर सकता है। यह हक़ अदा करने का वाहिद रास्ता यह है कि दिलों में अल्लाह का ख़ौफ़ हो, और दिलों में अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर हाज़िर होकर जवाब दही का एहसास हो, वर्ना सिर्फ़ क़ानून के ज़रिये सिर्फ़ महकमों और अ़दालतों के ज़रिये हुक़ूक़ नहीं दिलाये जा सकते। जब तक कि हक़ देने वाले के दिल में इस बात का एहसास न हो कि अगर मैंने दूसरे का हक़ मार लिया तो शायद मैं अ़दालत और क़ानून से तो बच जाऊं, लेकिन अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर हाज़िर होकर मैं जवाब देने की पोज़ीशन में नहीं हूंगा, और अल्लाह तबारक व तआ़ला की तरफ़ से जो अ़ज़ाब होगा, उससे बचने की मुझे आज ही तैयारी करनी है, और उससे बचाव का सामान करना है। जब तक यह एहसास दिलों में पैदा न हो, एक दूसरे के हुक़ूक़ की अदायगी का सवाल पैदा नहीं होता।

तीन आयतों की तिलावत सुन्नत है

इसलिये ख़ास तौर पर इस निकाह की तक़रीब के मौक़े पर जो ख़ुतबा नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मश्रूअ़ फ़रमाया उसमें इन तीन आयतों को मुक़र्रर फ़रमा कर तक़्वे की ताकीद फ़रमाई, यों तो हर इन्सान जब मुसलमान होता है तो अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर

तक़्वे का अ़हद करता है।

नयी ज़िन्दगी की शुरूआत

लेकिन यह मौक़ा ज़िन्दगी का एक दोराहा है, जिसमें एक नयी ज़िन्दगी की शुरूआत हो रही है, ज़िन्दगी में एक इन्क़िलाब आ रहा है, इस वक़्त में तक़्वे के इस अ़हद को दोबारा ताज़ा करें, और इसकी तज्दीद करें। तो इन तीन आयतों को तिलावत करने का हक़ीक़त में यह मक़्सूद है। अल्लाह तआ़ला इस हक़ीक़त को हमें सही तौर पर समझने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, और इस मौक़े पर तक़्वा हासिल करने की फ़िक्र और उसकी कोशिश को ताज़ा करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخردعوانا ان الحمد لله رب العلمين